

# आचार्य श्री प्रवचन

**(04.03.2019 से 31.05.2019 तक)**

**भाग–13**

*गुरुवर की वाणी,*
*बने सबकी कल्याणी*

अन्य भाग हेतु : aagamdata.blogspot.in

**संकलन :**
**मुनिश्री 108 संधानसागरजी महाराज**

बीना बारहा पंचकल्याणक [4 से 10 मार्च]

[देवजारोहण मध्याह्न में]

4-3-19 त्याग एवं ग्रहण कितना? प्रातः

बचपन में जब तक जठराग्नि तेज नहीं होती तब तक बच्चों को घी आदि नहीं दिये जाते। सही है ये बात? कितने प्रतिशत? Hundred % मत कहो शत-प्रतिशत कहो। भारत में रहो और भारत का खाओ तो विदेशी भाषा मत बोला करो। अच्छा बताओ देशी चीज अच्छी है या विदेशी? (देशी) देशी घी अच्छा है या विदेशी? [देशी घी] विदेशी तो डालडा है। फिर भी बच्चों को देशी घी भी नहीं दिया जाता।

दूध में भी पानी मिलाकर दिया जाता है ताकि लीवर [यकृत] पर प्रभाव न पड़े। ऐसा ही लेना चाहिए। अब मैं यह कहना चाहता हूँ घी है, शुद्ध बोलते हैं फिर भी विकृति है। जिनकी जठराग्नि मंद पड़ जाती है उनको खाने के लिए मना किया जाता है। योगी जब समाधी लेता है तब भी छुड़वा देते हैं। पहले यदि मिल गया तो ले लिया - रसाणुवेक्खो की भावना से लिया। ये भी ध्यान रखो "जो लाभकारी होता है वही हानिकारक भी होता है।"

जो शक्तिवर्धक है वह आपकी शक्ति को भी ले सकता है। फिर महाराज क्या खायें? दूध-दही-घी भी विकृति है। फल-फूल भी विकृति है। हाँ। आपके लिए थोड़ी कहा जा रहा है। योगी जो संतोषवना ले ले, आप तो भोगी हो। फिर बचा ही क्या? इनको विकृति क्यों कहा?

क्यों कि ये सब योग सिद्धि में बाधक हैं।

शुद्ध जल लो अथवा दही से नवनीत (घी) निकालने के बाद जो बचता है तक्र उसे निर्विकृति कहा। तक्र जानते हो? छाछ - मठ्ठा बोलते हैं। पुराणों में आया "शक्रोऽपि तक्राय रोचते" अर्थात सौधर्म इन्द्र को भी छाछ अच्छा लगता है। स्वर्ग में उसे कहीं मिला ही नहीं, क्यों कि वह निर्विकृति है। स्वादिष्ट भोजन करने वालो! आप सब पंचकल्याणक में आये हो, जो ध्वजारोहण से आज प्रारम्भ हो रहा है आपको भी आहार-विज्ञान का ज्ञान होना चाहिए।

योग सिद्धि के लिए तक्र लेने को कहा। साधु के मन - वचन - काय की शुद्धि होगी तभी सिद्धि प्राप्त होती है। यदि गरिष्ट आहार ले लिया - शोधक तो देना ही चाहता है फिर देखो क्या होगा? "ले तप बढ़ावन, खून बढ़ावन नहीं।" ऐसा भी नहीं कि एक ही दिन में शरीर को मिटा दें। इसको देना भी जरूरी है परन्तु उतना ही तेल डाले ज्यादा भी नहीं जितने में मशीन / यंत्र चालु हो जाये। मात्रा एवं क्वालिटी दोनों का ध्यान रखें। ऐसा नहीं कि पेट्रोल की जगह वासलेट डाल दें।

डालडा तो लेना ही नहीं, शुद्ध घी को भी संभालकर लेना चाहिए। जब आप उतार की ओर (बढ़ाव्यु) आना प्रारम्भ हो गये तो अब निर्विकृति की ओर आ जाइये। "वितरागता को प्राप्त करना चाहते हो तो

राग से अपने को ऊपर उठाओ।

इसीलिए बच्चों के लिए, योगीराज के लिये अथवा जो बीमार है उसके लिए भले ही शुद्ध घी है किन्तु विकृति होने से मना किया गया। इन विकारों से बचकर चलने वाला ही धर्म की साधना करता है। जो विकारों की वृद्धि करें उसके साथ कभी भी समझौता नहीं करना चाहिए। दूसरा करे तो करे पर मैं अपना समर्थन नहीं कर सकता, मैं हस्ताक्षर नहीं करूंगा।

इन विकारों से बचने के लिए समय-समय पर आचार्यों ने हमें उपदिष्ट किया। रत्न-करण्ड श्रावकाचार अथवा मूलाचार जैसे चर्यापरक ग्रन्थों में इन विकारों के बारे में स्पष्ट लिखा है। आचार (चरणानुयोग) के ग्रन्थ हमारी चर्या को शुद्ध बनाते हैं। फिर निर्विकृति को बताने की जरूरत नहीं। वह भी समझ जाता है। उसे पता लग जाता है कि ये सामायिक इतने अच्छे से और मैं चूक क्यों जाता हूँ? जो पैंदी के बिना लोटा होता है वह लुढ़केगा ही। ऐसा लोटा क्या काम का?

ऐसा ही शरीर के साथ है जो इसे साध लेता है वह आसानी से गुप्ति में चला जाता है, जो नहीं साध पाता वह निर्जीव की भांति कब लुढ़क गया, पता तक नहीं चल पाता। ध्यान के लिए, तप-चिंतन के लिए निर्विकृति का होना परम आवश्यक है।

तभी शरीर व्यवस्थित रहेगा।

"मोक्षमार्ग की सामग्री बढ़ाने हेतु शरीर को भी व्यवस्थित रखना चाहिए।" व्यवस्थित का मतलब हृष्ट-पुष्ट से नहीं, तप कर सकें ऐसा हो। ज्यादा तप भी नहीं.. एक बार तो अष्टाह्निका कर ली फिर दो बार भोजन करने लग गये। इसलिये उसी रूप करीयो। जब यह निर्विकृति भीतर आयेगा तो भीतर में जो वात - पित्त - कफ के दोष (त्रिदोष) होंगे उन्हे दूर कर चित्त की विशुद्धि में सहायक होगा।

इसीलिए हमारे संतो। आचार्यों ने एक बार भोजन के लिए छूट रखी है। जो जिव्हा लोलुपी होता है वह दोबारा भी ले लेता है। आप लेते हो कि नहीं? दो बार लें रहे हैं उसमें पौष्टिकता भी होनी चाहिए, उतना श्रम भी होना चाहिए। फिर भोजन के अनुसार पानी भी पीना चाहिए। सब भोजन किया या नहीं - 2, ये तो पुछते है पर पानी पीया कि नहीं कोई नहीं पुछता।

भोजन - पानी दोनो व्यवस्थित होने चाहिए, आचार्यों ने कहा। पहले निमन्त्रण देते थे तो यह कहते थे लोटा साथ में लाना है। अर्थात भोजन मिलेगा पानी अपने साथ लाना। पहले ये रिवाज था, आजकल यह प्रथा मिट गयी। हमने भोजन हेतु निमन्त्रण दिया है। यहाँ भी प्रबन्धको के द्वारा जो व्यवस्था है उसमें सभी

सभी व्यवस्थित बनें रहेंगे।

आप व्यवस्था बनाये रखेंगे, नहीं तो हम सीधे ही चले जायेंगे। कमेंटी वालों से कहना है कि वे हमारे संकेत को समझ लें। सब कार्य बोलने से ही होते हों, ऐसा नहीं हैं। संकेत से ज्यादा काम होता है। चुप बैठो - चुप बैठो कुछ नहीं हुआ और यूं (भृकुटि पर अंगुली) ईशारा (संकेत) कर दिया। एक सेकेण्ड में ही सब चुप बैठ गये। यूं भी नहीं देख भी लिया तो... क्या हो गया? अलग ही गुणवत्ता पूर्वक कार्य है।

ऐसे नहीं कहीं भी बैठ गये। ऐसा कोई लोग भी उससे प्रेरणा ले सके। इस प्रकार निर्विकृति-विकृति की बात आप सबके सामने रखी। जो मोक्षमार्ग में अच्छी प्रकृति के रूप में माने जाती है उसका भी त्याग करने को कहा गया है। त्याग एवं ग्रहण जितना आवश्यक है उतना ही पर्याप्त होता है। बाद में तो सब छोड़ा ही जाता है।

पहले तक्र लेते हैं उसे भी घटाते-घटाते शुद्ध जल मात्र पर ले आते हैं फिर उसे भी बंद करके पंच नमस्कार मंत्र के सहारे आगे बढ़ते जाते हैं। "तद् गुण लब्धये अहं वन्दे" उन गुणों की प्राप्ति तभी संभव है। आचार्यों ने ऐसा ही उपदेश दिया। आप लोगों के लिए भी यही कहा है। हम सभी उसी निर्विकृति की ओर बढ़ें।

अहिंसा परमो धर्म की जय। बुँ

गर्भकल्याणक (पूर्वार्ध)

5-3-19 "भरके मन के - कभी न भरें" प्रातः

लोग दूर-दूर से वंदना के लिए आ रहे हैं और उनकी प्यास बुझाना है। प्रश्न ये है कि कौन दूसरा बुझायेगा या स्वयं बुझायेगा? तो वह नम्बर लेता है, प्रयास करने बाद में नम्बर आया अब वहाँ से हटता ही नहीं। वो सुनता भी नहीं। फिर बाद में कहता है थोड़ा ठहरो तो अभी तो मन भरा ही नहीं प्रजन में भी घुमाकर बोल ही देते हैं - मन तृप्त नहीं कर पाया हूँ। फिर भी मन की छुट्टी नहीं करते।

आप सबको दर्शन से संतुष्ट तो होना ही चाहिए। दूसरे की भी चिंता करनी चाहिए, नहीं तो बहुत स्वार्थी माने जाओगे। दूसरे को नम्बर नहीं तो आपकी कटौती अपने आप ही प्रारम्भ हो जायेगी। भगवान कभी कटौती नहीं करते पर मन के कारण यह स्थिति बन जाती है। अच्छा ये बताओ मन कभी भरता है? फिर क्यों भरने में लगे हो। दुनिया का प्रत्येक व्यक्ति इसको भरने में लगा है, पर ये कभी नहीं भरेगा।

"ये ऐसे भरके है कि इसे यदि पत्थर आदि से भी भरने लगो तो भी भरने वाला नहीं है। इसे यदि भर सकते हो तो मात्र दृढ़वती आत्मा से ही भर सकते हो। मन को तृप्त करना है तभी इसका अन्त हो सकता है। आप इसके लिए प्रभु के स्वरूप को देखें। जिस समय प्रभु का दर्शन करता है, तुरन्त आंखों को बंद कर लेता है। शास्त्रों में / पुराणों में लिखा है कि

ऐसा क्यों करता है ?

उत्तर लिखा कि जिन प्रभु को देखा उनको अपनी आँखो में बसा लिया वे कहीं अब भग न जाये इसलिये झुरन्त बन्द कर लेता है। कितनी अच्छी कल्पना की है। आँख बन्द करते ही भगवान स्पष्ट दिखेंगे। इसलिये आपने जिन भी भगवान के दर्शन किये उनको आँख बंद करके देखा करो। छोटे है तो छोटे रूप में, मध्यम है तो मध्यम रूप में और बड़े है तो बड़े रूप में दर्शन होंगे।

आँखे छोटी सी है परन्तु भरने की कला भी होती है। इस प्रकार याद किया करो, मन हमेशा प्रशस्त रहेगा। इतना ही अभी पर्याप्त समझता हूँ। आज चतुर्दशी थी सो उधर तो नहीं जा पाये (पण्डाल) आप लोग इधर आ ही गये। किन्तु पैदल नहीं आये, गाड़ियों से आये है। अब तो गाड़ियाँ बहुत सारी हो गयी। अपनी तो दो पहिया की गाड़ी ही अच्छी है, इसमें एक्सीडेन्ट नहीं होता।

अहिंसा परमो धर्म की जय। नूँ गुरुवाणी - o बिना प्रयोग के थ्योरी का भी नाश हो जाता है इसलिए प्रयोग पर विश्वास करके ध्यान देना चाहिए।

o आहार की तरह निहार हेतु स्थान भी प्रासुक एवं आगम अनुसार हो। दूरे-गुढ़ - दूर हो - लोगों के आवागमन से रहित हो एवं पहुँच मार्ग भी प्रासुक हो।

गर्भ कल्याणक (उत्तरार्द्ध)

6-3-19 "मत छोड़ो शुभ क्रिया को" प्रातः

वर्षा के काल में भी आप जल पीते हैं। पीते हैं कि नहीं? वर्षा में जो जल प्राप्त (उपलब्ध) होता है वह सदोष माना जाता है। क्यों कि उस जल के साथ मिट्टी, कूड़ा-करकट सब बहकर आ जाता है। कोई कहता है महाराज हम तो कुआँ का पानी पीते हैं। उस समय में कुआँ का भी यही हाल रहता है। आसोज में जो स्वच्छ रहता है वही जल श्रावण - भाद्रपद में कैसा रहता है? देखने में भी गडबड़ी, स्वाद में भी गडबड़ी। नाक भी बोलने लग जाती है, मुख तो बोलता ही है।

गंध भी उसकी अच्छी नहीं होती। इसी को श्रावण - भाद्रपद का जल बोलते हैं। फिर कैसे पीते हैं? फिटकरी, परिमार्जनी आदि कोई वस्तु उसमें डालते हैं ताकि वह गन्दलापन नीचे बैठ जावे। फिर भी पुरा दूर नहीं होता, तैरता ही रहता है। और कोई उपाय नहीं है। इसका प्रभाव गाय - बैलो आदि पशुओं पर भी पड़ता है। किसान लोग जानते है। इसीलिए श्रावण मास में दूध वर्ज्य बताया। उस समय चारों ओर नया-नया घास आता है और नया पानी रहता है, उसका पशुओं के दूध में भी वह दोष आ जाता है।

अब देखो खाने - पीने के बाद भी उसका प्रभाव छुटा नहीं। ये उदाहरण मैं इसलिये दे रहा हूँ क्यों कि आप लोगों को शुद्ध ध्यान तो होता नहीं, इसलिए पूजन - विधान - प्रवचन के द्वारा ही धर्म ध्यान कर सकते हैं।

मुनि महाराज को भी सराग अवस्था में यही बताया।
आचार्यों ने कहा वीतराग दशा में नहीं रह पाते तो सराग दशा में इन सबका सहारा ले लो। आप भी उनका प्रवचन आदि से लाभ ले लेते हैं। इसी से दान-पुण्य कर लेते हैं। मोह का जो झड़-कचरा जमा हो जाता है उसे साफ कर लेते हैं। होता है कि नहीं? कुछ तो कहो? हिओ) नांदिया बन जाते हो कभी-कभी। इन सबके माध्यम से कुछ समय तक धार्मिक वातावरण बन जाता है।
पूजन - अभिषेक - देव दर्शन - माला आदि - आदि सराग चर्या में आते हैं। मुनि महाराज को भी सराग अवस्था में इन्हीं का आलम्बन लेना पड़ता है। बोलना पड़ता है "प्रवृत्ति को मोक्षमार्ग में लाचार होकर अपनाना पड़ता है।" हम लोगों को कहा है - यहाँ तक रहोगे तो ठीक है। आपको भी यही कहा। अन्य जल पीओगे तो बीमार पड़ जाओगे। समुद्र का खारा होता है पी नहीं सकते।
पनाले का जल जैसा समुद्र का जल नहीं होता। हाँ! क्षीर समुद्र की बात अलग है। यहाँ तक समुद्र का जल जो खारा (विषाक्त जैसा) है उसको विज्ञान भी शुद्ध नहीं कर पायी (बहुत महंगा हो जाता है (वह पेय के नाम से बाजार में बिकने आता है किन्तु वह शुद्ध जल नहीं माना जाता। आप लोगों का धर्मध्यान उस ओर जाने का

नहीं पर स्वरूप की ओर लौटने के लिए है।

अधर्म से बचने, विषय-कषाय से बचने के लिए स्वरूप की ओर ही ले जाता है। पंच कल्याणक शुरू हो गया - झंझट बंधन हो गया। अब ज्यादा नहीं काम चलाऊ भोजन ले लो (पूर्ण भोजन कर लोगे तो निद्रा आयेगी। फिर जल के स्थान पर चंदन चढ़ाने लग जाओगे। मध्याह्न में नींद आती है कि नहीं? थोड़ी बहुत झपकी तो आती ही है। ब्रह्मचारी भी कहते हैं क्यों ऊंघ रहे हो? (हाँ) क्यों सो रहे हो? हाँ दोनों में हाँ कह देते हो।

ऐसे हाँ में आनंद नहीं आयेगा। अर्घ्य का अर्थ भी समझो। जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय मतलब इन तीनों को तापत्रय कहा इसे छुटकारा पाना है। ऐसा संकल्प का भाव है। संसार का जो परिभ्रमण हो रहा है वह राग-द्वेष मोह के कारण हो रहा है। इसीलिए जो रत्नत्रयधारी हैं वे बोलने का प्रसंग भी हो तो भी टाल देते हैं। रात-दिन कर्म निर्जरा चलती रहती है। बंध-प्रत्यय को दूर करने में सावधान रहते हैं।

कहौती करते रहते हैं। अप्रमत होकर अपने आवश्यकों का पालन करते हैं। फिर भी मन है कि प्रमादी होकर बार-बार छुड़क ही जाता है। मान लो 10 साल की साधना है तो 2/3 (दो तिहाई) तो प्रमाद में ही चला जाता है। नहीं चाहते हुये भी ये सब होता है। जो भी मुक्ति पाये हैं, इसी रास्ते से गुजरकर गये। प्रमत-

अप्रमत्त का यह भूषण है।

आरोहण-अवरोहण निरन्तर होता ही रहता है। श्वांस बंद करके बैठ नहीं सकते। हाँ! श्वांस कम ले सकते हैं पर बंद नहीं कर सकते। देवों में तो बिल्कुल कम, वहाँ भोजन भी हजारो वर्ष बाद किन्तु यहाँ तीर्थंकर है तो भी भोजन तो लेना ही होता है। ये सब उपक्रम ऊपर उस अवस्था को पाने हेतु ही करते हैं। अभी आत्मस्थ नहीं, भगवद् पद की प्राप्ति नहीं, कैवल्य की प्राप्ति नहीं हुयी तब तक ही ये सब करना है।

आप लोगो को भी अपनी भूमिका इस पंचकल्याणक में तैयार करना है। इस भव में ना सही अगले भव के लिए तैयारी करलें। कल भी कहा था जैसे किसान बीज का वपन करता है तो भूमिका तैयार करनी पड़ती है आप भी वही कर रहे हो। ये विधान मुक्ति का कारण बने, ऐसी भूमि तैयार कर लें। नहीं तो वही सिरले मिलेगा। वही घोड़ा और --- वही मैदान। भटकन नहीं चाहिए।

अब तो मोक्षमार्ग में चलना है। हमारा जितना कर्त्तव्य था हमने दे दिया। अब मध्याह्न में नहीं भी आये तो... चलेगा? (नहीं) महाराज आप है तो हम आते हैं। हमारे बंधन से कुछ मिल जाये तो अच्छा है। आपके पुण्य से इन लड्डू भी मिल जाता है। हमें भी लाभ होता है। स्व एवं पर दोनों का भला है। "ताली से नहीं ताल मेल और साथ में चाल भी चाहिए" चलेंगे तभी मिलेगा। आप सबकी भावना मजबूत बने इसी भावनाके साथ! अहिंसा परमो धर्म की जय!

"जन्म-कल्याणक"

7-3-19 "महत्त्व जानो नारंगी के छिलके का" प्रातः

आप लोग नारंगी से तो परिचित होंगे ही? नारंगी एक प्रकार का फल होता है। उस नारंगी को आप लोग खरीदते हैं। खरीदने से पूर्व यदि आप लोग उसको चैक करते हैं। आप सूंघ लेते हैं तो भीतर की सुगन्धी नाक में न आकर प्रायकरके मुख पर जो छिलका है उससे ज्ञान हो जाता है। कभी-कभी यदि छिलका मूल से खा लें तो बता देना क्या स्वाद आता है? आप हंस रहे हो उसी से अर्थ निकाल लेते हैं।

कुछ अलग ही स्वाद आता है। फिर भी भीतरी जो कुछ भी उसका जीवन है वह उस छिलके पर ही आधारित होता है। छिलका बाहर (अलग) कर दो तो ज्ञात हो जायेगा उसकी उम्र क्या है। सारा का सारा स्वादिष्ट रस (पका हुआ) सूख जायेगा। जैसे ही हवा लगेगी उसका उसका (भीतरी कली) अस्तित्व खतरे में हो जाता है। गर्मी में तो हाथोहाथ ही सेवन संभव है। सूख जाने पर तो गैय्या भी नहीं खाती।

तो ये क्या है नारंगी का मूल्य उस छिलके पर होता है। इसी प्रकार बाहरी शरीरगत जो भी चारित्र होता है लिंग कहलाता है, उसमें स्वाद नहीं स्वाद तो आत्मा में है, किंतु इस बाहरी संयम के बिना उस आत्मा का स्वाद ले नहीं सकते। समझ में आ गया? चार-पांच दिन से यह विषय खूब मथ रहा है। [संयमासंयम औदयिकभाव]

उस विषय को इस नारंगी के उदाहरण से याद रखें।

इसके रहते हुये भी जैसे-जैसे उस छिलके का विकास होता है, उसी प्रकार भीतरी कलियों का भी विकास होता रहता है। ठीक इसी तरह बाहरी दिगम्बरत्व है उसके विकास करने से द्रव्य संयम ही नहीं, भाव संयम के विकास का निर्णय भी होता है। इसी तरह छिलके का विकास होता है तो नारंगी का भी विकास होता है, उसके रस का भी विकास होता है। इसी तरह आपने जो भी नियम शुरू किये, वे आरम्भ से परिपक्व अवस्था तक बढ़ते ही जाते हैं।

इस प्रकार के साधु की वैय्यावृत्ति आदि करते हैं, उसमें मनोज्ञ आदि की भी वैय्यावृत्ति उनकी अवस्था देखकर करते हैं। आपके द्वारा उनका भी काम हो जाता है और अपना भी कार्य हो जाता है। ये सब बातें द्रव्य पर आधारित है। भावों की वृद्धि में द्रव्य कैसे सहयोग करता है, इस प्रकार से घटित कर लेना चाहिए। लिंग/वाह्य द्रव्य के बिना ये कार्य नहीं ये ज्ञात कर लेना चाहिए। भीतर यदि रस बढ़ रहा है तो बाहरी में भी विकास हो रहा है। इसी संयम के कारण कर्मों की निर्जरा होती है।

बाजार का ध्यान रखते हो - भावों का भी ध्यान रखा करो। सुबह अलग, मध्याह्न में अलग और शाम को अलग ही भाव होते रहते हैं। शरीर का भी ये ही हाल है। कभी-कभी तो प्रसन्नता से खिला उठता है और कभी-कभी

नारंगी मुरझा जाती है।

फिर क्या करते है? गिला कपड़ा उस पर ढाक देते हैं, ऐसा बताते हैं। धूप में नारंगी रखेंगे तो भीतरी रस बाद में पहले ऊपर का छिलका सूखेगा। वह कवच है उस नारंगी का। भीतरी प्रसन्नता को रखने के लिए ही बाह्य तप आदि करें, ऐसे हमारा कहना है, नहीं तो स्वाद से वंचित रह जाओगे।

अहिंसा परमो धर्म की जय। नुं

गुरुवाणी –

- स्वप्न तो सबको आ जाते हैं, वात-पित-कफ के दोष के कारण, किन्तु माता को स्वप्न आना पूर्व के महान पुण्य कारण हैं। आज के व्यक्ति को स्वप्न खूब आते हैं- आसमान में घुम रहे हैं- वात का प्रकोप होने से, पानी ही पानी दिख रहा है कफ का प्रकोप होने से और आग्नि की लपटें दिख रही है मतलब पित्त का प्रकोप है पर तीर्थंकर की माता के लिए ऐसा कुछ नहीं हैं।
- धर्म की परिभाषा कई रूपों में आगम में आयी है- धम्मो दया विशुद्धो, जीवाणां सरक्षणो धम्मो, अहिंसा भूतानां जगति विदितं ब्रह्म - परमं" परम करुणो, तत्थ दया थत्थ धम्मो चारित्तं मूलं धम्मो, दंसण मूलं धम्मो आदि।
- दुसरो को नहीं अपने मन - आत्मा - स्वछंदता को जितता वह जिन है। वही जैन है। o जो गुणो की उपासना करें वह जैन कहलाता है।

केवलज्ञानकल्याणक

9-3-18 "भगवान की आहार-चर्या प्रवचनांश" प्रातः

- औपचारिक क्रियाओं का प्रयोजन भी पारमार्थिक ही होना चाहिए।
- कर्म भोक्ता कभी नहीं हो सकता, कथंचित् कर्ता फिर भी हो सकता है पर भोक्ता नहीं, आत्मा ही भोक्ता है।
- मनपर्यय ज्ञान हो चुका, आपके मन को भी जान रहे हैं अतः उनके सामने भोला भाला बन जाओ।
- अन्न प्राणों का आधार है, प्राणो को टिकाना है तो भोजन लेना ही होगा। इसी से स्पष्ट है कि उत्तम संहनन, श्रुतकेवली [श्रुतज्ञानी], उत्कृष्ट साधना फिर भी आहार पर निकले।
- जैसे बच्चो का पालन होता है वैसे ही विवेक से आहारदान देना चाहिए।
- जिनका अकालमरण नहीं फिर भी भोजन के लिए क्यों डरे? छठवें गुणस्थान तक आहार संज्ञा है।
- बिना आहार भी काया सोने सी चमक सकती है-तपके प्रभाव से।
- वीर चर्या के धारी वे तीर्थंकर महामुनिराज धन्य है।
- सिंह वृत्ति है - हिंस्यवृत्ति नहीं। दीनता नहीं लाते
- कर्मों के वेग में शान्त रहो - बहो नहीं। यही शिक्षाक्त मानी जायेगा।
- "नवधा भक्ति करना केवल श्रावक का काम है, अविरत का काम नहीं।" लिख लो।

० गन्ना अभक्ष्य नहीं है। विवेक से दो। युग के प्रथम तीर्थंकर ने भी इक्षुरस से पारणा की।
० मात्र इक्षुरस ही नहीं और भी कुछ लिया होगा। ज्वालामुखी समान भूख होती है पर तब शान्त हो जाती है।
० शेष 23 तीर्थंकर ने क्षीरान्न लिया। (उत्तर पुराण)
० कैसी पढ़ाई कर रहे हैं? दूध कभी अभक्ष्य नहीं हो सकता। जैनाचार्यों ने आचार संहिता में लिखा है। दूध को शाकाहार नहीं मानना, ये शिक्षा कभी भी स्वीकार्य नहीं है।
० दूध जैसी पवित्र वस्तु को डेरी व्यवसाय बनाना बहुत गलत है।
० देशी नस्ल का गाय ही लेने योग्य है, विदेशी नस्ल की गाय/जरसी गाय का दूध योग्य नहीं। बिमारियों का कारण है।
० ऐसे शाकाहार के प्रचार का विरोध होना चाहिए। अपने आप को विद्वान मानते हैं, उनका समर्थन करना ठीक नहीं।
० लोकतंत्र का मतलब ये नहीं कि स्वच्छन्द हो जाओ।
० शान्तिधारा को देख लो। इसको सुरक्षित करना है- दान कहलायेगा।
० केवलज्ञान क्षायिक पर्याय है, प्राणों में शान्ति तभी जब आहार हो। उन प्राणों से ही ध्यान होगा, उसी से केवलज्ञान प्राप्त होगा। आपका वह इक्षुरस / क्षीरान्न ही इसमें प्रमुख निमित्त बना।

० उनकी आंखों में जो आकुलता है वह शांत हो गयी। देखने में नहीं आयी, पर आपके घर पर आये, इसी से स्पष्ट है - काहे को आये? छोटा बच्चा भी रोने लगता है। क्यों? मुझे भूख लग रही है।

० आपके आहार दान से केवलज्ञान की प्राप्ति हुयी, इससे निकाचित् पुण्य बन्ध हुआ। पाप की निर्जरा तो हुयी ही।

० देव आहार नहीं दे सकते। ताण्डव नृत्य करके ऐसा पुण्य बंध कर सकते हैं, अगले भव में स्वयं मोक्ष जाते हैं/जा सकते हैं।

"मोक्ष कल्याणक प्रवचनांश" ००० प्रातः 10-3-19

० कार्यकर्ता बहुत कम होते हैं, कभी तो बहुत जल्दी बन जाते हैं।

० दान एक सेकेण्ड में होता है पर उपयोग सोच समझकर होता है।

० गर्भ से लेकर सिद्ध बनने तक की यात्रा इस पंचकल्याणक के माध्यम से देखी जो विघ्न रहित - आनंद के साथ पूर्ण हुआ।

० "एटम बम सबको जलाकर राख कर सकता है पर कर्मों को राख करने की क्षमता उसके पास नहीं वह तो ध्यान रूपी अग्नि से ही भस्म हो सकते हैं।"

० ध्यान ऐसी अग्नि है जिसके द्वारा शरीर का तो पता ही नहीं कर्मों को भी राख कर देती है।

० "कर्म भस्म कर्तारः" आगम में आया।

० यह कार्य प्रथम - द्वितीय शुक्ल ध्यान से नहीं चतुर्थ शुक्ल ध्यान से ही संभव हो पाता है - कर्म एवं नोकर्म - शरीर सब का सफाया हो जाता है।

o जिसने किया उसी के होते हैं, निगोदिया तो वहाँ ढेर है। तीर्थंकर का तीर्थंकर को ही मिलता है उनके बेटे को भी नहीं।
o नख एवं बाल नोकर्म होते हुये भी मल माने गये हैं। ये शेष बचे रहते हैं - पुरा शरीर रुई की भांति समाप्त हो जाता है।
o इतने सारे पंचकल्याणक करने वाला वह सौधर्म इन्द्र अंत में पाखाने वाली देखकर भी वैराग्य नहीं हो पाता। जाने की टिकिट आने से पहले बन जाती है। इसे ही क्षणिक वैराग्य बोलते हैं।
o लॉटरी की टिकिट ऐसे मिलने वाली नहीं, वह अपने ही निकट है लेकिन बहुत ही विकट है।
o धार्मिक अनुष्ठान पर के लिए नहीं अपने लिए कर रहे हो। ध्यान रखो - धर्म कभी दूसरे के लिए नहीं होता।
o वर्तमान युग महंगाई का युग है, हमारा आशीर्वाद भी महंगा हो गया है।
o ऐसे अनुष्ठान के माध्यम से ध्यान के संस्कार आत्मा पर जरूर पड़ते हैं।
o धर्म को बेचा नहीं जाता, किया जाता है, इसको सुरक्षित रखना है।

संस्मरण
o वो दिन भी याद है हमें। यहाँ से होते हुये मुक्तागिरी जाना था। दो दिन तक पानी रुका ही नहीं। पानी ही पानी हो गया। कोई धर्मशाला - वोला भी नहीं। दो-तीन दिन बाद बिहार कर मुक्तागिरी गये।

अहिंसा परमो धर्म की जय। नुँ

Note: "बीना बारहा पंचकल्याणक के मध्याह्न के अनमोल वचन"

- हवन के माध्यम से टनोटन ऑक्सिजन का निर्माण होताहै, विश्वशांति महायज्ञ नाम सार्थक है।
- इतनी प्राणवायु बनती है अपने आप ही प्राणों की रक्षा के योग्य वातावरण बन जाता है। क्रूरता भी दूर हो जाती है, मानसिकता सुधर जाती है।
- भावना की दृष्टि से मातृपक्ष के पास अधिक क्षमता होती है। माँ तो माँ होती है
- धरती विशेष हो तो बीज कई गुना फलता है ऐसे ही तीर्थंकर के माँ (जननी) एक ही बीज पर्याप्त है।
- ऐसे बच्चों का निर्माण हो जो धर्म-अर्थ-काम पुरुषार्थ करलें।
- काम पुरुषार्थ - कुशील पाप नहीं। यह वासना नहीं अपितु वासना पर विजय प्राप्त करने की उपासना है।
- विवाह न हो तो तीर्थंकर का जन्म कैसे होगा? सोचो।
- उपासक का क्षम का मार्ग भी सन्मार्ग की ओर ले जानेका उपक्रम है।
- आप लोगो को सोचना चाहिए कि आपका संबंध किससे है- भगवान महावीर, आचार्य कुन्दकुन्द आदि आचार्यों से संबंध है।
- योगसागर जी को निर्यापक श्रमण की पदवी दी।
- ३ प्रकार के वैश्य - वैश्य, वणिक, पशुपालनकर्ता

"पशुपाल्योपेक्षा वाणिक वृत्ति"

- उदाहरण → सौधर्म इन्द्र अभिषेक कर रहा है पर क्षीर सागर का लड्डू बनी है तब कर रहा है।

(प्रवचन दूसरी डायरी में) ०००

11-3-19 "प्रदर्शन नहीं दूरदर्शन है ये" प्रातः

एक शिल्पी वास्तु का निर्माण कर रहा है। समय-समय पर भिन्न-भिन्न साधनों द्वारा अपने वास्तु को सही रूप दे रहा है। दीवार उठा रहा है। उस दीवार को यह सीधा है कि नहीं एक वस्तु के द्वारा देखता जाता है। क्या बोलते हैं उसे? [साउल] दक्षिण में अलग बोलते हैं। उस साउल में एक छेद के माध्यम से डोर पीरो रखी है, जिसे पकड़कर देखता है कि ये सही समान है कि नहीं।

अपनी आँखों से यह देखता रहता है। एक-एक पत्थर जो गढ़कर तैयार किया है, रखता जाता है। उस पत्थर को जब रखता है तो वह हिलता है। सुन रहे हो किन्हीं? [हूँ] सावधानी से सुनियो। वह हिलता है तो उस पत्थर की ही जो छोटी-छोटी चीप होती है। चीप जानते हो न? [हूँ] उसे लगाकर ठीक कर देता है। जो हिल रहा था अपने आप ही बंद हो गया। बड़े पत्थर भी हिलते हैं, वे सब चीप के द्वारा ठीक-ठाक हो जाते हैं।

ऐसे ही कुछ चीपें (लड़के) (कार्यकर्ता) अभी यहाँ आयी थीं। बड़े-बड़े पत्थरों के साथ इन चीपों ने सहारा दे दिया जिससे विशाल मान्दिर का निर्माण हो गया। अगर चीप हिल जाये तो क्या गत होती है। इसलिये अपने को बड़ा अथवा छोटा मत मानो। जो नींव के पत्थर होते हैं, वो कभी दिखते नहीं। उसकी कभी फोटो लेते हैं? वह कहता है-

हमारी भी फोटो लेलो?

यदि वह हिल जाये तो क्या हो?

जो मान-अभिमान को छोड़ देते हैं वे ही नींव के पत्थर बनते हैं। वह भवन/मन्दिर हजारों वर्ष तक सुरक्षित उसी नींव के आधार पर रहता है। इसलिये उस नींव को भी नमस्कार किया जाता है। माथा टेको-माथा टेको। एक प्रसिद्ध कवि की कुछ पंक्तियाँ सुनी थी जो अभी प्रासंगिक समझता हूँ-"जो गिर पड़े धरा पे - आसमानी हो गये --" भीतर तक हिला देती है।

जो राष्ट्र के लिए समर्पित हो गये - गिर तो पड़े हैं किन्तु आसमानी हो गये। एक ही समय में देव हो गये। जो नींव में रहते हैं वे आसमानी बनेंगे ही। उसी आत्मा के बल पर वे धरती पर गिरकर भी आनंद का अनुभव करते हैं। "ये प्रदर्शन नहीं - दर्शन है जो पूज्य है।"

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

Notes:-

- शान्ति, सुख, वैभव और सात्विकता आये ऐसे गान की आवश्यकता है। (चुनावों पर)
- शिक्षा पद्धति कलह मिटाने वाली हो कलह को बढ़ाने वाली नहीं।
- संकल्प से हवा के रुख को भी बदला जा सकता है
- वर्तमान के तुफान में भी दीपक को सुरक्षित रखना ही होगा।

12-3-19 "आओ करें आत्म पुरुषार्थ" प्रातः

यहाँ पर मेले में दूर दूर से लोग आये थे वे सब अपने-अपने घर वापस चले गये (अब नये-नये व्यक्ति और आ रहे हैं। बिना भीड़ के प्रत्येक भगवान के अच्छे से दर्शन मिल रहे हैं। हमें भी आज लगभग एक सप्ताह बाद अच्छे से भगवान के दर्शन मिल गये। जो दूर से आते हैं उनका पहले अधिकार बनता है, इसलिए आपने देखा होगा भीड़ होने पर मैं यहीं बैठकर दर्शन कर लेता हूँ। भावोंको पवित्र रखना चाहिए। एक बहुत अच्छी बात याद आ गयी।

बागवान होता है। उसके वन में अनेक प्रकार के वृक्ष होते हैं। आम का भी वृक्ष होता है। "वृक्षाणां समूह इति वनम्" वृक्षों के समूह जहाँ होते हैं उसे वन कहते हैं। तो उस वन में आम का भी वृक्ष है जिस पर आम भी लगे हैं। उन आम का दो प्रकार से उपयोग करता है। एक तो पूर्ण पक जाने पर दूसरा जब वह परिपक्व अवस्था की ओर होता है तो आचार के लिए चुनता है। वे आम हरे हैं, खटास को लिए हुये हैं।

अचार के योग्य जो होते हैं उन्हें ही वह लेता है। यदि वह गुण न हो तो स्वीकार नहीं करता है। फिर क्या करता है? वह केरी टाइप होती है। उससे पना बना लेता है। पना में मिठास नहीं होता परन्तु लू लगे तो सब ठीक-ठाक हो जाती है। बाजार में जाओगे ऐसा आम (केरी) लू नहीं लगने देगा। स्पष्ट

है आचार के योग्य कैसे आम है, वह जानता है।

आप नहीं जानते होंगे, मैं जानता हूँ - बताता हूँ। यदि आचार के योग्य न हो तो ऐसे आम में कुछ ही दिनों में जीवोत्पत्ति हो जाती है। योग्यता नहीं होने पर ऐसा होता है। इसलिए वह एक-आध को फोड़कर चेक कर लेता है। जो पक्व होता है उसके भीतर रेखायें आजाती है (जाली) जो पकने की ओर है उनके लिए अलग व्यवस्था है। एक साथ सभी आम नहीं पकते, भिन्न-भिन्न काल में पकते हैं। जो अधिक पक गया वह तो नीचे गिर जायेगा। इसलिये उस बागवान को सब देखना होता है।

पकाव की ओर नहीं तो अभी छोड़ देता है। समय आने पर ही काम होगा वह जानता है किन्तु कुछ ऐसे भी आम है जिन्हे पकाव की आवश्यकता है। उसे भी उनकी अनिवार्यता समझ में आ रही है। वैसे अभी 8-10 दिन लगता पर तोड़कर वह 2-3 में ही पका देता है। कैसे? तो "पाल विधे माली" ऐसे आम को पाल में रखकर पका लेता है।

वह आचार क्वालिटी भी है - गंभ भी भरपुर है - ताजा भी है - युं कहो उसमें कमियाँ है ही नहीं। यह पुरुषार्थ कहलाता है। कर्मो की ऐसी ही दशा होती है। एक उदय होता है दुसरा उदीरणा। दोनो में अन्तर होता है। "अकाल पक्व उदीरणा" उसका काल नहीं था, उसको पका दिया यही उदीरणा कहलाती है। कैसे हुआ? "परिणाम पच्चयेण" उसने ऐसे

परिणाम किये जिनके माध्यम से उदय में ले आता है।

स्तिबुक संक्रमण अथवा अन्य संक्रमण द्वारा वह उन कर्मों को पहले ही उदय में ले आता है। यही आत्मपुरुषार्थ कहलाता है। "मोक्षमार्ग में आत्मपुरुषार्थ ही होता है - हमें वही करना है।" पराया पुरुषार्थ मोक्षमार्ग में काम नहीं आता। सुन रहे हो? हओ तो कहो? ऐसा लग रहा है जैसे यहाँ जबरदस्ती बैठाया गया हो। [हओ] आप सब यहाँ भक्त बनकर आये हो। फिर अलग-अलग गाँव का नाम क्यों ले रहे हो। आप लोगों को मोक्षपुरुषार्थ में आगे आना है, नाम को तो गौण करीये अब।

व्यवहार में नाम काम का है, भोजनशाला में नाम लिखाना है तो ...। यहाँ तो अपने परिणामों को सुधारना अत्यावश्यक है। मोक्षमार्ग में चलना है तो कर्मों की दशा को देखना जरूरी है। और यह आत्म पुरुषार्थ से ही संभव है। हमें पता है आप दूर से आये हैं, सभी दूर से आये हैं, जाना कहाँ है? ये भी पता है कि नहीं? इसलिए आपको अपनी भूमिका स्वयं बनाना है। योग्य कार्य करना है।

पाल विषे में जैसे माली जो पकने योग्य है उन्हीं को उतार सकता है, जल्दी नहीं तोड़ सकता। ऐसा नहीं कर सकता कि आज तो वृक्ष पर इतने आम लगे हैं यदि झंझा-आंधी-तुफान आया तो आधे ही रह जायेंगे अतः आज ही पाल में रख दो। इस प्रकार तो वे केरियाँ ही रह जायेगी, आधार

नहीं बना पाओगे।

इतना भी सुनिश्चय है जो रह जाते हैं वही पकने योग्य होते हैं। इसमें भी यदि ओलावृष्टि आदि हो जाये तो नहीं हो पाता। जो पूर्व में हमने कर्म किये हैं वे ही फल देते हैं। फूल ही फल के रूप में परिणत होगा किन्तु कब? जब फूल की सुरक्षा होगी होगी। तभी वह फूल फल के रूप में फलेगा। भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि आप तो भगवान बन चुके हैं, हमारी आत्मा भी एक दिन भगवान बने। इतना ही पर्याप्त समझता हूँ।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

ईर्यापथ में →

जिस प्रकार जैनागम में आगम को मित्रवत् एवं आदेश को शत्रुवत् कहा उसी प्रकार चिकित्सा की दृष्टि से मोक्षमार्ग में वात एवं कफ को मित्र कहा तथा पित्त को शत्रु कहा। पित्त जब उठता है तो वह चित्त को अशान्त कर देता है।

आचार्य श्री ने कहा यदि चक्कर आ रहे हैं, घबराहट हो रही है, जी मचला रहा है मतलब पित्त का उठाव हो रहा है तो तेज गरम पानी से शिरोधारा (सिर के अग्रभाग पर) छोड़ि। थप्पी भी बोलते हैं। इससे एक मिनिट में ही सब शान्त हो जायेगा। एक गिलास पानी भी नहीं लगेगा और काम हो जायेगा।

पंचसूना

13-3-19 "बचायें पांच जहर से" प्रति.

श्रमण और श्रावक क्या होते हैं इसकी जानकारी संक्षेप में किन्तु महत्वपूर्ण है उसे समझना है। श्रावक क्या होता है तो आचार्यों ने कहा- दान पूजाशील उपवास जिसके कर्त्तव्य हैं वह श्रावक है। वह दान देता है, पूजा आदि करता है, शील का पालन अर्थात मर्यादा में रहता है और यथाशक्ति उपवास आदि भी करता रहता है। दान देता है, किनको ? ऐसे गुरु को जिनके परस पंच सूने नहीं होते। पंच सूने कौन-कौनसे है?

चक्की, ओरवली, चुल्हा, बुहारी तथा बाल्टी (घड़ा) ये पांच सूने हैं। यदि पांच सूने नहीं तो वह श्रावक नहीं। आज ये सब गायब हो रहे हैं। कैसे? तो चुल्हा का स्थान गैस बत्ती ने ले लिया। चक्की थी वो भी अलग रूप में आ गयी। बाल्टी तो नल आ गये। अब हम श्रावक की पहचान करें तो कैसे करें? अब और बताना चाहता हूँ। मूसल होता है क्यों कि ओरवली अकेली तो काम की रहती नहीं यह महत्वपूर्ण सूना है जो सत्त्व गुण को बनाये रखता है।

मान लो धान को कूटना है, ऊपर का छिलका तो दूर हो जाता है, ज्यादा कम नहीं करता। वही लंबाई तो आपके चश्मे की लंबाई में काम करती है। आज इसका अभाव हो रहा है। इसीलिए जहर घोषित हो रहा है। सुन रहे हो आप लोग? पढ़े-लिखे हो इसलिये ऐसा हो रहा है। यंत्र

आ गया, वह आपको पेल रहा है।

इसी प्रकार हाथ की चक्की बंद हो गयी। अब एक बार गेहूँ डाला और कई बार घुमा दिया। ज्यादा घुमायेंगे तो मैदा बन गयी। हाथ की चक्की से मैदा कभी आ ही नहीं सकती। ध्यान रखो आलव भी नहीं पिसता धान अथवा बीज पिसता है। मैदा पीसने में भी पसीना आ जाता है। जहर है ये। चावल सफेद तो सत्व ही निकल गया। जैसे शरीर में रक्त न हो तो विधवी कहलाती है।

इसी तरह आज कुयें समाप्त नल आ गये। बाल्टी या घड़े से पानी निकालकर छानकर बिलछानी डालकर पीते थे। नल के कारण पूरे के पूरे जीवों का सफाया हो जाता है। एक टेंक जिसमें हजारों/लाखों गैलन पानी है- ब्लिचिंग पाउडर डाल दिया- एक भी जीव नहीं बच पाता। जल गालन समाप्त। अब कौनसा रह गया? झाड़ू हो, बुहारी। पहले जीव जन्तु देखकर साफ सफाई होती थी अब... वाइपर। ऐसे करते हैं। (एक्सन) ये क्या? पाउडर बना रहे हैं।

जो कोमलता बुहारी में होती है वह वाइपर में नहीं। भगवान के यहाँ तो कहीं-कहीं पर इतनी कोमल पिच्छी तक उली से सफाई करते हैं। अब ये सूने ही नहीं रहे तो श्रावक की पहचान कैसे होगी? सब सूने-सूने हो गये। रत्नकरण्ड श्रावकाचार में स्वामी

समन्तभद्र ने लिखा -

अपसूनारम्भाणा - मार्याणामिष्यते दानम् ॥

जिनके पास सूने न हो उनके लिए दान देना। कौन देगा? जिनके पास सूना है वह देता है। उनका पाप (आरम्भादि) भी पुण्य में परिवर्तित इस दान इत्यादि के माध्यम से हो जाता है। ये हमने बहुत संक्षेप में बताया।

इसके अलावा दूध लाते हो आप वह दूध नहीं रहा। विदेश से डिब्बे में बंद होकर पाउडर बनाकर आ रहा है, उसकी दशा बहुत खराब है। अध्ययन कर लेना चाहिए। इसी तरह पहले हाथ से गन्ने के रस को निकालकर तपाकर गुड़ तैयार किया जाता था अब शक्कर आ गया। वह शक्कर रसायन एवं केमिकल के माध्यम से बनाया जाता है जिसे सफेद जहर घोषित कर दिया है। मैदा - चावल को भी जहर घोषित कर दिया। जो थॉयराइड निरोधक नमक आता है वह भी जहर है। एक्सट्रा हो गया है। आयोडीन युक्त नमक की कोई आवश्यकता नहीं है।

खुल्लम खुल्ला इनको जहर घोषित करने के बाद भी आप ले रहे हैं। क्योंकि आप आदी हो चुके हैं। आप आँखों से देखते ही नहीं मानो अवधीज्ञान होने वाला है। भागते जाओ - भागते जाओ। यंत्रों के माध्यम से ये सब हो रहा है। शुद्धि रही ही नहीं। शुद्धि रह गयी तो मात्र श्रावकाचार में वो भी किताबों में लिखी हुयी रह गयी है "बुद्धि है तो शुद्धि आ सकती है।" इसका प्रबल

कारण है - विदेशी शिक्षा नीति।

अब तो जाग्रत हो जाओ नहीं तो कल आपको ही मिलने वाला है। स्वर्ग भी पास में नहीं है। वहाँ भी बहुत केंद्रगी है। सुनकर/देखकर घबराहट हो जायेगी। किल्विषिक जाति के देव जिन्हें सभा में बैठने का अधिकार नहीं। सागरोपम आयु तक, जनम से लेकर मरण तक यह दुःख भोगना पड़ता है।

जहाँ सीढ़ियाँ बनी रहती है वहाँ बैठना है। सोलह स्वर्ग तक तो यह व्यवस्था रहती है। देख लो सोच लो। वहाँ भी ऐसे कब्र उठाने पड़ते हैं। बड़े देवों की आज्ञा का पालन करना ही पड़ेगा। इसलिये इन सबसे बचकर योग्य आचरण को अपनाना चाहिए। इतना ही पर्याप्त है।

मध्याह्न विहार - रात्रि - सिंगपुर अहिंसा परमो धर्म की जय। नँ गुरुवाणी →

- अच्छे - अच्छे अर्थशास्त्री भी आज तक अर्थ का सही अर्थ नहीं जान पाये।
- "कौटिल्य की अर्थनीति" पुस्तक देश की अर्थनीति को सुदृढ़ बनाने में सक्षम है।
- चाणक्य का दुसरा नाम कौटिल्य था। चोटी में गाँठ बांधकर रखता था। "कुटिल भावम् इति कौटिल्यम्"

अनंतपुरा

14-3-19 "महत्त्व अचल सम्पदा का" प्रातः

जब बीना बारहा में पहली बार गजरथ महोत्सव हुआ था उस समय हम अनंतपुरा से बीना की ओर गये थे। कॉफी समय हो गये। रहली से उस तरफ जाना था लोगों ने बताया महाराज इधर से भी रास्ता है। हमने भी सोचा कि गाँव को भी लाभ मिल जाये इस प्रकार कर लेते हैं। तो उस समय यात्रा हुयी थी। उसके बाद कितनी बार आ गये पता है आपको? भूल गये तो कोई बाधा नहीं। किन्तु कोई भी यह नहीं बोल रहा कि इतने बार आये।

भावों की भक्ति से काम होता है। बादल होते हैं जिधर हवा चले उधर ही चले जाते हैं। यहाँ पर इतना अवश्य है कि गाँव से शहर की ओर चले गये। बोलियों से ज्ञात हो ही रहा है। कहाँ-कहाँ जाकर बसे हैं अनन्तपुरा वाले पता है? एक बात ध्यान रखो "नगर में चल सम्पदा होती है इसीलिये चंचल होते हैं किन्तु गाँवों में तो अचल सम्पदा होती है अचल सम्पदा।" वह सम्पदा जिसका कोई ठीकाना ही नहीं है। सिंचाई के साधनों की उपलब्धता हो जाये तो 1-2 नहीं 3-3 फसल भी निकाल लेते हैं।

हजारों व्यक्ति उससे लाभान्वित होते हैं। इन सब बातों का लाभ गाँव ही ले पाते हैं। अभी कहा गया- हमारी दीक्षा अनन्तपुरा में ही हो जाये। मतलब अभी भी अनंतपुरा का मोह छुटा नहीं है। अनन्तपुरा को छोड़ना

है कि नहीं, अन्यत्र हो जाये तो अच्छा।

भगवान भी तो अनंत के धाम में अनन्त काल के लिए चले जाते हैं। भावों में उद्वेग अथवा हर्षोल्लास के कारण ऐसा हो जाता है। यहाँ से जाने के बाद भी ये योग था जो आज गाँव लौटकर आ गये। शुरु में तो जो भी आर्यिका बनी ब्राह्मि आश्रम वाली बनी हैं, अभी भी कुछ उनकी बहनें भी हैं। नये लोग भी निवेदन कर रहे हैं। नम्बर तो लग जाये।

ये ऐसा मार्ग है इसमें पीछे वाले आगे और आगे वाले पीछे हो जाते हैं। भगवान से प्रार्थना करो। गांव के संस्कार हैं - गांव में रह भी रहे हो उसी का ये परिणाम है, दान की घोषणा में आगे - पीछे नहीं सोचते। शहरों में ग्रामीण पद्धति नहीं इसीलिए संतोष नहीं है। दुकानदारी करते हैं शहर वाले। गाँवों में अपनी जमीन पर खेती करते हैं। नगर वालों को गाँव वालों की भावना का स्वागत करना चाहिए।

इससे उनके मोह को टूटने में भी देर नहीं लगेगी। मोह छोड़ना बहुत कठिन है पर भावना अवश्य रखनी है। व्यवस्थित रहेंगे तो हमारा काम हो सकेगा। शहर वाले गाँवों पर आधारित हैं और गाँव अपनी श्रेष्ठ परम्परा पर चलेंगे तभी वह शहर पुनः लौटकर आयेगा। अभी - अभी मार्ग में एक स्तूप (स्मारक) देखा। गांधी जी भी यहाँ आये थे। उस शहर का निर्माण करने में गाँव ही सक्षम हैं। उनकी भी भावना फलवती है।

शान्ति - मोहनी

अहिंसा परमो धर्मः की जय

मोहली

वेदी-प्रतिष्ठा

15-3-19 "पुण्यशाली को मिले - भली वस्तु का योग" प्रातः

यहाँ से कई बार बीना बारहा आना - जाना हुआ। सकलका तो कई बार आये। किन्तु अबकी बार जो आना हुआ वह अलग ढंग से आना हुआ। कल अनन्तपुरा में चर्या हुई। यहाँ चारों तरफ से रास्ते है, हम जानते है। सामायिक के उपरान्त आये और पुछने लगे कौनसा रास्ता है? हमने भी कह दिया बाद में बता देंगे। मोहली तो आना ही था। किन्तु छिरारी - हिनौति होते हुये आना था। किसी ने कहा छिरारी न जाकर यहाँ से 9 K.m पर हिनौती वहाँ से 9 किमी. पर मोहली है।

हमने भी सोचा ये कम है चलो। पर बीच में टेमरिया वाले आ गये। महाराज इतै से और कम है। रामखेड़ी से 8 किमी. सीधे है। छिरारी भी और हिनोती भी दोनो ही छुट गयी। कल शाम को ही मोहली पहुँच गये। ये कैसे हो गया। यहाँ के लोगो ने कहा था- महाराज कल वेदी प्रतिष्ठा है। लोग महिनों क्या वर्षों प्रतिक्षा करते है और यहाँ पर? हमारे भाग्य में कौन आयेगा किन्तु भगवान ने आप लोगो की भावना को सुन लई।

2-3 व्यक्तियों ने कहा मोहली सुबह आते तो ये सब कैसे होता? हो भी जाता किन्तु इतना व्यवस्थित नहीं हो पाता। योग की बात होती है। कभी-कभी पुण्य का योग नहीं होता है तो दाख जब पकते है तभी काक के कंठ में रोग हो जाता है। दाख पके

जब काक के, होय कंठ में रोग।

खुले में द्राक्ष है- सभी पक्षी चिड़िया आदि खा रहे हैं उसी समय कौवा के कण्ठ में रोग होने से वह खा नहीं पाता है। यहाँ पर कर्म का योग तो था ही पुण्य से खूब द्राक्ष भी मिल गये। बहुत अच्छा। वेदी भी अच्छी बन गयी है। सुनते हैं यहाँ रात में 12 से 4 बजे के बीच में अलार्म-घण्टा बजते हैं। तो देव लोग आते हैं, वे भी भगवान की भक्ति करते हैं। उनसे घबराना नहीं। भक्तों को भगवान चलाकर दर्शन भी दे देते हैं।

ये भक्ति की बात है। यहाँ छोटे-छोटे गाँव हैं, आस्था का विषय है। यहाँ के लोग खेती-किसानी के साथ, भक्ति भी करते हैं और संतोष की आराधना करके अपने जीवन को धन्य बनाते हैं। नगरों में संतोष की आराधना नहीं- गाँवों में ही संतोष की आराधना हो पाती है। वहाँ ऊपर में नम्बर तो पहले इन्हीं का लगेगा। जब भी टिकिट मिलेगा तो गाँव वालों को प्रथम मिलेगा। ये लोग निराकुलता से जीते हैं। वैसे भगवान किसी से प्रभावित नहीं होते पर भगवान को भावित तो कर ही सकते हैं। खेती-किसानी करने वाले संतोषी होते हैं। ऐसे ही धार्मिक जीवन यापन करने वाले व्यक्तियों को एक-आध भव में ही परम निर्वाण की प्राप्ति हो जाती है। उस निर्वाण पद की प्राप्ति हो इन्हीं शुभ भावों के साथ। अहिंसा परमो धर्म की जय हो

रात्रि- प्रवचन मन्दिर- लकसका

झलोन

16-3-19 "अहा जिन्दगी" प्रातः

जब हम पहली बार इधर आये थे, तेन्दु खेड़ा से आ गये। खेड़ा मतलब छोटा गांव भले ही कहते होंगे किन्तु तहसील वैसेस है वह। यहाँ से गाड़ी रहली को जा रही थी। गाड़ियाँ उस समय आती ही नहीं थी क्यों कि पगडंडी बनी थी। हमें इसलिए अच्छा लगता है- भीड़ कम अस्वत है। अबकी बार शान्तिधार बीना बारह से चले/मौहली होते हुये। पहले एकबार यहाँ से चकलका होकर अमाना भी हम गये हैं।

यहाँ का मन्दिर छोटा था। मांग थी- महाराज हमारा भी मन्दिर बड़ा हो जाय। लगन भी थी। भीतर जो कुछ भी रखा था धीरे-धीरे बाहर आना प्रारम्भ हो गया। [12 साल लग गये] लगन भी तो कॉपी लगी है। अब कहने लगे- महाराज कोई संघ मिल जाये। काहे के लाने? पंचकल्याणक कराना है। फलस्वरूप पंचकल्याणक अच्छे ढंग से हो गया। 7 महाराज आये थे। सप्त ऋषि माने जाते हैं- ध्यान रखो। इस प्रकार एक गांव होते हुये भी इर्द-गिर्द बहुत सारे गाँव इकट्ठे जैसे जुड़ गये।

इतिहास रचाया था। कम खर्च में काम करके बचत करके हमसे कहा। महाराज आप जहाँ कहेंगे वहाँ देंगे। हमने सिद्ध क्षेत्र नेमावर हेतु कहा, वहाँ इसी गाँव का एक मन्दिर बनाया गया है। (डालरव) मैं इसलिये कह रहा हूँ ताकि शहर वाले सुन लेवें। राशि तो आती है और

चली जाती है।

एक-एक पाई का हिसाब होना चाहिए। हमने भी कह रखा था बुन्देलखण्ड की राशि पक्की है कच्ची नहीं। कच्ची रसोई (सोंध की) खाने वालों की राशि पक्की है। इस प्रकार बुन्देलखण्ड की ही यह परम्परा है जहाँ राशि अन्यत्र (जरूरत जहाँ भी) भी चली जाती है। वे भी इसका पूर्ण उपयोग करते हैं। ऐसा ये झलोन है - उधर मझोली है। हम ऐसे ही नाम याद रखते हैं। कल मोहली से इधर आना हुआ।

अभी हथकरघा के लिए भी राशि निकाली। इसके माध्यम से अनेक बच्चे अपने पैरों पर खड़े हो रहे हैं, आगे और भी होंगे। तेन्दुखेड़ा में भी यह कार्य चल रहा है। उसमें तो जो इन्जिनियर है वे भी काम कर रहे हैं। गाँवों के बच्चे परिश्रम करके अपने ही पैरों पर खड़े होकर स्वाश्रितता से जीवनयापन कर रहे हैं। किसी से माँगने की बात ही नहीं है।

सरकार कहाँ तक रोजगार उपलब्ध करायेगी? बच्चों की निगाह मात्र नौकरी पर रहती है बच्चों से भी पहले उनके माता-पिता की निगाह रहती है। हमें तो नौकरी कराना है। ताकि बैठे-बैठे कमाई करता रहे। ऐसे में ऊपर से भी नहीं बीचे से भी नहीं कहीं से भी (कमाई) नहीं होगी। स्वयं काम करेगा, अपने साथ 10-20 बच्चों को और खड़ा कर देगा। सही

सरकार तो यही है।

सरकार क्या है? वो तो 5 वर्ष में एक बार वोट मांगने आ जाते हैं। इसी का नाम सरकार है। पाँच साल बाद- आप तो पहचानते ही होंगे? ऐसा कहते हैं। हाँ, हम तो भगवान को भी पहचानते हैं और आपको भी पहचानते हैं। वो तो परमानेन्ट है आप तो टेम्परेरी (अस्थायी) हो। पांच साल के लाने आये हो, फिर चले जाओगे।

इतना अवश्य है गाँव-गाँव के सहयोग से मतदान के कारण भारत में सक्रीयता बनी हुयी है। आगे भी यह सक्रियता बने रहे। सात्विक धर्मकर्म के साथ ये ठोस कार्य है। यहाँ के लोग आज भी स्वाश्रित है पराश्रित नहीं। गाँव और सचेत हो जाये, "अपने बच्चों को शहर की ओर न भेजें, भेजें तो ऐसे तैयार करके भेजें कि शहर वाले भी समझ जायें कि गाँवों में ही जिन्दगी है।"

रात्रि- बगदरी मन्दिर- गुइची अहिंसा परमो धर्म की जय। नुँ

"भक्ति"

अनंतपुरा से संघ का विहार मोहली के लिए हुआ। रात्रि विश्राम हिनोती में होना था। बीच में सिमरिया गांव पड़ा, मन्दिर था आ० श्री जी एवं संघ दर्शन करके ज्यों ही निकला। एक व्यक्ति ने कहा- रामखेडी होते हुये सीधे मोहली (जंगल से) कम पडेगा। हम उधर से जा रहे थे कि अचानक दूर से एक महिला दौड़ती हुयी आयी- कांटो की बाड़ पर से छलांग लगादी कपडो में कांटे भी उलझ गये पर भगवान चले न जाये इसी भावना

से दौड़ती हुयी आयी। हम लोगों ने भी उसकी भावना देखते हुये गुरुजी से निवेदन किया। गुरुजी कुछ देर रुक गये। उस महिला ने मन-वचन-काय से गुरु चरणों में प्रणाम किया। उसकी आंखो से भक्ति के अश्रु बह चले। हम विहार कर गये, वह अभी भी गुरुजी को देखती ही रही। धन्य है उस महिला की भक्ति।

गुरुजी के वचन थे - "ऐसे ही परिणामों के द्वारा सम्यग्दर्शन की भूमिका बनती है। इन सब लोगो को सम्यग्दर्शन की प्राप्ति हो।"

o o o

मोहली में मिले दो नये हायकू -

- "मैं तो आत्मा हूँ, औरो से आत्मीयता, मेरा स्वास है"
- "दो-दो पंख हो, राष्ट्रीय पक्षी बनो, पक्षपात छिक"

गुरुवाणी →

- प्रासुक भूमि → प्रासुक आहार सब देना चाहते हैं पर प्रासुक भूमि की तो देना चाहिए। बुन्देलखण्ड में आज भी जंगल के लिए प्रासुक स्थान खूब उपलब्ध है।
- सरकार कहती है कि जनसंख्या बढ़ रही है - जनसंख्या बढ़ रही है किन्तु ये क्यों नहीं सोच रही कि गाँवो की जनसंख्या तो घट रही है। शहरों की जनसंख्या बढ़ने पर चिंता करने वाली सरकार को गाँवों की जनसंख्या बढ़ाने का उपक्रम करना चाहिए। गांवो के माध्यम से ही हम पुनः पुराना भारत लौटा सकते हैं।

तेन्दूखेड़ा

17-3-19 "साथ ले जाने का फार्मूला" प्रातः

जबलपुर वाले बहुत खुश हैं। उनके चहरे बता रहे हैं ये जबलपुर से आये हैं। अभी तेन्दूखेड़ा में हैं। डिन्डोरी से विहार करते हुये हम जबलपुर की ओर आ रहे थे। उन्होंने सोचा होगा महाराज जबलपुर में आहार तो कर ही लेंगे। हमने कहा - हम विहार कर रहे हैं और आहार जबलपुर के बाहर हो गया। उन्हें संतुष्टि तो हो ही गयी होगी। न भी हो तो भी संतुष्टि करना पड़ता है। अब क्या होगा? देखो - माला फेरो।

तेन्दूखेड़ा पहले भी कई बार आये हैं। कहने को खेड़ा (छोटा कस्बा) है। यहाँ की जनता/भक्तों ने पाषाण के मन्दिर बनाने का संकल्प लिया है। किन्तु बहुत धीरे-धीरे गाड़ी चल रही है। ध्यान रखो - अपने मकान/निवास कैसे बनाते हो? मन्दिर के लिए पूछना पड़ता है। बिना कहे - बिना पूछे ही... बिन मांगे मोती मिले] मांगना नहीं चाहिए। सब अपने आप दे देंगे। आप जो नहीं देंगे वो साथ जाने वाला नहीं, आप यहाँ देंगे वही साथ जाने वाला है।"

कौनसा चाहते हो? अपने पास ही रखे रहोगे तो कम हो सकता है ज्यादा नहीं किन्तु दान तो कितने गुणित कर देता है यह कह ही नहीं सकते। बहुत गुणा हो जायेगा तो कहाँ धर रखोगे? दान के रूप में दिया गया धन एक-एक पाई गुणित क्रम से सुरक्षित

रहेगा।

जब तक रहोगे साथ ही बना रहेगा। यदि आप निश्चिंत होकर दान देंगे तो आपकी चंचला लक्ष्मी को अचला लक्ष्मी बना देगा। स्थायी लक्ष्मी होती है फिर देखो - मोक्ष लक्ष्मी भी उसके साथ आना चाहती है। आप चाहते हो कि नहीं ? [हओ] "ये बुन्देलखण्ड की हओ है इच्छा नहीं है।" यहाँ पर बिना कहे - बिना बताये ही दानपेटी में डाल देता हैं। सुनते है दानपेटी (तिजोरी) जब खोलते हैं तो बड़े-बड़े नोट भी निकलते हैं।

इसलिए इस चंचला लक्ष्मी को कोई भी (समझदार) हाथ नहीं लगाना चाहता है अपितु मोह का त्याग करना चाहता है। ये आप सब के लिए बहुत अच्छा अवसर है। "मनुष्य जीवन में ही दान होता है, देवों का दान दान नहीं माना जाता और तिर्यञ्चों में भी इतना नहीं।" मोह का त्याग करना बहुत कठिन है। अच्छे-अच्छों को पसीना आ जाता है। आगे-पीछे देखना पड़ता है।

गिनते-गिनते ही नोट चिपक जाते हैं। ये ही मोह है महाराज। मोह का त्याग करेंगे तो इस विपत्ति से हमेशा-हमेशा के लिए बच जायेंगे। इसी का नाम मोक्षमार्ग है एवं इसी का नाम मोक्ष है।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

रात्रि विश्राम - २७ मील  दर्शन - कोनी जी अतिशयक्षेत्र

पाटन

18-3-19 "असली ट्रस्टी बनो" प्रातः

सुनो! मोबाइल बंद कर दो। आज माइक भी अच्छी बोल रही है ताकि सब लोग सुन सके और अपनी गलती समझ सके। आज का हमारा विहार कुछ समय के लिए कुछ लोगों को अच्छा नहीं लगा। हमने सोचा पाटन में जाकर सब अच्छा हो जायेगा। कभी-कभी ऐसी मंत्रणा करना पड़ता है ताकि सब समझ सके। समझ तो गये ही हैं कि हम गलती कर गये। इतना पर्याप्त था। "दण्ड नहीं ये तो चढ़ावा है।"

भगवान के सामने दण्ड नहीं होता। विलम्ब से चढ़ा दिया। ये बात अलग है अब ब्याज सहित चढ़ा देंगे। देखो श्रेष्ठीजी ने क्या-क्या चढ़ाया। आप लोग ऐसे ही हा-हो करते हैं। उन्होंने क्षेत्र के लिए अचल सम्पदा किसी ने 20 किसी ने 10 तो किसी ने इक्कड़ भूमि दान दे दी। चढ़ा दी ताकि क्षेत्र का अच्छे से प्रबन्धन होता रहे। पहले के लोग प्रबन्धन अधिकार के लिए नहीं करते थे।

सुन रहे हो आप? (हाँ) प्रबन्धन अधिकार के लिए नहीं सेवा के लिए करना ताकि आगे की पीढ़ी भी उसका अनुसरण कर सके। बच्चे भी क्षेत्र से जुड़े रहें। ऐसे ही जवान-जवान बच्चे अभी यहाँ आकर ट्रस्टी बनें। ट्रस्टी का अर्थ क्या? विश्वासपात्री। मालिक नहीं ट्रस्टी का अर्थ है सेवा करने वाला, जिस पर

सबको विश्वास हो।

वह भी यही मानता है कि हम सेवा के लिए नियुक्त हुये हैं। जब तक इस तन में प्राण है तब तक सेवा करेंगे फिर अपनी सन्तान को भी इसी सेवा में लगा देंगे। लगान जानते हैं आप? अपने बच्चों को लगान के रूप में सेवा देंगे। इसीलिये हम आये हैं, नहीं तो सीधे ही बढ़ जाते। समय ज्यादा ही हो गया। हमें भी ज्यादा नहीं कहना थोड़े में ही समझ जाते हैं आप लोग। समझदार हैं न।

कोनी जी की सेवा करने वाले ही तो यहाँ बैठे हैं। हम उत्कर्ष से देख रहे थे कि ये क्या करते हैं? सुना है चुनाव भी होना है। इसीलिए सब खड़े हैं, कोई बैठना चाहता ही नहीं। दो महिने की आचार संहिता लगी है। हमारी आचार संहिता कोई नहीं सुन रहा फिर भी हमने सोचा चुटकी बिक जायेगा, बाजार के दिन ही होता है यह।

आज नये सेवकों को भी अवसर मिल गया। अब पुराने लोगों को जाग्रत हो जाना चाहिए। अब हूँ-हाँ-ना कुछ भी हम सुनेंगे नहीं। ऐसी सेना तैयार हो गई है, वह रुकने की तो बात ही नहीं करेंगे।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

रात्रि विश्राम - शाहपुरा ०५/१२

शाहपुरा (भिलवाड़ा)
19-3-19 "भक्ति करो कुछ ऐसी" प्रातः

अभी मैं सोच रहा था ये सारे के सारे कौन से जगत में डूब गये पता ही नहीं। "भक्ति ऐसी ही वस्तु है जिसमें भगवान और भक्त दोनों एक जैसे हो जाते हैं।" स्वामी समन्तभद्र महाराज जी ने कहा - जिस शुद्धोपयोग के माध्यम से आप भगवान बने इसमें कोई संदेह नहीं, हम सब आपकी भक्ति करते हुये भी निश्चित एक दिन भगवान बन जायेंगे। ये उनकी भगवद् भक्ति के लिए अनमोल चिंतन है।

इसमें कोई संदेह नहीं भक्त जब भगवान की भक्ति में लीन हो जाता है तो वह स्वयं को भगवान समझ लेता है। वह तो यही मानने लगता है कि ये उनका काम है वे जब चाहेंगे तब भगवान बना देंगे। बहुत अच्छा है। पगडंडी से ही जाया जाता है मंजील तक। अभी हम जब आ रहे थे तो खूब लम्बा-चौड़ा पथ बना था (राजमार्ग) गाड़ियाँ उस पर से जा रही थी पर हम तो पगडंडी से ही आ गये।

बड़े-बड़े रोड़ कब जाम हो जाते हैं पता तक नहीं लगता, हमारी पगडंडी से चलोगे जाम का काम नहीं और पहले ही पहुँच जाओगे। यही हम कहना चाहते हैं "भक्ति शक्ति से ही काम नहीं होता युक्ति एवं भक्ति से काम हो जाता है।" अभी बोली हो रही थी ऐसा लग रहा था कोई भी यहाँ रुकेगा नहीं। भावनायें सबकी हुआ करती हैं। (यहीं

उदिन का काम है)।

जब एक बन्दे में काम हो जायें तो उ दिन क्यों दें। समय का उपयोग किया करो। समय बचाना तो अच्छा है। फिर हम ऐसे लोभ में क्यों पड़े। जब आप लोग उदारता से दे रहे हैं तो लोभ क्यों करेंगे। हाँ, आप यदि डबल करें तो और अच्छा (दान) दुकान चलाना सीख लो हमसे।

शान्ति - outdoor मान्दिर - मगध्यमऊ अहिंसा परमो धर्म की जय हो

Notes -

- शब्दों को तोड़ने एवं भावको को जोड़ने से अर्थ निकलता है।

"पूज्यसागरजी"

- एक बार रायता फिर दस बार चिरायता
- बड़ा रिलेक्स मिलता है अपना पिलेक्स देखने पर

"निर्यापक श्रमण पूज्य योग सागर जी"

- गुनाहगारों को गले लगा देख बेगुनाहगार कह उठे कि हमने भी गुनाह किया है।

विनम्रसागर जी

"प्रथम बार विदिशा प्रवेश होली पर"

"प्रवेश की अभूतपूर्व तैयारियाँ, तोरणद्वार - मंच - बंधनवार से सजाया। गुरुजी के मन में आया होली में कैसे टिक पायेंगे ये सब। पर एक भी जैनेत्तर बन्धु ने किसी व्यक्ति अथवा वस्तु पर रंग नहीं डाला अपितु सब ने अपने-अपने घरों के बार चौक पुर के दीपक जलाये इस प्रकार होली भी दिवाली में बदल गयी।"

सहजपुर
२०-३-१९ "स्कूल नहीं विद्यालय खोलो" प्रातः

कई स्थानों पर पूर्व भूमिका बनाकरके, कठिन परिश्रम करके कोई भी धार्मिक अथवा सामाजिक कार्यक्रम किये जाते हैं। कुछ ऐसे भी स्थान होते हैं जहाँ विशेष परिश्रम अथवा प्रचार-प्रसार की आवश्यकता नहीं पड़ती है, उसका नाम 'सहजपुर' है। सहज ही सब कुछ हो जाता है। यह पूर्व भूमिका की बात की चुंकि यह राजमार्ग पर नगर अथवा कस्बा बसा हुआ है। कहने को यह गांव जैसा है किन्तु अनेक गांवों का काम यहाँ हो जाता है।

धार्मिक वातावरण हमेशा बना ही रहता है। यहाँ के श्रावक लोग भी प्रतिदिन अपने दैनिन्दनी कार्यक्रम की शुरुआत वीतराग भगवान की पूजा-आराधना इत्यादि से करते हैं और सोते समय में भी उन्हीं को याद करते हैं कि हमारा यह धर्मध्यान छुटे नहीं - अन्तराल न पड़े - निरन्तर चलता रहे। जैसे मेरे जीवन में बना रहा वैसे ही आगे आने वाली पीढ़ी में भी यह निरन्तरता बनी रहे। उन्हें भी प्राप्त होती रहे।

ऐसी भावना करते हैं ताकि भव-भव में जिसे प्राप्त नहीं कर पाये उसकी भूमिका बन सके। विदेशी हवा से कुछ ऐसे तत्त्व यहाँ घुस आये जो भारतीय संस्कृति के लिए खतरनाक हो गये। पहले भारत-वासियों को भी यह ज्ञात नहीं हो पाया था किन्तु अब तो

तो ज्ञात हो गया।

"ज्ञात हो जाने पर तो बिना कहे ही छोड़ देना चाहिए।" भारतवासी समझ गये हैं कि विदेशी हवा के कारण यह गाते हो गयी। "हम किसी को प्राण दे नहीं सकते पर प्राणवायु तो दे ही सकते हैं।" उस प्राणवायु में भी गड़बड़ी हो गयी है। फिर भी यही भावना आना चाहिए कि उसके प्राण निकले तो वह भी परमेश्वर को याद करता रहे। "अन्तमता सो गता"। ऐसी आराधना वरदान सिद्ध हो जाती है।

ऐसी ही आराधना कल शहपुरा में जहाँ 108 हथकरघा की स्थापना होना है। वहीं विद्यालय की भूमिका भी बन गयी। अभी यहाँ भी विद्यालय की बात आयी, पहले तो सभी स्थानों पर विद्यालय ही चलते थे। आज स्कूल खुल गये। क्या कूल है पता ही नहीं। हम पढ़ते थे तो बच्चों का अलग एवं कन्याओं के लिए अलग व्यवस्था रहती थी। अब दोनों मिल गये तो परिणाम देखलो क्या हो गया।

"जिन-जिन साधनों से बच्चों के संस्कारों में कमी आये उन्हें बाहर फेंक देना चाहिए" सोचना चाहिए क्या-क्या कमी आ गयी है। ऐसे भूतों को तुरन्त बाहर निकाल देना चाहिए। घर में भूत कोई नहीं रखता। ऐसा ही एक भूत है-मोबाइल। इसको बाहर की हवा लग गयी है। प्रतिभा सम्पन्न बच्चे भी इसके

कारण सब खो दिये हैं।

बच्चे माता-पिता, भाई-बहन, सगे-संबंधी सबको भूल गये है। संस्कार समाप्त होते जा रहे हैं। ऐसा न हो कि एक दिन बताना पड़े-बेटे-ये मामा है-ये नाना है। स्कूल में ऐसे संस्कार नहीं विद्यालय में ऐसे संस्कार मिलते हैं। जो 500-600 बच्चे थे उनके बारे में सोचा। यहाँ "भारतीय कन्या विद्यालय" के नाम से स्थापना होगी।

इसी प्रकार बालको के लिए भी भारतीय विद्यालय की स्थापना होगी। जमीन भी दान में मिल गयी है। इससे तो एक पंथ-दो काज नहीं 200 काज सिद्ध होंगे। इतना ही कहकर अपने सहज वक्तव्य को समाप्त करता हूँ।

रात्रि - जबलपुर आउटर अहिंसा परमो धर्मकी जय।

"बाबा जी की समाधी"

20.3.19

"आज प्रातः बावनगजा से ब्र. सुनील भैया के पास विडियो कॉल से फोन आया कि बाबा जी अचेत जैसे है। संयोग ऐसा ही नेमावर से विधान में प्रमाणसागर जी के पास पहुँचे, उन्होंने स्वास्थ्य खराब होने से वहाँ णमोकार मंत्र सुनाते हुये समाधी कराई। वहाँ दोनो महाराज यहाँ हम गुरुजी के पास ही वैय्या वृत्ति कर रहे थे। गुरुजी ने कहा- क्षेत्र सिद्ध क्षेत्र है- चातुर्मासिक अष्टाह्निका पर्व की चतुर्दशी दिन बुधवार सब अच्छा होता है।"

जबलपुर मढ़िया जी (हाल)

21-3-19 "लेमिनेशन नहीं पक्का रंग चढ़ाओ" प्रातः

आप लोगो की भावना हो सकती है तो हमारी भी भावना हो सकती है। आप लोग होली खेल सकते हैं तो हम क्यों नहीं खेल सकते। बस! आपका रंग अलग हमारा अंतरंग अलग है। हमने सोचा ये मौका है चूको नहीं। इसीलिए प्रतिदिन फिर भी थोड़ा देरी से किन्तु आज तो 6.30 बजे ही चलो। हम जल्दी-जल्दी निकल गये, आप लोग विलम्ब से आये। आप प्रतिक्षारत रहे। अब देखो यहाँ पर- नन्दीश्वर द्वीप पूरा का पूरा डूब रहा है।

यह पिसनहारी का क्षेत्र इतना स्थान निकाल लिया फिर भी जनता तो डूब रही है। अभी और बड़ा करना होगा। दयोदय का विस्तार तो होगा ही। सब जगह विकास हो रहा है तो धार्मिक भावों का भी विकास हो रहा है। ऐसा लग रहा है सभी लोग भगवान के भावों में रंगने को आतुर हो रहे हैं। मैं अकेला हो गया ऐसा है ही नहीं।

चारों ओर जहाँ से भी आ रहा हूँ, वहाँ यही हाल है। जैनियों को सोचना चाहिए कि धर्म मात्र जैनियों का ही नहीं- "धर्म तो उसका है जो उसको अपनाता है।" भगवान के नाम पर जो हिंसक है वह भी अहिंसक बन सकता है। इसलिये मैं कह रहा हूँ कि यह बहुत विकास का काल आ गया

है, विश्व भी इसे स्वीकारता है।

भारत में ऐसी क्या खास बात है जो पूरे विश्व में नहीं हैं? यहाँ पर बहुत कुछ है जिसे देखकर आंखे तृप्त हो जाती हैं। वह आचरण का रंग आपको भी रंगने को आतुरित कर देता है। ये सब बाहर के रंग आतुरता पैदा करने वाले हैं, हम भीतर के अंतरंग की बात करते हैं। उस अंतरंग के बारे में सोचें। केवल अपने ही नहीं दूसरों के अन्तरंग तक पहुँचने का प्रयास करें।

आप देख लिजिए आपकी तरह दूसरे के अन्तरंग में भी वही तत्त्व है। परमात्मा स्वयं कह रहे हैं कि आप के भीतर भी वही है जो मेरे भीतर है। बस यदि सही ज्ञात हो जाये तो मथानी से नवनीत निकालने को आतुरित हो जायेंगे। क्यों सही है न? हओ तो बोलो? हमारे कहने से बोल रहे हो। बच्चों की तरह बुलाना पड़ता है। बीच-बीच मैं बुलवाता रहता हूँ।

हओ का आनंद कुछ अलग ही है। किन्तु मैं हओ नहीं कहता। हमारे हओ कहलवाने के लिए बहुत प्रयास की जरूरत होती हैं। दो महिने के लिए कैसे हओ कह दें। अभी गर्मी चालु भी नहीं हुई है। दो महिने भूल जाओगे। देखो मांग आने लगी। दो महिने-4महिने नहीं हमें तो चातुर्मास के साथ

चाहिए।

ध्यान रखो "भगवान भी अब भगवान बन जाते है तो यहाँ से रवाना हो जाते हैं।" इसी तरह हम भी आते हैं और चले जाते हैं। 3 वर्ष में लगातार 3 बार प्रवास के दौरान बीच में जबलपुर आया हूँ। अबकी बार क्या होता है - देखो ? जिज्ञासा बनाये रखो। अभी कह रहे थे - ताली बजाओ। अब देखो - सारे के सारे हाथ उठ गये। हमारा वाक्य पूरा भी नहीं हो पाया।

संभावना प्रत्येक के भीतर विद्यमान है। मूकमाटी में यही कहा है - बेटा संभावना सभी में अनगिनत रहती है, बस भावना रखो कि वे सारी की सारी संभावनायें प्रभावना के रूप में परिवर्तित हो जाये। प्रभावना यदि चाहते हो तो "मैं ही सब कुछ नहीं, सभी लोग सब कुछ है।" मुझमें और सामने वाले में कोई अन्तर नहीं।

जब दोनों में समानता आ जायेगी तो फिर चुनाव की कोई आवश्यकता ही नहीं रहेगी पहले ऐसा ही भारत था, अभी भी हो सकता है। बस जीव मात्र के प्रति ऐसी भावना हो जाये। मैं देख रहा था आपकी भूख काफी बढ़ चुकी है अब ज्यादा देर भूखे रखना भी अच्छा नहीं। समय पर भोजन

कराना चाहिए।

भोजन कराने वाला अपने हाथ को ढीला नहीं रखता। क्यों कि मंदी (मंदाग्नि) होना ठीक नहीं माना जाता। ऐसा नहीं कि घी-घी खा लें और खिचड़ी रख दें। मन तो कभी भरता ही नहीं। पेट भरना हम जानते हैं। ज्यादा भरपेट भी भोजन नहीं इसीलिए एक कौन खाली छोड़ देते हैं ताकि शरीर स्वस्थ-सशक्त और पुष्ट बना रहे।

आत्मा में अनंत शक्ति है वह जाग्रत हो जाये। बस माला फेरते रहो। महाराज ये तो माला ही फेरते हैं। कौनसी? आपकी। हम भी आपही (स्वयं) की माला फेरते हैं। आपही (अपने) आत्म तत्व को भूलने के कारण ही ऐसा हुआ है। एक बार वह उद्घाटित हो जाये तो सब काम हो जाये। इसी भावना के साथ - आज प्रारम्भिक दिन है।

हमने तो वृंदावन की होली भी देखी है। चला कर गया था। सबने कहा - ये बाबा तो अलग ही हैं - इन पर कोई रंग चढ़ता ही नहीं। हमारे पास से ऐसा रंग मिलेगा जो पक्का रंग है। गारन्टेड है। उस रंग के बाद आपके सब रंग मिट जायेंगे। आप चाहते हैं? हमारी कीमत उसकी जो इकट्ठा किया सारा का सारा देना होगा। "ये मिशन नहीं पक्का रंग चलाओ।" सुन रहे हो? हमारी इसी के साथ ये छोटा सा वक्तव्य समाप्त करते हैं।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

प्रतिभास्थली - जबलपुर
22-3-19

## क्रोध को कैसे शांत करें?

प्रातः

देखो आप लोग प्रतिदिन अपने उपयोग में लाने वाले जल को कभी ठण्डा-कभी गरम करते रहते हैं। पानी को गरम करते हैं चूंकि वह ठण्डा रहता है। अग्नि के सम्पर्क में जितनी देर रहता है वह गरम रहता है नहीं तो पुनः ठण्डा हो जाता है। अब देखो उस जल में ऐसा परिवर्तन भी ला सकते हैं। पानी को बर्फ के रूप में परिवर्तन कर दिया। अब दुनिया का सारा ईंधन भी जला दो तो भी वह बर्फ गरम नहीं होगा। तुम तो झट-झट गरम हो जाते हो।

अभी यहाँ आचार्यों के 36 मूलगुणों में तीन गुप्तियों के अर्घ्य चढ़ाये। ऐसे आचार्य जो होते हैं उन्हें गुस्सा भी दिलायें तो वे गुस्सा को भी जला देते हैं। वे गुस्सा को पी जाते हैं। सामने वाला सोचता है - क्या खा गये ये? आग को भी पीये जा रहे हैं, ऐसा न हो कहीं हमको भी पी जाये। वह शांत हो जाता है। आप भी सामने वाले को शान्त कर सकते हैं यदि उसके गुस्से को पी जाये तो। जैसे गरम-गरम चाय को पीते हैं। सामने वाले के वचन गरम हैं तो भी पी जाते हैं।

अभी से ही सीख लो। यह कामकार मंत्र से भी बड़ा मंत्र है। आपके विद्यालय (प्रतिभास्थली) में सीखाया जाता है कि नहीं? [जी आर्यिकाजी] बहुत अच्छी बात। दुनिया आप लोगों की ओर ही देख रही है। आप सबको निष्णात होना चाहिए।

अहिंसा परमो धर्म की जय/जुँ

23-3-19 "भावना हो - चाहना नहीं" प्रातः

आप लोगों ने बहुत दिन से पूजन की होगी, कर रहे हैं, आगे का भी संकल्प है। उसमें एक और ध्यान देने की बात है - यह जो पूजन करते हैं अथवा अन्य कोई भी धार्मिक कार्य करते हैं उसके द्वारा अवश्य ही पुण्य बंध होता है। तो फिर उस बंधे हुये पुण्य कर्म की निर्जरा भी करें? नहीं। उससे भी ज्यादा पुण्य का बंध होता रहता है तथा पाप की निर्जरा होती रहती है। ये दोनों कार्य एक-दूसरे के विरोधी हैं फिर एक साथ कैसे होते हैं? यही तो ध्यान देना है।

एकान्त से भावों के द्वारा मात्र पुण्य कर्म का बंध ही नहीं। पाप कर्मों की निर्जरा एवं पुण्य का बंध दोनों नियम से होते हैं। इसे टाल नहीं सकते। इतना अवश्य है कि पूजन कर्ता मुझे यह फल मिलो - मुझे ऐसा मिले तो शास्त्रकारों ने कहा - सावधान हो जाइये। जिसके द्वारा कर्म की निर्जरा हो रही है - पुण्य का बन्ध तो होता ही जायेगा।

फिर चाहते क्या हो? ये बताओ? इतना ध्यान रखें पूजन के बदले अथवा पुण्य के बदले सांसारिक फलों की इच्छा न करें। यह आपकी परीक्षा है। आप परीक्षा में पास होना चाहते हैं न? पक्का है? अध्ययन किया है तो पास होंगे ही। बिना अध्ययन के आशीर्वाद के माध्यम से पास होना चाहते हैं, ये सही नहीं है। इसे

पेपर में लिख लेना।

मोक्षमार्ग में भी हमारा प्रत्येक कार्य पुरुषार्थ पर आधारित होता है। आप भी पुरुषार्थ करें। इच्छा के साथ कर्तव्य भी करें। कर्त्तव्य में कभी भी प्रमाद न करें। ऐसा नहीं कि जब परीक्षा का समय आये तो भगवान के दर्शन - पूजन प्रारम्भ हो जाये। नहीं प्रतिदिन का पुरुषार्थ होना चाहिए, साथ ही आपका सद्भाव आपको आगे बढ़ाने वाला होता है।

ये बात हमेशा याद रखना चाहिए। गृहस्थ धर्म में तीन पुरुषार्थ धर्म-अर्थ और काम अनिवार्य बताये। प्रत्येक कार्य में इन तीनों पुरुषार्थ से ही चल सकता है। इसी से पुरुषार्थ संज्ञा फलीभूत हो जाती है। भावों में हमेशा ये ही रहे कभी भी सांसारिक फलों की इच्छा न रहे। एक मात्र इच्छा है तो वह है- "वन्दे तद् गुण लब्धये अहं" जो भगवान आपके गुण हैं वही मुझे भी प्राप्त हो जायें।

ये ही भाव भाव रखें जाते हैं। यह निदान नहीं, सांसारिक इच्छा/कामना होना निदान है। हम सभी उन गुणों की प्राप्ति के लिए ही पुरुषार्थ कर रहे हैं। ये भी है कि उन गुणों की प्राप्ति कहीं बाहर से नहीं होती, वे हमारे भीतर हैं उसे विकसित कर रहे हैं। अभी सदोष है उनका उद्घाटन हो जाने पर अभिव्यक्ति हो जाती है। हमारा यह पुरुषार्थ शत-प्रतिशत हो। यही

भाव रखना है।

वांछा नहीं रखना है। हाँ! कुछ आलम्बन लेकर सामग्री चढ़ाई जाती है भावना यही है बदले में कोई चाहना नहीं है।

अहिंसा परमो धर्म की जय। नुँ इतना अवश्य है कि इस समय एकान्त एवं शान्त रहकर आनन्द लिया करो। बाकी समय तो हो-हल्ला करते ही रहते हो। इतने समय तो जैसे गैय्या शांत रहती है वैसे शांत रहें।

गुरुवाणी →

- "वसुधैव कुटुम्बकम्" → धरती मात्र एक परिवार है। इसलिए लोकतंत्र की बात करते हो पहले नागरीक की बात करो।
- शिक्षा व चिकित्सा किसी भी नेता के माध्यम से न दें, महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय या चिकालय नेता न चलायें।
- विदेशी भाषा, विदेशी पाठ्यक्रम, विदेशी संस्कृति, विदेशी खान-पान न होकर सब देशी हो।
- न्यायालयों में भी बोलना देशी भाषा में हो।
- गांधी जी देशी भाषा के पक्षधर थे परिणाम खुब भीड़ आती थी। नेहरु जी के पास कोई नहीं आता था। गांधी जी कहते थे- मूल को पकड़ो।
- देवों को मत देखो वे अधर में रहते हैं आप तो आधार सहित हैं। निराधार देवों (विलासिता पूर्ण विदेशी जीवन) को देखोगे तो यही दशा होगी।

रविवार
२५-३-१९ "सत्य तो यही है" प्रात:

समय काफी हो गया है, आप लोग लगातार एक घण्टे से बैठे हैं। मध्याह्न में और आना है। आज रविवार भी है। मैं भी संक्षेप से ही आपको एक-दो मिनिट संबोधित करता हूँ, आपको बहुत अच्छा लगेगा। एक गुलाब का पौधा है और उस पर कई कलियाँ भी हैं। कुछ कलियाँ खिली हुई हैं। एक कली कहती है तुम तो खिल गये हो जिससे अपनी खुशबु-अपनी मकरन्द को बिखेर रहे हो। मेरा भाव है वह समय कब आयेगा जो अपनी महक से मैं भी इस वातावरण को सुगन्धित कर सकूंगी।

बार-बार तुम्हें देखने से मेरे मन में ये विचार आता है। एक दूसरी कली ने कहा तुम्हारे साथ जो खिल तो गया है पर वह भाव क्यों नहीं कर पाता। कली ने फिर पुछा - आप भी तो खिल गये हो फिर आनन्द क्यों नहीं आरहा। इसमें रहस्य क्या है?

वह कहती है बेटा तुम्हे भी यह अवसर प्राप्त होगा। किन्तु तुम्हारी दृष्टि यहीं तक है क्यों कि तुम केवल ऊपर ही देख रहे हो जरा नीचे भी तो देखो। जो खिले फूल थे वे टूटकर धरती पर आ विराजमान हो गये। नीचे जाने की अपेक्षा जल्दी-जल्दी ऊपर चले जायें। ऐसे भाव रखकर हम भी भगवान के चरणों में चढ़ जायें।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

रंग पंचमी

25-3-19 "श्वासों का क्या भरोसा" प्रातः

सुनने में आता है किसी एक व्यक्ति के विषय में उसने अपनी अन्तिम श्वास को स्वीकार कर लिया। इसका अर्थ क्या हुआ? उसने अपनी अन्तिम श्वास को स्वीकार कर लिया मतलब अभी जीवन चल रहा है अथवा दूसरा अर्थ यह भी होता है कि उसका जीवन समाप्त हो गया। दोनों ही बातें हैं। मतलब अब दोबारा श्वास नहीं लेगा, अन्तिम श्वास छोड़ दिया इसके उपरान्त ग्रहण नहीं करेगा। ये सब क्या है? समझो।

"बाहर में जो श्वास ले रहे हो विश्वास रखो अगला श्वास ले सकेंगे या नहीं ले सकेंगे इसका कोई ठिकाना नहीं।" प्राण वायु सब जगह भरी हुई है पर वह अपने काम नहीं आने वाली। हम ग्रहण करेंगे तभी वह काम में आयेगी। ग्रहण करने की क्षमता नहीं तो कोई काम की नहीं। इसलिए कृत्रिम श्वाच्छोश्वास का प्रयोग किया जाता है- चिकित्सा में।

कृत्रिम का मतलब क्या? (आर्टिफिशियल) ये तो आपने इंगलिश कर दी। भीतर उसकी क्षमता नहीं थी उसको कुछ समय के लिए क्षमता प्रदान कर दी। अब उसके पास श्वास लेने की क्षमता नहीं हो तो फिर चाहे वज्रऋषभनाराच संहनन भी क्यों न हो, वैक्रियिक/औदारिक

कोई भी शरीर क्यों न हो कुछ नहीं होगा।

एक-एक श्वास लेकर छोड़ने की प्रक्रिया जाग्रत अवस्था में भी एवं स्वप्न में भी आप देख सकते हैं। स्वप्न भी दो तरह के होते हैं: एक दिन का स्वप्न, एक रात का स्वप्न। मैं ऐसे श्वास ले रहा हूँ और छोड़ रहा हूँ यह प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है। यदि अन्तिम श्वास हो गया तो क्या करोगे? झटका लगेगा। जो भी सोचा है सब धरा रह गया।

शरीर सोता है तो सोता ही रह गया। भाग रहा है तो भागता, चल रहा है तो चलता ही रह जाता है। कुछ भी करता रहे, वहीं विराम हो जाता है। आप पूरे जीवन को देखना चाहे तो वह लम्बा-चौड़ा होता है। जो संयमी जीवन वाला होता है वह अपने एक-एक श्वास को देखता रहता है। घड़ी का काटा होता है वह आगे बढ़ गया तो आगे ही रहता है पीछे नहीं हो पाता। कभी हमने सुना था- देखा भी है घड़ी पीछे रह गयी तो उसको मिला दिया गया किन्तु घड़ी आगे बढ़ गयी अब आपने उसे पीछे कर दिया वह बंद हो गयी।

ऐसा क्यों हुआ? ये स्वभाव है उसका वह आगे तो बढ़ सकता है पर पीछे नहीं जाता। जितना आयु कर्म है उतने ही समय यह शरीर रहेगा, अर

हो प्रणवायु से जगत भरा रहे।

दीर्घ संहनन भी कोई काम का नहीं रहेगा। ये सिद्धान्त है और सिद्धान्त तो सिद्धान्त होता है। सिद्धान्त में औपचारिकता नहीं होती। पुरुषार्थ यही है इस प्रक्रिया को समझ लें। हम देखते हैं- ये गतिविधियाँ हो रही है- ये गतिविधियाँ हो रही है पर ये सब किस आधार पर हो रही है। इसे विश्वास के साथ समझना चाहिए। घड़ी के कांटे चलते हुये दिख रहे हैं पर वे किस आधार पर दिख रहे हैं।

इस बात का दृढ़ श्रद्धान बनाकर अपना कर्त्तव्य कर लो। घड़ी की ओर देखकर भी अपने कर्त्तव्य की ओर देखो। वह घड़ी तो औपचारिक है। करने योग्य जो कार्य है वही कर्त्तव्य है। तब हमें लगेगा कि हमने एक-एक क्षण का सदुपयोग किया है। फालतु शुद्ध नहीं किया, जो नहीं करने योग्य था वह नहीं किया। यह निश्चित है संसार में कर्त्तव्य से विमुख रहकर बनता नहीं।

कितना भी कर लो। एक मिनिट आप प्रमाद से दुर रहेंगे तो दो मिनिट प्रमाद में देना अनिवार्य है। मतलब आप बुद्धिपूर्वक भी एक तिहाई ही उपयोग कर सकते है, दो तिहाई फालतु रह गया। फालतु चले जाने का हिसाब-किताब ज्यादा है और काम करने का हिसाब-किताब बहुत कम। उसमें भी निद्रा में जब चले जाते है तो काम नहीं करते। अर्थात

चले जाने का हिसाब लम्बा है।

बहुत कम शक्तिकायें ही हमारे काम में आती हैं। आचार्य कहते हैं कि ये पर्याय ही ऐसी है। इसका भी उपयोग कर लो तो भी भाग्यशाली माना जाता है। "हम कर कुछ भी नहीं सकते श्रद्धान भर बुद्धिपूर्वक कर सकते हैं।" इस पर हमारा अधिकार है बाकी सब गतिविधीयाँ घड़ी में चाबी की तरह हैं - सब उसी अनुसार चलेगी। चाबी पूरी हुई कि कांटे वहीं की वहीं रुक जायेंगे। रुकना निश्चित है।

जिस पर आधारित था वह विराम पा गया। हमें उसी अविनश्वर तत्त्व को बुद्धि में रखकर अपने आप को उस ओर ले जाने का प्रयास करना है। नहीं भी आये तो भी श्रद्धान तो कर ही सकते हैं, यूं कहे वह आ ही जाता है। उस श्रद्धान को मजबूत बनाये। उसी पर आगे की सारी गतिविधियाँ चलने वाली है। हमारा कुछ भी वश नहीं चलता बस हम Break (ब्रेक) लगाने का काम तो कर ही सकते हैं। ब्रेक लगाने से एक्सीडेन्ट से तो बच ही जायेंगे।

हम लोग देखते हैं - डार्क रोड पर कोई वाहन जा रहा है वह यहाँ Break लगाया 100 मीटर तक घसीटता हुआ जाकर रुक जाता है। ऐसा क्यों हुआ? तो यह सिद्धान्त है। एकदम से गति को रोक नहीं सकते। धीरे - धीरे कर सकते हैं। इसी के

कम से दुर्घटना से बच सकते हैं।

(अपनी गाड़ी को संभालना चाहते हो तो पेट्रोल एकदम से फूंको नहीं। धीरे-धीरे करोगे तो रास्ता पार हो जायेगा। कुछ ऐसी क्षणिकायें (पल) भी आती है जब बुद्धिपूर्वक हमारा कुछ भी बस नहीं चलता। कर्म का ऐसा योग आता है। जो तैराक होता है वही उसको पार कर पाता है जो तैराक नहीं है वह पार नहीं हो पाता।

किन्तु यदि बहाव तीव्र (तेज) हो तो फिर तैराक भी उसमें फेल हो जाते है वह भी उस समय पार नहीं हो पाता। इस प्रकार हम बहुत बरतन्न है। आप लोग एक दिन मात्र 15 अगस्त को ही स्वतंत्रता दिवस के रूप में याद कर लेते हो। ये तो प्रतिपल याद रखने की बात है। अपने कर्तव्य को याद रखो कालतु न बैठो। इतना ही पर्याप्त समझता हूँ।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

सुभाषणी -

- सकल संयम की अभिव्यक्ति के कारण ही श्रावक साधु को नवधा भक्ति पूर्वक आहार दान देता है।
- व्याकरण में विभक्ति का बहुत महत्त्व है। विशेष भक्ति करना ये ही विभक्ति है।

विशेष प्रवचनांश

25-3-19 "एकल परिवार को दिया संबोधन" मध्यान्ह

- जैसे नदी बहती है सर्वत्र एक सी नहीं रहती, कहीं पहाड़ आदि आ जाते हैं तो उसमें भेद हो जाते हैं किन्तु भेद के बाद भी वह एक है। यही भेद हमें भी भेदविज्ञान की शिक्षा देता है।
- आज देश तो पर उद्देश्य नहीं है।
- स्मार्ट सीटी नहीं स्मार्ट विलेज की बात करो।
- हिन्दी-संस्कृत में तो मंत्र है पर इंगलिश में कोई मंत्र नहीं है।
- जो इंगलिश के बिना उद्धार नहीं ऐसा मानता है उस नेता को मैं स्वीकार नहीं करता।
- संगीत का लय ही ज्यादा हो जाये तो गीत का विलय होना निश्चित है।
- प्रलय में भी संगीत का लय साहस प्रदान करता है।
- यदि नागरिक नहीं बना पा रहे तो नगरों को बसाने से क्या लाभ?
- क्रय-विक्रय के जमाने में विद्या भी आज बिक रही है।
- Skill शिक्षा मतलब कौशल विकास = कुशल का अर्थ क्या? "कुशम् स्यति इति कुशलम्" गणेश महोत्सव आदि के समय कुंड से पानी छींटते हैं वह कुश (हर कोई नहीं ला सकता। पवित्र काम करने वाला कुशल है) आज तो भाग कर खाने या चोरी करने वालों के लिए भी कुशल शब्द प्रयोग हो रहा है।

26-3-19 "बोहो लौकिन मान्यु कितनु?" प्रातः

अपने यहाँ जो तीर्थंकर होते हैं वे विशेष रूप से अपने जीवन में साधना करते हैं। वही साधना सभी मुनिमहाराज जी करें ये कोई नियम नहीं। उनमें से एक साधना आपके सामने बताना चाहता हूँ। जब तीर्थंकर को केवलज्ञान प्राप्त हो जाता है वे समोशरण में विराजित होते हैं तो सभी जीवों के हितार्थ उपदेश करते हैं। उपदेश का समय निश्चित रहता है। दिव्यध्वनि के माध्यम से यह उपदेश होता है। एक व्यक्ति बोलता है और असंख्यात देवी-देवता तथा पशु-पक्षी, मनुष्य-तिर्यञ्च आदि सुन लेते हैं।

"दिव्यध्वनि हमेशा के लिए नहीं रहती वह एक अतिशय है।" जब योग निरोध करना होता है जो होता तो मात्र अन्तर्मुहूर्त के लिए है पर सभी तीर्थंकर कोई एक माह कोई एक हफ्ता कोई १० दिन पूर्व अपनी वाणी को विराम दे देते हैं। हमें सोचना चाहिए इसकी क्या आवश्यकता है। वो तो तीर्थंकर हो गये उनकी दिव्यध्वनि वैसे भी किसी जीव को कोई आघात नहीं पहुँचाती। अपनी वाणी से तो आघात होता है।

कई बार तो ऐसे कर्कश शब्द वानों में पड़ते हैं- सुनने वाला कह देता है भाई साहब अब बंद कर दो। ऐसा भी सुनने में आया है। [शान्तिसागर जी महाराज का संघ-शिखर जी के समय मा] मुनिमहाराज का संघ आया। भीड़ भी अपार आ गयी तो उन्होंने (आचार्यश्री ने) चार कोनों में अलग-अलग

संघस्थ
चार महाराजों को बैठा दिया।

प्रवचन शान्ति के साथ सम्पन्न होता था। किन्तु आज वर्तमान में यह ध्वनि-प्रसारण यंत्र आ गये हैं, जिसके कारण अड़ोस-पड़ोस में भी बहुत कुछ हरकतें होने लगती हैं। आप समझे या न समझे। "कायवाङ्मनः कर्म-योगः स आस्रवः।" आचार्य आस्रव तत्व का वर्णन करते हुये समझा रहे हैं वचनों के माध्यम से भी आप आस्रव कर रहे हैं। मात्र कर्मों का ही नहीं नोकर्मों का भी आस्रव होता है। आस्रव से ऊपर उठने की प्रक्रिया है ये। पशु-पक्षी भी रात में आवाज नहीं करते आप कभी चुप बैठते ही नहीं आवाज आती ही रहती है।

कौवा ज्यादा बोलता नहीं मात्र कांव कांव के माध्यम से अपना काम चला लेता है। आप क्या करते हैं? ज्यादा बोलने से चिंतन भी बाधित होता है। वे पक्षी रात होते ही अपने नीड़ों में बैठ जाते हैं, उजाला होने पर ही मौन खोलते हैं। आप लोग प्रवचन ध्यान-देवल्यान कहीं भी हो बोलते ही रहते हैं। इससे अनेकों को व्यवधान होता है/हो सकता है। हो सकता मतलब नियम नहीं हो भी सकता है।

एक स्थान पर हम थे। सागर में वाचना होती थी। दिन में वाचना होती थी। वहाँ भक्तामर का अखण्ड पाठ शुरू कर दिया। अपने तक सीमित होना चाहिए था पर स्वयं तो कम सुने और दूर-दूर तक आवाज

आवा शुरू कर दिया।

ऐसी आवाज में सुनने वाले को शब्द तो सुनाई देंगे पर अर्थ नहीं लगा पायेगा। क्योंकि आस्था का विषय है। पर वह आवाज तो हजारों व्यक्तियों को पार करके चली जाती है। इस दूरी में मान लो दो-तीन चिकित्सालय भी हो सकते हैं। उन पर भी प्रभाव पड़ता ही होगा। वहाँ मरीज रहते हैं। दो-तीन दिन बाद एक चिट्ठी हमारे सामने रखी मिली।

हमने सोचा किसी का प्रश्न होगा पर उसमें निवेदन था- महाराज ये काम आप ही कर सकते हो। चौबीसों घण्टे अखण्ड पाठ से नींद लेने वालों को भी व्यवधान, जो रोगी हैं उनको भी परेशानी होती है। "अपने मन-वचन-काय की चेष्टा की तरह दूसरे के मन-वचन-काय की चेष्टा भी होती है।" जब वाहनों को चलाते हैं तो कई स्थानों पर बोर्ड लगा रहता है- शान्ति बनायें रखें।

इसी प्रकार जैसे सार्वजनिक स्थानों पर बीड़ी-सिगरेट न पीयें। प्रतिबंध लगा है। हम अपने ढंग से पी रहे हैं- ऐसा नहीं कह सकते। धुंआ कहाँ जायेगा? वह नाक बंद कर ले। मुख को भी बंद कर ले। ऐसा नहीं। सख्त मना कर दिया। इसके कारण कई रोग होते हैं। भयानक रोगों का कारण आज का बढ़ता प्रदूषण ही है। प्रदूषण सबसे ज्यादा हो रहा है। वचन/शब्द प्रदूषण विद्यार्थियों के लिए तो

बहुत ही हानिकारक है।

अभी मैं बोल रहा हूँ - सभी सुन रहे हैं न? बहुत धीरे बोल रहा हूँ। कई लोग वचनों से ऐसे बोलते हैं जैसे गोली छूट रही हो। आजकल यह ध्वनि दो-दो किमी. तक होती रहती है, इसकी क्या आवश्यकता है। "जितना धीरे बोलोगे अर्थ उतना ही स्पष्ट होता चला जायेगा।" कम भी बोलोगे तो चलेगा। हम भाषा को समझ नहीं पा रहे हैं।

"मातृ शब्द से माता बना है। ऐसे शब्द बोले जो माँ की तरह प्यारे लगे।" राग-द्वेष उत्पन्न न हो। इसमें कोई पैसा खर्च नहीं होता। आरोग्य वर्द्धक भी है। हम इन सबको गौण कर जाते हैं। आक्रोश से बचना चाहते हो तो स्व के लिए, पर के लिए, स्व एवं पर दोनों के लिए भी बंध मानो। एक के लिए, दो के लिए, पचासों के लिए भी निकाचित् कर्मों का बंध हो सकता है।

ऐसा बंध हो जाता है, जिसके उदय में एक साथ कई लोगों की मृत्यु हो जाती है जैसे - सुनामी, तूफान अथवा बिजली आदि के गिरने से। हम लोगों के लिए कहा सामायिक आदि के बाद पाठ का उच्चारण ऐसा हो दूसरे को बाधा न हो। वचन/भाषा का संयम हो। दुष्ट वचन - दुष्ट मन - दुष्ट काय से बचें। धीरे बोलें - सार्थक बोलो। नहीं बोलो तो अच्छा - गुप्ति पल जायेगी। मन वचन काय तीनों की गुप्ति से ही मोक्षमार्ग प्रशस्त होता है। इतना ही पर्याप्त है। अहिंसा परमो धर्म की जय) नँ

27-3-19 "अभ्यास का प्रतिफल" प्रातः

आप मान लीजिये किसी की जय बोलना चाहते हैं तो मन में सोच लिया जाता है। इसके लिए वाक्य का निर्माण कर लेते हैं फिर बाद में सोचते हैं अथवा पहले सोचते हैं फिर वाक्य का निर्माण करते हैं। क्या करते हैं? आप सोच लीजिए। वस्तुतः हम बहुत प्रमाद कर जाते हैं। इसलिए उपदेश भी हमारे पल्ले में नहीं पड़ता है। आप अभ्यस्त हो जाते हैं तो वही काम करते हैं। ऊँगलियों के माध्यम से करते रहते हैं।

आप बोल रहे हैं गीत और इसीके साथ-साथ ऊँगलियाँ भी चल रही हैं, जिसमें छेद होते ऐसा वाद्य यन्त्र है। हारमोनियम आदि है उसके छेद पर जब ऊँगलियाँ जाती हैं तो हवा नहीं आती, इसी के माध्यम से स्वर उत्पन्न होता है। "यह कार्यक्रम अनाभ्यासदशायां एवं अभ्यासदशायां दोनों में निरन्तर चलता रहता है।" अभ्यस्त नहीं होते तब तक देखना पड़ता है। अभ्यस्त होने पर तो ऊँगलियाँ स्वतः ही वहाँ पहुँच जाती हैं।

विद्यालय दशा में शिक्षा देते हैं, तब इन सबका ध्यान रखा जाता है। एक वर्ष तक जब अभ्यास हो जाता है तो अपने आप ही आगे की रक्षा का भी यह कार्यक्रम हो जाता है। मोक्षमार्ग में भी इसी तरह अभ्यास के माध्यम से वह एक-एक कदम चलता जाता है। प्रमाद को छोड़कर अभ्यास कर लेते हैं तो ही

चला सकते हैं।

केवल चर्मचक्षु से ही नहीं प्रज्ञा चक्षु से भी कार्य होता है। ये वादन भी करता है और गीत भी गाता है साथ ही वाह-वाह भी सुनता रहता है आपकी तालियाँ बज जाती है। ऐसे में आँख नहीं है तो भी आँख वाले से बढ़िया चल रहा है। इसलिए आप लोग प्रयोग करना प्रारम्भ कर दो। हम ऐसी धारणा नहीं कर पाते हैं, इसमें हमारा प्रमाद कारण है। यदि जाग्रत रहते है तो सुनने के साथ धारणा (याद) भी कर लेते हैं, अन्यथा महाराज तो रोज बोलते ही है, हम कल सुन लेंगे।

जिस प्रकार मोबाइल इत्यादि में बात करते हो, शब्द अक्षर का पैसा देना पड़ता है उसी प्रकार प्रवृत्ति के समय बंध होता है। गुप्ति इत्यादि में न सुनता है न सुनाता है न देखता है न बोलता है शांत बैठ जाता है। जितना शांत बैठता है कर्म की निर्जरा भी उतनी ही ज्यादा होती है। आप निर्जरा करना चाहते हैं कि नहीं? [जी आत्मीजी] किन्तु प्रमाद के कारण शरीर की भी निर्जरा हो जाती है।

गलत धारणाओं, दूसरों की सोबत (संगति) में रहने के कारण ये हानियाँ होती रहती हैं। एक माता-पिता आपे हम तो यहीं (प्रतिभा-स्थली) रखना चाहते हैं। यदि बच्चियाँ न रहना चाहे तो? यदि आप (माता-पिता) नहीं रखना चाहे तो?

दोनों की सम्मति अनिवार्य है।

जिसके पास आँखे नहीं वह मुख से बोलता है, वादन भी कर रहा है, मैं जो बोल रहा हूँ सामने वाला सुन रहा है कि नहीं यह भी देखता रहता है। (कानों से) मतलब तीनों काम एक साथ जैसे लगते हैं पर तीनों में बहुत ही सूक्ष्म समय भेद है। क्यों कि जिस समय बोलते हैं उस समय सोचते नहीं। पहले सोचा जाता है फिर बोला जाता है।

उँगलियाँ भी चल रही है। बिना आँखो के भी आँखो का काम कर रहा है। ऐसा अभ्यस्त हो जाता है कि आँख वाले भी उसके सामने कुछ नहीं। आंख नहीं फिर भी काम करता रहता है उसी का नाम प्रज्ञा चक्षु है। सुन रहे हो ? [हमो] आप इन चर्म चक्षु से भी काम नहीं कर पा रहे हो। यदि एकाग्रता रहती है तो जो कर्ण के माध्यम से सुना उसको बाद में याद कर सकते हो।

उस समय ऐसा लगता है जैसे अभी ये हमें साक्षात् महाराज जी सुना रहे हो। होता है कि नहीं ? किन्तु ये उसी बच्चे को रहता है जो ध्यान से सुनता है। जो ध्यान से सुनता नहीं वह फिर बोला रटंत करता है। बस राम-राम तो उतना ही याद रहेगा। "विद्यालय में रहना नहीं होता किन्तु आज २०वीं शताब्दी में ये ही हो रहा है।" पहले ऐसा नहीं था। ध्यान से लिखना, ध्यान से बोलना, ध्यान

से सुनना इसीलिए मोक्षमार्ग में ध्यान का बहुत महत्त्व है।

आपने हमारी बात ध्यान से सुनी, बड़ा उपकार किया। हमारे ऊपर नहीं स्वयं पर किया है। ताली बजायी स्वयं के लिए हमारे लिए नहीं बजायी। कल किसी ने बताया- महाराज! आपको ताली बजाने हेतु व्यक्तियों की आवश्यकता नहीं, उसमें ऐसी फिटिंग कर दी करोड़ो व्यक्ति एक साथ ताली बजा रहे हैं। भगवान के सामने सभी वाद्य बज रहे हैं। धारा भी चल रही है।

गंधोदक भी रोबोट से लोगा। क्या होगा? ऐसा जमाना आ गया है आप कैसे करेंगे? अपनी आत्मा से जुड़ कर करो। उसी से कर्म निर्जरा होगी, सुनने मात्र से नहीं। आस्था से सुनो - आस्था से करो। इस प्रकार सुनना - देखना - करना एक साथ होते हुये भी एक साथ नहीं। ये ही अभ्यास का प्रतिफल है।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

उदाहरण (नदीयों को जोड़ना)

"जिस प्रकार गंगा - जमुना और सरस्वती को मिलाने से प्रयाग तीर्थ का निर्माण होता है वैसे ही आपस के विचारों को मिलाओ तीर्थ बन जायेगा।"

- पूर्व का भारत (प्राचीन भारत) लाने का संकल्प है तो पश्चिम की ओर क्यों जा रहे हो?
- जीवन का मूल्य क्या? शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है।

२४-३-१९ "आओ समझें अनिवार्य पुरुष" प्रातः

आप लोग विषय को समझ सकें इसके लिए कभी-कभी मूल विषय से प्रारम्भ करते हैं तो कभी-कभी दृष्टांत (उदाहरण) से अपनी बात को शुरु करते हैं ताकि वह विषय समझ में आ जाये। उदाहरण से बात प्रारम्भ होती है तो ये जिज्ञासा बनी रहती है। प्रायःकर सभी लोगों को कि ये दृष्टांत क्यों दिया जा रहा है।

अब देखो पंगत बैठी है। परोसने वाले भिन्न-भिन्न व्यंजन लेकर आये हैं। एक व्यक्ति वह भी है जो सर्दी के मौसम के अनुसार गरम-गरम लेकर आया है। उसके हाथ में क्या बोलते हैं? केतली है। हम आपको ये ध्यान दिलाना चाहते हैं जब उसमें जो पदार्थ है वह तेज गरम है तो केतली भी गरम हो गयी होगी। उससे हाथ भी जल रहा होगा किन्तु ऐसा नहीं है। जब ध्यान से देखा तो वह जहाँ से पकड़े हुये था, वहाँ पर एक लकड़ी अथवा बेंत का गोल सा (हत्था) बना हुआ था।

वह सुरक्षा का स्थान था। इससे सभी लोगों को परोसा फिर भी हाथ नहीं जले। और आप अभी मत पीना जल जायेंगे थोड़ी प्रतिक्षा करो। वो प्रतिक्षा नहीं कर रहा है। इससे हमें ये ज्ञात हुआ; आप क्या समझे, ये तो आप जानो। हमने जो समझा वह यह है- मोक्षमार्ग में परिषह सहन करना अनिवार्य

है। ये पेपर छूट नहीं सकता।

मोक्षमार्ग में आये हो और परिषह न हो ऐसा कभी भी हो नहीं सकता। ये अनिवार्य हैं। अनिवार्य प्रश्न समझते हो? एक एच्छिक प्रश्न होता है दूसरा अनिवार्य प्रश्न होता है। अनिवार्य को छोड़ नहीं सकते। छोड़कर आओ देख लेना क्या हाल होगा। कितने नम्बर मिलेंगे? एक (पहली) में एक दूसरी में दो और बाकी में 12 [जीरो] मिलेंगे। वो कहेगा हमारे लिए तो एक ही मिला है और हमें तो 12 मिले हैं। बोलो?

इसी प्रकार अनिवार्य जो होता है उसका हल करना अनिवार्य होता है। "जो मोक्षमार्ग में आ गया और यदि परिषह जय नहीं तो कोई नम्बर नहीं मिलेगा। तत्त्वार्थ सूत्र में इसीलिए..... परिषहजय-चारित्रैः" इसको चारित्र माना है। इससे कर्मों की निर्जरा एवं संवर भी होता है। संवर मतलब कर्मों के आने के मार्ग को रोकना। आप लोगों को भी परिषह जय का अभ्यास होना चाहिए। (बच्चों से)

मार्गाच्यवन निर्जरार्थं..... कभी गर्मी तो कभी सर्दी, भूख-प्यास। कुछ शारीरिक तो कुछ मानसिक तथा कुछ बौद्धिक परीषह भी होते हैं। तीनों को सहन करना ही होता है। शारीरिक परिषह जैसे मानलो किसी का स्वास्थ्य ठीक नहीं, पेट में दर्द, बुखार इत्यादि हो गया। मन के प्रतिकूल होना मानसिक परिषह

है। बौद्धिक परिषह - कहीं प्रश्न आ गया तो आ गया।

सरल चाहते हो तो अपनी तरफ से चुन लो। फिर उत्तर भी स्वयं ले लेना। स्वयं का ही प्रश्न एवं स्वयं का ही उत्तर। गलत भी हो तो भी 10 S नम्बर ले लेगा। कोई भी नहीं मानेगा। ये गुण नहीं हैं। दूसरा देता है तो गुण माना जाता है। अपने आपको शाबास कहोगे लोग हँसेंगे और दूसरा शाबास कहेगा तो... ये कितना होशियार है। बौद्धिक परिषह का अर्थ यह भी मानलो ज्ञान का क्षयोपशम कम है तो अब कैसे होगा।

"ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने" मेरा क्षयोपशम जल्दी-जल्दी बढ़े, ऐसी आकुलता न हो। क्षय हो जाये तो परिषह ही खत्म हो जायेंगे। हमेशा प्रतिकूलता का अनुभव न करें। ये सोचें - हमारे साथ ऐसा है तो मुनिमहाराज - आर्यिकामताजी कैसे सहन करते होंगे।

शिक्षाव्रत का यही अर्थ होता है, जो मुनि-महाराज जी की चर्या है उपवास आदि के समय उसका चिन्तन करना। वे तो हमेशा स्नान नहीं करते इत्र-फुलेल नहीं लगाते मैं आज एक दिन त्याग करके देखता हूँ कैसा लगता है। सुन रहे हो? [हाँ] सभी को सुनना चाहिए। फिर प्रश्न पत्र में जो भी आयेगा उसे मानेगा ऐसे व्यक्ति को मोक्षमार्ग अखरेगा नहीं। अन्यथा अरे भैया मैं कहाँ आ गया। इससे अच्छे तो श्रावक ही ठीक हैं;

दोनों हाथ में लड्डू होते हैं।

ध्यान रखो - अगली कक्षा में तभी प्रवेश मिलता है जब पूर्व कक्षा में उत्तीर्ण होता है। कृपांक की ओर ध्यान मत दो। आप तो जानते ही हो- कुछ कृपा हो जाये। हमारी दशा में तो आपने भी कृपा लिखवा था या नहीं। मोक्षमार्ग में कोई कृपा नहीं मिलती है। एक तो क्या ½ नम्बर भी कम आये तो मोक्ष नहीं मिलता है। इसलिए आप सभी जाग्रत हो जाओ। 9½ बज गया। अनिवार्य प्रश्न को भी समझ लिया।

यहाँ पर कोई भी हो चाहे बूढ़ा हो या जवान हो, रोगी हो या स्वस्थ हो उतना ही मिलता है जितनी योग्यता है। साधना जो कर रहा है उसी आधार पर मूल्यांकन होता है। प्रभु से कृपांक की प्रार्थना मत करो हाँ! इतनी प्रार्थना कर सकते हो कि जो भी परिषह है उन्हें सहन करने की क्षमता आ जाये। फिर अपने ढंग से पूरक पुस्तिका लेकर भी अच्छे ढंग से लिख दो। हम मांगेंगे नहीं।

हम मांग नहीं रहे। आपके भीतर जिन गुणों की प्राप्ति हो गयी वे हमारे भीतर भी प्रकट हो जाये जिससे हम भी उऋण हो जाये, बस यही भावना है।

अहिंसा परमो धर्म की जय। नुँ "अच्छे-अच्छे चुरंधर अर्थशास्त्री भी अर्थ का यथार्थ लगाने में समर्थ नहीं।"

29-3-19 "नाव देखो - चुनाव नहीं" प्रातः

जंगल का एक प्राणी चारों ओर चंचल होकर जमीन को बार-बार सूंघ रहा था। इधर से उधर और उधर से इधर आ-जा रहा है कि उसे सुगंधी मिलेगी। इस प्रकार वह दसों दिशाओं में उस गंध की गवेषणा करता है किन्तु उसे गंध का स्थान मिल नहीं रहा है। ऐसी गंध जो मनमोहक है। उस गंध में वह पागल हुआ वह प्राणी यह ज्ञात नहीं कर पाता कि यह कहाँ से आ रही है।

जंगल का वह प्राणी मृग होता है। मृग में भी कस्तुरी मृग। कस्तुरी विशेषण लग गया क्यों कि हरेक मृग के पास यह गंध नहीं होती। कस्तुरी मृग को यह ज्ञात नहीं है कि ये गंध मेरे भीतर ही है। वस्तुतः जब वह पकाव की हिए होती है तो मृग की नाभि में से निकलती है। इस सुगन्धित पदार्थ को खाद्य पदार्थ या अन्य कोई भी पदार्थ में उपयोग करते हैं। इस बात का जैसे ही उसे ज्ञान हो जाता है तो वह अवाक् रह जाता है।

"निजी नाभि में गंध है - मृग भटके बिन ज्ञान" कई चीजें ऐसी हैं जिनका ज्ञान न होने से हम भटक रहे हैं। चारों तरफ गंध फैल जाती है किन्तु हमें ज्ञात ही नहीं हो पाता। संसारी प्राणी है वह रूप - रस - गंध अथवा स्पर्श इन सभी को बाहर ही ढूंढता रहता है। अब देखो - वस्त्र पहनने के लिए आवश्यक होते हैं। सर्दी - गर्मी, मर्यादा आदि

के लिए आवश्यक है।

जहाँ वस्त्र मिलते हैं वहाँ जाकर आप खरीदते हैं। दुकान पर गये, वहाँ जाते ही लक्ष्य ही भूल जाते हैं। ये वस्त्र बहुत महंगा है, ये ही लेना है। और कभी लेंगे। बर्फ पर दृष्टि चली गयी। छुते ही ये तो बहुत मुलायम (कोमल) है। दुकानदार भी मूल्य तिगुना-चौगुना बता देता है। आप कहते हो, लेना है जो लो लो पर हमें तो यही चाहिए। क्या हो गया?

वस्त्र का उद्देश्य लेकर बाजार आया था पर वस्त्र के गुणों अथवा उसकी विचित्रता में डूब जाता है। ये अच्छा है, ये बुरा है, ये हल्का-ये भारी है आदि-आदि विकल्पों में डूब जाता है। इसी के आधार पर तो कई बार झगड़े तक हो जाते हैं। इन्हें तो अच्छा मिला, हमारे लिए ऐसा मिला अथवा मिला ही नहीं। हमें जब तक नहीं मिलेगा तब तक---. (खाना पीना बंद) क्यों हंस रहे हो? बच्चे ऐसा करते हैं न? एक्टिंग

इसलिए दूसरों को न देखें। जो हमारे पास है उसे देखें किन्तु होता उल्टा ही है ऐसा होना चाहिए जो दूसरों के पास हो ही नहीं, सब पूछते हैं-यह तो बहुत अच्छा है कहाँ से लाये? तभी उससे भी अच्छा एक व्यक्ति पहनकर आता है अब वह भी पूछता है आप कहाँ से लाये? ये संसार की दशा है। निजी नाभि में---। इसी तरह रहोगे तो स्वर्ग में भी नहीं

मिलेगा।

वहाँ की स्थिति तो और खराब है। यहाँ तो फिर भी सुधार संभव है वहाँ तो एक से एक पंचेन्द्रिय विषयों के अंबार लगे हैं। जो सम्यग्दृष्टि होता है, वह तो जान लेता ये सब कर्म उदय का फल है। सब संयोग क्षणिक है। जो नहीं जानता वह उनके गायब होते ही राग-द्वेष की चक्की में पिसते चला जाता है। इस उदाहरण के माध्यम से हमें यही समझना है। पंचेन्द्रिय के विषय में राग-द्वेष नहीं करना है, किन्तु एक-एक इन्द्रिया बढ़ती जाती है वैसे-वैसे राग-द्वेष भी बढ़ते चले जाते हैं।

कर्म भी और घने होते चले जाते हैं। आप अनेक वस्त्र रखें कोई बाधा नहीं पर चुनाव की प्रक्रिया न रखें। क्यों कि "जो अनुकूलता एवं प्रतिकूलता है उसका कोई ठीकाना नहीं है।" सर्दी-गर्मी अथवा मर्यादा को कायम रखना है इसलिए वस्त्र का विकल्प रहता है पर उसमें चुनाव का विकल्प न हो।

उसमें हर्ष-विषाद न करें। इतना भी यदि कर लें तो पंचम गुणस्थान की चर्या मानी जा सकती है। इसमें जितनी निर्दोषता आयेगी आज का श्रावक भी देव बनकर आगे मुक्ति का भाजक बन सकता है। इसलिए अपनी दृष्टि को अनमोल रखकर सुरक्षित रखें। विषयों में फंसे नहीं, जो फंसता नहीं, वही ज्ञानी है। जो ऊपर-ऊपर (उसही-उसही) ज्ञानी बनता है वह चुनाव का ज्ञान तो रखता है परन्तु

का ज्ञान नहीं रखता।

चुनाव एवं नाव में फर्क जानते हो?
"चुनाव लड़ने का प्रतीक है जब कि नाव पार होने में सहायक है।" आपको क्या चाहिए? पार चाहिए तो चुनाव को गौण करीये। ये चुनाव (सोक्षमा इत्यादी) की बात नहीं है यहाँ। यहाँ तो पंचेन्द्रिय विषयों के चुनाव की बात है। इस चुनाव का अर्थ नहीं।

तत्त्वार्थसूत्र में एक सूत्र आता है - "ऊपरि-ऊपरि..." ऊपर-ऊपर पंचेन्द्रिय के विषय, वैभव इत्यादि ज्यादा-ज्यादा होते जाते है फिर भी सम्यग्दृष्टि इनमें रचता-पचता (फंसता) नहीं। जो सम्यग्दृष्टि नहीं है तो वह दूसरों के वैभव को देखकर रोता रहता है/दुःखी रहता है। सागरोपम आयु तक वह इस दुःख को चिपकाये रखता है।

"आप लोग इससे बचें। पंचेन्द्रिय विषयों में गाफिल नहीं होना ही मोक्षमार्ग का स्वरूप है।" यही करते जाओ और आगे बढ़ते जाओ। एक दिन सही स्वरूप को पा जायेंगे।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

o आ. श्री शब्दों के जादुगर है, प्रत्येक शब्द के अलग ही अर्थ निकालकर रख देते है -

अजहर = अ जहर

कम्पीटीशन = कॉफी टेंशन हो जाए वह है

Competition

30-3-19 "भावों का कमाल" शनिवार

यह आपको ज्ञात होगा कि इससे किसी भी प्रकार से इस वस्तु का उपयोग करने से अपने लिए हानि होती है और इस वस्तु को इस रूप से स्वीकार करते हैं तो लाभ कुछ सकता है। अब रही बात जिसका विधिवत् उपयोग करना चाहते हैं तो वह द्रव्य - क्षेत्र - काल आपेक्षित है। मान लीजिए द्रव्य-क्षेत्र एवं काल तीनों अनुकूल है किन्तु एक और है जो बहुत महत्त्वपूर्ण है वह है भाव। भाव यदि ठीक नहीं है तो द्रव्य-क्षेत्र और काल का संयोजन कोई महत्त्व नहीं रखते।

आप पूजा करते हैं, भगवान की पूजा करते हैं। आप अपने ही लिए करते हैं भगवान को कोई प्रयोजन नहीं - आप करें या नहीं करें। द्रव्य क्षेत्रकाल उपस्थित है किन्तु किसी अन्य भावों में उलझ गया। उलझ गया तो कोई काम नहीं होगा। ये सभी तभी कार्यकारी होते हैं जब भावों का संयोजन होता है। भावों का संयोजन नहीं होगा तो पक्का है जैसा चाहते हो वैसा होगा ही नहीं। भावों का उदाहरण आता है, जो चौंकाने वाला है, हम उस दिशा में पुरुषार्थ बहुत कम करते हैं।

वह यह है कि एक मच्छ जो बहुत बड़ा है। योजन में उसकी काया है। उसी के कान में रहने वाला एक और मच्छ है जिसको तंदुल बोलते हैं। तंदुल चावल को बोलते हैं, चावल भी कई प्रकार के होते हैं, जौ के बराबर भी चावल होते हैं। जीरा भी छोटा-बड़ा

कई प्रकार का होता है।

ऐसा वह छोटा सा मच्छ कान में है। आप कानों से सुन रहे हैं न? हाँ! उसका काम तो हो गया आपका काम नहीं होगा। इन दोनों के भाव बुरे हैं तो सप्तम पृथ्वी तक पहुँच जाते हैं। आज ऐसे बुरे भाव नहीं क्यों कि इसके लिए अतिदीर्घ संहनन (वज्रवृषभ-नाराचसंहनन) नहीं है। वह दीर्घ संहनन उस तंदुल के बराबर जो मच्छ है उसके पास है। बड़ा मच्छ जीवों को खाता है और कुछ मुख में आते-जाते भी रहते हैं। यह छोटा मच्छ तो मल खाकर अपने शरीर को चलाता है। ध्यान रखो - दोनों दीर्घ संहनन वाले है।

परन्तु भावों की अपेक्षा से नीचे के भाव है। द्रव्य-क्षेत्र-काल को भी वे उसी अनुरूप कर लेते हैं। इसका परिणाम सातवीं पृथ्वी जाने का बंध कर लेते हैं। भाव कितने किया। एक के भाव नहीं किन्तु पाप कर रहा है, दूसरा पाप कर नहीं रहा पर भावकर रहा है। इसी कारण दोनों का पाप समान रहा। दोनों को ३३ सागर तक सप्तम नरक के दुःखो का अनुभव करना पड़ा।

अब देखो यदि दोनों के परिणाम अच्छे रहते है तो क्या होता है। उन दोनों के पास दीर्घ संहनन तो है ही। पंचम गुणस्थान के व्रत लेने की योग्यता है। दोनों ही उन व्रतों को अंगीकार कर लेते हैं। बिना किसी उपदेश के वे अपने परिणामों

अ उज्ज्वल बना लेते हैं।

द्रव्य-क्षेत्र-काल वो भी उसी अनुरूप उज्ज्वल बना लेते हैं। ऐसी स्थिति में भावों की अपेक्षा दोनों मच्छ 16वें स्वर्ग तक जा सकते हैं। 16वाँ स्वर्ग इतना ऊँचा है कोई भी वाहन वहाँ तक जाता ही नहीं। वहाँ तो पंचम गुणस्थान के योग्य व्रतों का पालन कर ही पहुँचा जा सकता है।

एक ने हिंसा की दूसरे ने हिंसा नहीं की पर भाव दिये दोनों को फल बराबर ही मिलेगा। कर्म कभी भी पक्षपात नहीं करता। आप लोग कृपांक की बात करते हैं। 7वीं कक्षा में है अब तो ग्रेड रहे हैं। जाओ लेकिन उत्साह से जाओ। मांगते क्यों हो बिना मांगे भी अंक तो देने ही होंगे। यदि आत्म विश्वास है तो आप दोबारा जांच के लिए अर्जना कर सकते हैं।

इतना तो मिलेगा ही। जाँच में पता लग जाता है पक्षपात के कारण कम दिये थे। पक्षपात के कारण क्या-क्या होता है देख ली। कई बार डॉट-डपट के कारण भी दे सकते हैं वो भी अन्याय है। दूसरे के नम्बर कम करके स्वयं ने ज्यादा लिया हो तो वह प्रथम श्रेणी में नहीं माना जायेगा। धमकी देकर लेट है उसने। वह भी इस बात से सदा डरा सा रहता है। मन में बना ही रहता है। मेहनत की कमाई

का महत्त्व अलग ही होता है।"

आत्म विश्वास इसी के आधार पर ही दृढ़ होता है। इस प्रकार वह तंदुल मच्छ भी इस तरह के भाव कर लेता है जो सप्तम पृथ्वी तक ले जाते हैं। भावों को सुधारना बहुत ही कठिन होता है, कौन कहता है सरल होता है। हाँ! मान ले तो कर सकते हैं। पर अभिमान से मत ठानियो) इसलिए.. अभी एक लेख मिला जिसके लेखक प्रसिद्ध वरिष्ठ चिकित्सक हैं।

हमारे ऊपर तो विश्वास ~~कहाँ~~ है, (नहीं) हमें वाक्य पूर्ण तो कर लेने दो। जल्दीबाजी करने से नम्बर कम मिलते हैं। तो उस लेख के भाव के बारे में बता रहा था। प्रज्ञापराध क्या होता है? दोनों तरफ से भाव होते हैं। सप्तम पृथ्वी का भाव प्रज्ञा-पराध माना जाता है। करने योग्य कार्य करेंगे तभी हित निश्चित है। किन्तु आलस्य - अज्ञान - मोह अथवा क्षोभ में आ जाते हैं तो गलत करते हैं। कषाय करने का फल तो अवश्य मिलेगा। जो कषाय नहीं करेगा तो महावीर भगवान बनने में देर नहीं लगेगी।

हम ऐसे महावीर भगवान की आज्ञा बना कर उनके बताये गये पथ पर चलने का भाव हमेशा करते रहें। जब तक सफलता न मिले तब यह पथ ~~छोड़ने~~ से ओझल न हो इन्हीं भावों के साथ। अहिंसा परमो धर्म की जय।

रविवार
31-3-19 "चन्द्रमा नहीं सूर्य बनूं" प्रातः

देखो आप लोगों ने इस बारे में विचार किया या नहीं किया फिर भी रख देता हूँ। पहले भी बताया है, बार-बार रखता हूँ। दो व्यक्तियों ने आकाश मण्डल में स्थान बना रखा है और दोनों अपना-अपना काम करते हैं। एक व्यक्ति तो दिन में काम करता है तथा दूसरा का काम ऐसा कि वह दिन में नहीं रात में ही उसका कार्य होता है। रात में होते हुये भी वह एक माह में एक छुट्टी (अवकाश) भी ले लेता है।

आप लोग (बच्चे) भी छुट्टी मांगते हैं न? अब वह पूर्णिमा को पुरा का पुरा उपस्थित होता है। फिर कृष्ण पक्ष चालु होता है। वह कहता है हम विलम्ब से आयेंगे तथा वह पौन घण्टे विलम्ब से आता है वो भी एक कला कम के साथ आता है। इस प्रकार एक-एक दिन पौन-पौन घण्टे के विलम्ब से वह एक-एक कला कम करता हुआ कृष्ण पक्ष को पूर्ण करता है। ये प्रतिदिन पौन-पौन घण्टे का विलम्ब से आना भी छुट्टीयाँ ही हैं।

अंत में अमावस्या के दिन वह कहता है आज हम आयेंगे ही नहीं। ये चन्द्रमा की बात है। किन्तु सूर्य के साथ ऐसा नहीं है। वह कहता है हम 12 घण्टे यहाँ पर रहेंगे तथा उसके बाद 12 घण्टे अन्यत्र जाकर उजाला करके फिर से आयेंगे। इस प्रकार वह कभी नहीं कहता कि हमें छुट्टी मिले अथवा हमें आज विलम्ब

हो गया।

हम भी आप सभी लोगों से यही कहना चाहते हैं। बार-बार न कहना पड़े। सूर्यनारायण की तरह समय पर चलना सीखो। हमें भी उस सूर्य की भांति निष्प्रमाद जीवन मिले जिससे छुट्टी में भी कोई न कोई काम कर सकूं। आज रविवार है इसलिए ऐसा कहा।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

जयधवला जी कक्षा में → 3.3.19

सम्यग्दृष्टि जीव कभी भी भवनत्रिक में नहीं जाता है। इनको देव दुर्गति कहा जाता है। अब ऐसे देवों (पद्मावती क्षेत्रपाल आदि) की पूजा करना - अर्घ्य चढ़ाना कहाँ तक आगम सम्मत है। यदि आप आग्रह करेंगे तो हम सत्याग्रह करेंगे। फिर यदि पूजा ही करना है - (देवों की) तो सौधर्म इन्द्र जो सबका Boss है इसकी करो, एक भवावतारी है। ऊपर अनुदिश - अनुत्तर में सभी सम्यग्दृष्टि हैं उनकी क्यों नहीं करते।

ये सब ठीक नहीं है। पूर्वाचार्यों (आ० शान्तिसागर जी महाराज) का नाम लेकर कर रहे हैं यह भी सत्य नहीं है। दूसरा स्वरूप निर्धारण होना हर क्षेत्र में अति आवश्यक है। एक तरफ तो एक भी प्रतिमा का पालन नहीं दूसरी ओर पादप्रक्षालन अथवा अर्घ्य चढ़ाना भट्टारकों के लिए क्या उचित है? विचार करें। हम चुप रहेंगे तो भी यह ठीक नहीं होगा। कर्म सिद्धान्त को समझें

1-4-19 "निद्रा अनिवार्य नहीं आवश्यक" सोमवार

हमने एक छोटी सी किताब पढ़ी थी यद्यपि ये विषय जो मैं दे रहा हूँ उसका वर्णन जैन दर्शन में काफी विस्तार से मिलता है फिर भी लौकिक दृष्टि से जो एक किताब में पढ़ा वही बता रहा हूँ। उसमें कहा गया- कि "निद्रा अनिवार्य नहीं आवश्यक है।" समझ रहे हैं? अगर हिन्दी अक्षर जानते होंगे तो समझ गये, अंग्रेजी जानते हो तो नहीं समझ पाये होंगे।

तो निद्रा आवश्यक है अनिवार्य नहीं। जो परिश्रम के बाद थक जाता है तो उससे कहा जाता है आप थोड़ा थके से लगते हो? आप थोड़ा सा आड़े हो जाओ। आपही की भाषा में बोल रहा हूँ। थोड़ी सी कमर सीधी कर लो अथवा फिर थोड़ा सा सुस्ता लो। ये सब क्या है? थकावट को दूर करना चाहते हैं तो न ही पढ़ो - न ही लिखो न इधर - उधर देखो, बस निश्चित हो जाओ। इसमें विज्ञान के शोधकर्ता भी फेल हैं।

आप कुछ भी मत करो ये बहुत कठिन कार्य है। आप कुछ न कुछ सोचते ही रहते हैं इसमें बहुत ज्यादा खर्च होता है फिर बोलने में उससे भी ज्यादा और काय से करते हैं तो और अधिक खर्च होता है। वही काय ऊर्जा उत्पन्न करने में भी कारण बन सकती है। इसी कायिक चेष्टा

नके कारण बच्चों का विकास नहीं होता है।
बोलते नहीं है, बोलना ही नहीं आता तो क्या बोलेंगे। तुतलाते हैं। मन भी 8 वर्ष से काम करने लगता है तभी उसे विद्यालय में भर्ती कराते हैं। जैनाचार्यों ने भी 8 वर्ष के बाद उसे सम्यग्-दर्शन एवं सम्यग्चारित्र की प्राप्ति हो सकती है। इस बात को सदैव केन्द्र में रखकर चलें। अभी बच्चों द्वारा यही बताया जा रहा था।
संगीत के साथ मुझे खुर्राटे की आवाज सुनाई दे रही थी, मैंने सोचा कहीं गड़बड़ी तो नहीं है। खुर्राटे आना यह एक अलग प्रकार की निद्रा है। निश्चित होकर निद्रा को ले पर उसमें गाफिल नहीं होना चाहिए। विश्राम का नाम निद्रा नहीं। ग्रामीण भाषा में आड़े हो जाओ। आड़े हो जाने से ड़र समाप्त हो जाता है। बैठने में ड़र रहता है, कुर्सी पर लुढ़कने की और ज्यादा संभावना रहती है।
ये बात अलग है बूढ़ो की कुर्सी अलग होती है वह आराम कुर्सी कहलाती है। उसमें आराम ज्यादा और कुर्सी कम होती है। लकड़ी के चद्दर ज्यादा लपेटकर रख देते हैं। शरीर को आराम मिल जाये और एक-आध झोंका आ जाये तो थकान दूर हो जाती है। जैसे बच्चों को पालने में लिटाते

है।

आप क्या करते है वह लेट गया (सो गया) होगा? अतः छोड़ देते है वह समझ जाता है, रोने लग जाता है। मैं नींद नहीं ले रहा था विश्राम कर रहा था। इसलिए पालना चलाते रहो, इसी में मुझको आनंद आ रहा है।

निद्रा में गाफिल नहीं होते। आज तो स्थिति बदल ही गयी। लोग नींद के लिए भी गोलियाँ फाँक रहे है। पहले के लोग सिंग (मुंगफली) दाना या सीके चने का सत्तु खाते थे अब गोली खा रहे हैं फिर भी चिंता से मुक्त नहीं हो पाते। महाराज, नींद नहीं आती क्या करें?" जो कर्तव्य का पालन करते है वही चिंता से मुक्त हो पाते हैं।" आपलोग तो कर्तव्य से हटकर कर्त्तित्व (कर्तापन) को अपना ले तो क्या होगा? नींद कभी आ ही नहीं सकती। निद्रा भंग भी होती है।

आप शरीर से ज्यादा काम लेना चाहते हैं तो निद्रा भंग होती है। बच्चों को कभी भी ज्यादा काम (Home-work) नहीं देना चाहिए। देखो बच्चों ने तालीयाँ बजायी, माता-पिता ने नहीं बजायी। वे निश्चिंत है ही नहीं। उनको तो एक ही दिखता है - बस हमारा बच्चा सब कुछ पढ़ ले। ध्यान रखना पुरी किताब पढ़ने मात्र से सर्वज्ञ बनने वाला

नहीं।

तनाव से मुक्त होना जरूरी है। फिर तो एक आध झोंका भी आ जाये उघड़े की नींद की शर्ति कर देता है। गुरुजी (शिक्षक वगैरह भी एक-आध झोंका ले ही लेते होंगे? जब पाठ मुखाग्र करते हो तो युं-युं (हिलने का एक्शन) करते जाओ। इससे ब्रीद का तनाव दूर हो जायेगा। पालना को याद करो। पाठ को याद करने का यह सही रास्ता है आज तो माथा बांधकर बैठ जाते हैं। अपने स्वयं के ऊपर थोड़ी दया करो।

स्मरण करना है तो तनाव मुक्त हो जाओ। विश्राम करके जब उठते हैं तो सहज रूप से जल्दी याद हो जाता है। अलार्म की जरूरत पड़ रही है। जो जितना सोता है उसे उतना ही ज्ञानावरणीय एवं दर्शनावरणीय कर्म का बंध होता है। दिन में तो कभी सोना ही नहीं चाहिए पर आज ये ही हो रहा है। रात में नींद ज्यादा हो जाती है तो क्या करें? (व्यंग्य)

बच्चे भी रात में ही कृत्रिम प्रकाश में पढ़ते हैं। इसके भयंकर परिणाम सुनने में आ रहे हैं। आजकल जो यंत्र (टेलीविजन इत्यादि) आ रहे हैं वे हमारे कोमल अंगों पर प्रभाव डालते हैं फलस्वरूप छोटे-छोटे बच्चे भी भयानक रोगों से ग्रसित हो रहे हैं।

हमें देखकर विकल्प होता है।

लाखों रुपये खर्च करने पर भी वे ठीक नहीं हो पाते। हमें उनके इस अज्ञान पर करुणा आती है। "दुःख के कारणों से यदि मुक्त नहीं होंगे तो दुःख से कैसे बचेंगे।" ऐसे में सम्यग्दर्शन की प्राप्ति भी नहीं होगी। देख लिजिये - आपको बच्चों के मुख से सुनने की आवश्यकता पड़ी। नम्बर ज्यादा लेने के चक्कर में भी ऐसी दशा होती है।

श्रम भी उतना ही करें जितना आवश्यक है, यद्वा-तद्वा श्रम न करें। पंचेन्द्रिय एवं मन के द्वारा जब मात्रा से अधिक श्रम होता है तब विस्फोट हो जाता है। "जब यंत्र को भी विश्राम देना आवश्यक है फिर इस मन एवं इन्द्रियों को विश्राम क्यों नहीं देते? घड़ी पटरी रखो। यदि यद्वा-तद्वा श्रम करते हैं तो उन बच्चों का असाता का उदय मानो, आप देख रहे हैं इसलिए आपका और ज्यादा है।"

एक बात और-

जिस समय जो काम किया जाता है वह उसी समय में करें। पूजन 15 मीनिट में अच्छे से हो सकती है पर हमें इंतजार आधा घण्टे करना पड़ता है, क्यों कि पूजन हमारी होना है ना।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

2-5-19 "बात जमाने की" मंगलवार

प्रचलन में विदेशी शिक्षा नीति होने के कारण अपने जो परम्परा अर्थात प्राचीन काल से जो रवानगी की बात है वह गौण होती चली जा रही है। हम अहिंसा के क्षेत्र में आगे होने के स्थान पर पीछे की ओर लुढ़कते जा रहे हैं। विदेशी शिक्षा नीति एवं भारतीय शिक्षा नीति में बहुत अन्तर है। आज के बच्चों को उस इतिहास से ही वंचित किया जा रहा है। इससे तो आने वाले समय में उसका अस्तित्व ही मिट जाना है।

साहित्य यदि नहीं पढ़ते हैं तो वह जीर्ण-शीर्ण होकर फट जाता है। जिस प्रकार मन्दिरों का प्रचलन कर रहे हैं उसी प्रकार साहित्य रीतिग्रन्थ का भी प्रचलन करना चाहिए। प्रचलन मतलब प्रयोग करना चाहिए। आप दूध जमाते हैं। क्यों? नवनीत अथवा दही के लिए करते हैं। जो दूध को पचा नहीं सकता उसको तक्र आदि देने का प्रयोजन है। दूध को दही कैसे बनाते हैं? उसको थोड़ा सा गरम करलेते हैं एकदम ऐसा नहीं कि खदबद-खदबद करने लग जाये।

गरम करने के बाद उसमें जमने की क्षमता आ जाती है। विशेष बात यह है कि जब जामन डाल दिया जाता है तो उसमें जीवों की उत्पत्ति बंद हो जाती है। ये प्रक्रिया है "स्निग्धरूक्षत्वाद्बंधः" स्निग्ध और रूक्ष गुण के कारण बंध होता है। ऐसा तत्त्वार्थ सूत्र के 4-5 सूत्र

पंचम अध्याय दिये हैं।

विज्ञान भी प्रकारान्तर से इनको स्वीकार करती है। इस प्रकार ये गरम करके जामण डालकर जमाने की प्रक्रिया आज की नहीं परम्परा से चली आ रही है। इसके लिए पढ़ाई की कोई आवश्यकता नहीं। वर्तमान में जो चल रहा है (क्रीम का घी) वह विदेशी परम्परा है। "जमाने की परम्परा ही समाप्त कर दी। जमाने की बात तो करते हो पर दही जमाने की परम्परा ही समाप्त कर दिये हो।"

अब तो जमाने की बात नहीं सीधे-सीधे दूध से ही घी निकाल लो। वह घी है ही नहीं इसीलिए बटर बोलते हैं। बटर ऑयल। बटर नहीं बटर (व्यंग्य)। उसे ये घी कहते हैं। सोचो! घी और तेल में अन्तर है कि नहीं? तेल अग्नि परीक्षा से नहीं होता परन्तु घी जब भी होगा अग्नि-परीक्षा के बाद ही उत्पन्न होगा। दूसरा मंथन (मथने) से ही प्राप्त होगा। उसका सत्त्व एवं तत्त्व अहिंसक रूप से बने रहते हैं।

दूसरा उदाहरण प्राचीनता को लेकर और देता हूँ। धर्मपाल जी हुये हैं- गांधी जी के समर्थक थे, भारतीय परम्परा के पोषक थे। उन्होंने कहा- बर्फ जमाने की प्रक्रिया में विदेश में एवं भारत में अन्तर है। विदेश में ठण्डे पानी से बर्फ जमाया जाता है, वह उतना गुणकारी नहीं जितना भारत में-यहाँ गरम पानी करके

बर्फ जमाया जाता है।

इसका अर्थ ये हुआ गरम करके जमाने से वह अहिंसक एवं गुणकारी बना रहता है यह परम्परा भारत की है। सोचलो। विज्ञान यहाँ से वहाँ गया अथवा वहाँ से यहाँ आया ? हर बात में अनुसंधान करते हैं। वह अनुसंधान हो अतिसंधान नहीं। विदेश में ही अनुसंधान होता है ये भी गलत है। अनुसंधान विद्यालय में अध्ययन के बाद होता है। इसीलिए वह विद्यार्थी नहीं शोधार्थी होता है। पहले विद्या का अर्जन होता है तब शोध होता है। भारत में पुस्तकालय नहीं ऐसा भी नहीं है।

शोध में स्वयं का अनुभव होता है उसमें दूसरे की कोई आवश्यकता नहीं पड़ती है। आज कल एक और बिमारी चल पड़ी है वह यह कि दूध को मांसाहार एवं अंडे को शाकाहार कहा जा रहा है। क्या आप स्वीकार करोगे ? [नहीं] दूध को प्राप्त करने की प्रक्रिया गलत हो सकती है। ज्यादा गाय एवं ज्यादा दूध हो इसहेतु यंत्रों का प्रयोग करते हैं वह दोषपूर्ण है। यहाँ पर खूब दूध होता था पर यंत्रों से नहीं। अनेक व्यक्तियों को काम भी मिलता था।

यंत्रों ने अनेकों को बेरोजगार कर दिया। ऐसा करना बच्चों का पालन-पोषण भी रोबोट से कर लोगे? जो काम माँ के मुलायम हाथ करेंगे वह रोबोट नहीं कर सकता। रक्त संचार बढ़ जाता है-खून बढ़ जाता है।

इसके लिए स्नेह-वात्सल्य चाहिए।

विदेशी शिक्षा नीति होने से ही दूध को अभक्ष्य कहा जा रहा है। दूध को डेरी व्यवसाय बना दिया। ये उचित नहीं। दूसरा अण्डे को शाकाहारी माना जा रहा है- ये भी विदेशी शिक्षा नीति का ही परिणाम है। दूध को गरम नहीं करेंगे तो अन्तर्मुहूर्त में ही जीवों की उत्पत्ति प्रारम्भ हो जाती है। ये सिद्धान्त हैं भारतीय परम्परा का विदेश का नहीं।

दूध को पूर्ण आहार माना है। वह मांसाहार - तामसिक नहीं हो सकता। वह सात्विक है तभी तो बच्चों का लालन-पालन होता है। कैल्शियम की पूर्ति इसी से होती है। विज्ञान को भी मानना पड़ेगा। आज आप समय पर आ गये। हम भी 5 मिनिट पूर्व में आ गये। हमने सोचा देखती में कौन-कौन, कब-कब आता है। इसी तरह ऑक्सीजन की बात है, फिर कभी देखेंगे।

जीवन ही फिट होगया फिट Food की क्या बात करेंगे। पहले श्रम हो फिर विश्राम की बात करो। श्रम नहीं है तो गादी पर लुढ़कते रहो नींद नहीं आयेगी। श्रम करेंगे तो मिट्टी पर भी नींद आ जायेगी। जो औषधी के पैसे बचेंगे वे प्रतिभा-स्थली को दे देना। हमेशा निरोगी बन जाओगे।

अहिंसा परमो धर्म की जय। नुँ

3-4-19 "आरोग्य रक्षा के सूत्र" बुधवार

यह परम्परा अभी अक्षुण्ण रूप से जैनियों के यहाँ मिलती है, प्रयोग की अपेक्षा से किन्तु प्राचीनकाल में भारतवर्ष में सभी लोग इस परम्परा का निर्वहन करते थे। वह है - जलगालन। जल में सूक्ष्म एवं स्थूल दोनों प्रकार के जीव पाये जाते हैं। सूक्ष्म जीव हमें दिखते भी नहीं ऐसे भी होते हैं। जल बिना जीव के भी रह सकता है क्यों कि इसको पुद्गल का परिणमन माना जाता है। जैसे अग्नि अथवा वायु आदि अपने शुद्ध रूप में उत्पन्न होती है।

जल को कैसे पीना चाहिए तो शास्त्रों में एक कारिका आती है - वस्त्र पूतं जलं पिबेत्, नेत्र पूतं निषेत् पदम् ... मात्र अहिंसा की ही बात नहीं है, बिना छाने जल का सेवन करनेसे भयंकर बिमारियाँ तनु हो जाती हैं। वे कीटाणु ऐसा स्थान बना लेते हैं कि आपको हटना ही पड़ता है। इसलिए क्या खाना, कितना खाना, कब खाना, किस पद्धति से खाना ये आज सारा का सारा समाप्त हो गया है।

जीवों की उत्पत्ति कहाँ-कहाँ होती है इसकी आपको जानकारी होना चाहिए। आपके पेट में भी जीवों की उत्पत्ति होती है। आपने देखा होगा मक्खी के पेट में भी लट आदि की उत्पत्ति होती है। ये समुर्च्छा जीव होते हैं। समुर्च्छा जीवों की उत्पत्ति जैनियों के यहाँ अनादि

से चली आ रही है।

वर्तमान विज्ञान ने कहाँ तक स्वीकार किया है ये हम नहीं समझ सकते। ऐसे सूक्ष्म जीव तिर्यञ्च योनि में अनंत है। ये सूक्ष्म भी और स्थूल काया वाले भी होते हैं। वर्तमान के खान-पान के कारण ऐसा हो रहा है। महाराज! त्याग करवा दो। पहले आप खिलवाओ फिर हम छुड़वायें। खुब खा लें बेटा आप ही खिलाते हैं। विदेश जा रहा है, मस्तक आशीर्वाद दे दो।

काहेको? पढ़ने जा रहा है। अच्छे ढंग से आशीर्वाद दे दो। हम कहते हैं - पहले नमोऽस्तु अच्छे ढंग से करो। आपका सिद्धान्त पक्का है तो हमारा सिद्धान्त भी पक्का है। नमोऽस्तु अच्छे ढंग से मतलब वहाँ भेज रहे हो तो खायेगा क्या? ऐसे एक बच्चे को लाये थे। माता-पिता ने कहा - महाराज अपने हाथ से बनायेगा, हमने सीखा दिया है। अन्यथा खिचड़ी बनाकर खा लेगा पर बाहर का नहीं खायेगा।

आप अवश्य पालन करेंगे तो हम भी आशीर्वाद अवश्य देते हैं। पानी छानकर पीओ - वस्त्र रूपं जलं पिबेत्। जलगालन जरूरी है। जैसे स्टोव में तेल डालते हैं तो छानकर डालते हैं फिर भी बर्नर में कचरा आकर अटक जाता है। कचरा कहाँ से आया? अब पीन लगाकर इधर करते हैं। छेद वाला वस्त्र होने से यही दशा होती है। आज तो छानते ही नहीं हैं। वस्त्र के द्वारा वह पवित्र हो जाता है। जीव चले जाते हैं। जो बिमारी में कारण बनते उन जीवों से बच जाते

है।

इसमें "आरोग्य की रक्षा एवं जीवन पालन करने की सीख दोनों बातें हैं।" आधुनिक शिक्षा वालों से/विज्ञान को मानने वालों से कहना चाहता हूँ पेट भी एक स्टोव है। जीव विज्ञान को भी जानें। "यदि ज्ञान का विकास चाहते हैं तो छानकर पानी पीना एवं शोधकर भोजन करना चाहिए।" किसने बनाया/कैसे बनाया ये भी देख लो। ज्ञान के विकास में सबसे बड़ा बाधक तत्व है।

शराब पीने से जज भी क्योंन हो वह भी यद्वा-तद्वा बोलने लग जाता है। नेता कभी भी शराब पीने वाला नहीं बन सकता फिर शराब पीने वाला नेता कैसे बनायेगा। ताली बजाओ तो अच्छे से बजाओ। अच्छा नेता चाहते हो तो दिमाग भी अच्छा रखो। मादक पदार्थ के सेवन से दिमाग तीन काल में काम नहीं करेगा। न ही स्वयं की रक्षा - न ही परिवार - देश - समाज की रक्षा कर सकते हो। सुनते हैं पहले तो विदेशी शराब ही बिकती थी पर अब देशी शराब भी बिकने लगी।

घरों तक में आने लगी।

बच्चों को ऐसा खान-पान कभी नहीं करना चाहिए जो उत्तेजित करने वाला हो, गरिष्ट हो अथवा उसको खाने से निद्रा आ जाये। पहले ये घर पर ही सीखाया जाता था पर अब समाप्त हो गया। सब ज्ञानी बनने की होड़ में हैं पर कैसे बनेंगे? विज्ञान ने भी मान लिया भोजन दिन में

करें-रात में नहीं।

विदेशों ने भी इसका समर्थन किया उन्हीं देशों से ज्ञात होता है जैसे- Breakfast का मतलब होता है Breakयानि तोड़ना Fast यानि उपवास। रात में कुछ मत खाओ। सूर्यनारायण। दिनकर के आने पर उपवास को तोड़ दो। रात में जीवोत्पत्ति बहुत ज्यादा, पेट भी भोजन पचाने लायक नहीं रहता। ऐसी स्थिति में किया गया भोजन जहर का काम करता है। इसलिए भारतीय संस्कृति में उपवास, छानकर पानी पीना तथा मर्यादित भोजन करने की पद्धति बतायी गयी।

जो विचलाचित (सड़ा-गला) हो गया उसे मत खाओ। आज बेमौसम सब बिक रहा है और खा रहे जो भयंकर साबित हो रहे हैं। इसी प्रकार दृष्टि पूतं --- देखकर पैर रखें, अन्यथा जीवों की हानि एवं स्वयं के शरीर को भी नुकसान होगा। बोलना चाहते हैं तो आचार्यों ने कहा- सत्य पूतं वदेत् वचः ऐसे ही कुछ है। सत्य की तुला में तोलकर बोलो।

ये सब बातें भारतीय शिक्षा प्रणाली में ही सीख सकते हो विदेशी शिक्षा प्रणाली में नहीं। ये सब जीव विज्ञान - मनोविज्ञान एवं आत्म विज्ञान से संबंध रखती है। सचित एवं अचित की व्यवस्था सूत्र जैनियों के यहाँ ही पायी जाती है। सचित को अचित्त करके से मतलब उबाल करके ही ग्रहण करना

चाहिए खासकर बच्चों एवं वृद्धों को तो।

पेड़ से टूटने के पश्चात् ५-६ दिन में फलों इत्यादि का सेवन हो जाये परन्तु Storage करके रखते हैं। मर्यादा से बाहर करेंगे तो रोग होना निश्चित है। सुनते हैं अब Apple (सेव) को भी कैंसर होता है। आने वाले २०२५ तक प्रत्येक घर में एक सदस्य कैंसर का होगा। इसलिए इन सब से बचो। भगवान का नाम लेकर छोड़ दो। नहीं खाने से कुछ नहीं होगा पर खट्टा-तट्टा खाने से तो अवश्य ही रोगी होंगे।

नहीं खाने पर तो अच्छे से संभलना हो जायेगी। निरोगता के साथ यहाँ से जायें। जाना चाहते हैं? हो तो कह दो। निरोग होना चाहते हो तो सभी Fried Food का त्याग कर दो। Slow फूड का भी त्याग कर दो। अनेक प्रकार की ऐसी चीजें जो गड़ जाये - गड़ंत। उसे भी छोड़ो। मत्स्याभक्ष्य के बारे में जैनियों के यहाँ ही पालन हुआ है। संख्या बहुत ही कम है।

अल्पसंख्यक तो है ही। विदेशी बहुसंख्यक है फिर भी अल्पसंख्यक होते हुए भी दृढ़ता के साथ पालन करेंगे तो उनके लिए आदर्श बनेंगे।

अहिंसा परमो धर्मकी जय हो

चतुर्दशी
५-५-१९ "आँखे बोलती है" गुरुवार

कोई भी हो छोटा हो या बड़ा हो, पढ़ा लिखा - अपढ़ हो, गरीब - अमीर हो, देव हो - दानव हो, आप हो - आम हो ये एकड़ सबके पास है। उपयोग करना न करना ये अलग बात है। हम अपनी चैतन्य शक्ति का उपयोग करें। जैसा हम चाहते है दूसरा भी चाहता है उसकी पूर्ति भी हो ऐसी भावना जो करता है, उसका जीवन सार्थक होता है।

अभी पूजा के बीच में कुछ पंक्तियाँ बोली गयी - "जिनकी आँखे बोलती है" आपकी गुंगी है क्या ? गुंगी है तो बहरी भी होगी। आँखे तो बोलती ही रहती है भले ही भाषा कोई सी भी हो। सब अपनी-अपनी भाषा में उसे समझ लेते है। कई बार आपके सामने रखा - प्रतिदिन की भांति वह आज भी अपने बच्चे को बुलाकर दूध पिलाने को तैयार है। पर... पर क्या ? दान मिल रहा है किन्तु प्रसन्नता से मिल रहा है या नहीं। उस दिन ऐसा ही हुआ। वह अपने उज्जवल भविष्य का भी सर्वप्रथम दर्शन कर लेता है। भविष्य के जीवन को प्रतिबिम्बित कर लेता है।

नीडर एवं निर्भिक बन जाओ। आत्मा के विकास का स्वप्न हमेशा रखा करो। आज उसने दूध नहीं पिया। कोई गम्भीर समस्या में माँ है इतना व्याप्त था - उसकी आँखों में आंसू आ गये - इसकी भी आँखो के भीतर आंसू है। ऐसा नहीं है - समझदार को ही आंसू आते हो, मझदार में है उसकी आँखो में भी आंसू आते है, अभी

खड़ा भी नहीं हुआ लड़खड़ा सा रहा है।

समझ सब रहा है। इसलिए "पर की पीड़ा - अपनी करुणा की - परीक्षा लेती" ये कहा। आप लोगो को तो हायकू याद हो गया। आचरण में उतर जाये तो अच्छा होगा। दीवारों पर लिखने से कुछ नहीं, चलना होगा, आचरण में उतरना चाहिए। वरण तो बहुत हो गये किन्तु आचरण के लिए भी आँखे चाहिए। वह बालक माँ की पीड़ा को समझ गया, दूध पीने को तैयार नहीं है तब ज्ञात हो गया।

इसे बुला तो लिया किन्तु अब समस्या को छुपाया नहीं जा सकता। इसलिए जो दुःखी है उसके सामने दुःख को बताना भी नहीं चाहिए। इससे दुःख दुगुना (दुना) हो जाता है। "किसी के भी दुःख को देखकर अपने दुःखो को भूल जाना है।" तभी आँखे सही मानी जायेगी। पंचास्तिकाय में आचार्य कुन्दकुन्द ने इसी सन्दर्भ में बहुत अच्छा वर्णन किया है। जिसके पास ऐसी करुणा के भाव ही नहीं है वह कुछ भी नहीं कर सकता है।

ऐसी अनुकम्पा सभी जीवों में आजाये दूसरों के दुःख को देखकर कंप जाये वह अनुकम्पा गुण है। आस्तिक्य आदि तो आ जाते है पर ऐसा गुण कलेजा में कंपी कंपी आ जाये। उसके बिना सम्यग्दर्शन उत्पन्न नहीं होता। ये भाव जो आज का पैदा हुआ लड़का है इसके

भी है। हम महसूस नहीं कर पाते हैं।

जो जीवन यापन करने में सक्षम नहीं उनके बारे में सोचों। वह भी सन्मार्ग पर लग जाय। उस माँ के माध्यम से - जिनकी आँखे बोलती...। पढ़ा एवं लिखा खूब है अब तो मरना शेष है। कल ही सुना एवं देखा भी - एक माँ अपने बच्चे को खाती। जिसने अपने बच्चे को बाजार की ही चीजें खिलायी। वो भी वही खाना पसन्द करता था। अब उसे असाध्य रोग हो चुका है। देख लो - अब आँखे क्या बोलती?

ऐसी आँख चाहे माँ की भी क्यों न हो विवेक शून्य आँख मानी जायेगी। वह खाये या न खाये, ऐसी चीज जिसके द्वारा हानि होती है कभी नहीं देंगे। इसप्रकार पहले तो हमने सोचा समय मिल जायेगा तो रख देंगे। अभी चौदस पूर्व करके (प्रतिक्रमण) आये हैं। आप समय पर आ गये, मैं भी समय पर आ गया। आँखे देखकर हम भी प्रारम्भ हो गये। हरेक के पास दो आँखे हैं, अनका उपयोग करना चाहिए।

"प्रत्येक माता-पिता यही प्रार्थना करते है कि बस घर में एक सपुत (पुत्ररत्न) हो जाये किन्तु इसके लिए सुमाँ भी तो चाहिए।" इसके लिए कोई ताली नहीं बजायी। ताली मत बजाओ, क्यों कि आपकी ताली में न संगीत है, न ही भीत है और न ही उसमें प्रीत है। वैसे भी भीत बिना प्रीत

नहीं।

डर (भय) है तो प्रीत है। प्रीति के बिना हमारा क्या? "भीति में प्रीति सदैव पलती रहती है" पर्याप्त काम हो जाता है। ये आँसू क्यों दिखायी। वह एकदम तैयार हो जाता है। जैसा आप चाहते हैं वैसा स्वयं भी करें। आज की सोच कुछ अलग ही होती जा रही है। सरकार कर लेगी। सरकार का मतलब क्या? कभी सोचा आपने?

सरकार, साक्षर सिर का नाम सरकार है। अपने बच्चे हैं, सरकार क्या करलेगी। माता-पिता का कर्तव्य है। ऐसे पदार्थ (स्वीट डिश) न ही स्वयं खायें तथा न ही घर पर लायें। ऐसा करने से स्वयं तो स्वस्थ रहेंगे ही दूसरों को भी स्वस्थ बना देंगे। डाक्टर के भय से भी बच जायेंगे। डाक्टर घुड़वाये तो छोड़े यह ठीक नहीं। वैसे वो कुछ कहते ही नहीं। यह भारतीय चिकित्सा पद्धति नहीं है। उसकी दृष्टि मात्र पैसे पर रहती है।

इसलिए हमें भारतीय संस्कृति (इतिहास) को अच्छे से पढ़ लेना चाहिए। यहाँ शिक्षा एवं चिकित्सा कभी भी अर्थ के प्यासे नहीं है।"

अहिंसा परमो धर्म की जय। नुं
डाक्टर आयुर्वेद प्राचीन चिकित्सा पद्धति है - यंत्रों पर मेरा थोड़ा भी विश्वास नहीं।

5-4-19 "उल्टी को सुल्टी कैसे करें" शुक्रवार

वर्तमान में रोग है लक्ष्य निरोग का है। रोग को दूर करने का लक्ष्य है किन्तु जो वर्तमान में रोग है वह असाध्य है। ऐसा लगता है हम उसको सिद्ध भी नहीं कर पायेंगे। ऐसा व्यक्ति रोग को हटाते हुये भी श्रद्धान में नहीं ले पा रहा है। औषध का उपयोग करते हुये भी फल नहीं मिल रहा। ध्यान रखो - फल जब भी मिलेगा औषध पान से ही मिलेगा। रोग होने पर कैसा लगता है? स्वाद में भी अन्तर आ जाता है।

उदाहरण से देख लो। नीम है उसको जो भी सेवन करने वाला है वह रोगी है। उससे कहा इसको बिना मीठे आदि के सेवन करना है। आपको कड़वाहट के बारे में नहीं सोचना चाहिए। सोचना है तो ये सोचो कि ये औषध है। अब क्या हुआ? कड़वाहट का अनुभव तो कई बार हुआ पर यह औषध है इस धारणा को मजबूत कर लिया।

मुझे रोग से दूर होना है, कड़वाहट तो कुछ समय के लिए है। औषध तो औषध होती है - भले ही वह कड़वी हो या मीठी हो। भोजन कड़वा - मीठा होता है औषध नहीं। वर्तमान में मीठा ही है ऐसा लग रहा है। सुन रहे हो? (हओ) हाँ! किन्तु श्रद्धान को हव्वा नहीं बनाना। फिर चाहे बूढ़ा हो या जैन हो। पहलवान के लिए भी कठिन हो सकता है। कमजोर के लिए सरल

हो सकता है।

"नीम पर हाड़ान करना रोग के निष्कासन में रामबाण है।" फिर खाते समय भी उल्टी नहीं होती। औषध है ऐसी आस्था के साथ पहुँचाने पर ही, इसी से मीठापन छूटेगा, स्वादिष्ट भोजन करेंगा, आराम मिलेगा, ये सभी हाड़ान अनुभव की ओर ले जाते हैं। "योग साधन रूप रहता है और प्रयोग साध्य रूप में ढल जाता है।

तो उल्टी तो नहीं हो रही है। नहीं-नहीं महाराज! मतलब सुलटी खाई जा रही है। जो खाई में गिरा है उसे प्रयत्न ज्यादा करना पड़ता है, क्यों कि वह नीचे से ऊपर आना चाहता है। ऊपर से नीचे जाने के लिए प्रयत्न कम करना होता है। आस्था के साथ ले रहे हैं इसलिए उल्टी की बात ही नहीं है। दिमाग में उल्टी-सुलटी का विकल्प होगा है। हाड़ान में मजबूती लाइये।

महाराज! आप तो कहते जाओ। जो हमेशा मीठी ही खाने का आदि है उसको कैसे कहूं? वह तो एक हाथ में गिलास तथा दूसरे से गोली जीव्हा पर रखेगा ही नहीं सीधे ही खाई में गिरायेगा। हाड़ान में अभी कमजोरी है। कमजोरी के साथ खुद विश्वास भी है मतलब प्रतिशत में है। ये वो गोली है जो बहुत दिनों की कड़वाहट है उसे बाहर निकालने

वाली है।

मीठा खाकर भी कड़वी डकार ले रहा है उस दबी हुयी कड़वाहट को भी दूर करने वाली है। आँख खुली होने पर भी वह रोगी स्वाद ले नहीं पाता। कुछ ऐसे जो जीव्हा पर रखते ही स्वाद ले लेते हैं। पुरी जीव्हा से स्वाद नहीं जीभ की अणी (अग्रभाग) पर रखते ही स्वाद आने लग जाता है। रसना उसी को बोलते है बाकी रसना नहीं स्पर्श है। स्पर्श पर स्वाद नहीं आता।

एकाग्र होने पर ही ज्ञात होता है, इसलिए श्रद्धान को अब प्रयोग में ढाल दो। आपके अनुभव से श्रद्धान और मजबूत बनेगा। फिर आंखे बंद करो या खोलो - औषध छुट जायेगा। रोग हमेशा के लिए समाप्त। आपसे ज्यादा श्रद्धान आपके बच्चों में है, उनमें शिथिलता भी नहीं हैं। इसलिए श्रद्धान अतिआवश्यक है। इस औषध के लिए बिना आप खा-पी नहीं सकते। उठ-बैठ नहीं सकते, मुस्कान तो दूर की बात है।

बिना श्रद्धान के छोटा सा बच्चा भी आपने दूध पिला दिया, कुछ ही समय (तुरन्त) में दही जमाकर बाहर कर देगा। वैसे 12 घण्टे में दही जमता है यहाँ तो तुरन्त ही जम गया। इसको क्या कहेंगे? सुलटी या उल्टी। आपने तो सुलटी डाली थी पर भीतर से स्वीकारता न होने से उल्टी हो गयी। इसी को ग्लानि भ.

बोलते हैं।

इसलिए कि जिसको स्वीकारना था उसी का तिरस्कार कर दिया। तिरस्कार भी बाद में पहले मन से तिरस्कृत कर दिया। ऐसे में श्रद्धान निष्क्रिय हो जाता है। "श्रद्धान के अभाव में प्रयोग निरर्थक है।" आपका श्रद्धान एवं आपका प्रयोग दोनों सार्थक हो इन्हीं भावों के साथ। हम अपनी बात उदाहरण के साथ रख देते हैं, हमें याद भी रह जाती है। आप 24 घण्टे भी याद रख लें तो अच्छा होगा। जो हमेशा के लिए याद रखे हो वह प्रयोग करने का प्रयास करेगा।

स्वाद लेना चाहते हो तो श्रद्धान के साथ प्रयोग किजिए। आँखें बंद करके भी श्रद्धान के साथ ले लेंगे तो फिर डरने की बात ही नहीं। इतना ही पर्याप्त है नहीं है? लोटा भरकर दवाई नहीं दी जाती ध्यान रखो।

अहिंसा परमो धर्म की जय। नुं

निशेष → (आँख)

"आंखों को आराम देना चाहिए। ज्यादा काम में न लेओ। आंखे है तो मोक्षमार्ग है अन्यथा नहीं। रात में कृत्रिम प्रकाश से आँखो को बहुत क्षति पहुँचती है। दिन में ही आँखो से काम ले, रात में चिंतन-मनन करें। जैसे आहार में घी की मात्रा कितनी सी होती है बस इतना ही दिन भर में आंख से काम हो।"

6-4-19 "कैसे करें स्वयं पर नियन्त्रण" शनिवार

नियन्त्रण के लिए दूसरे की व्यवस्था की अपेक्षा स्वयं नियन्त्रित हो तो सबसे अच्छा माना जाता है। क्यों कि हजारों व्यक्ति रहते हैं, इनके नियन्त्रण के लिए सैकड़ो व्यक्तियों की आवश्यकता होती है। यदि वे सैकड़ो व्यक्ति भी अनियन्त्रित हो तो और लोगों को बुलाना पड़ेगा, ये सबसे ज्यादा महंगा पड़ेगा। इसलिए नियन्त्रण हो निजपर। "अपने आप पर नियन्त्रण होना मोक्ष है।" और कुछ नहीं किन्तु इसमें कमी होती है।

नियन्त्रण हो, निज पे दीप बुझे, निजीश्वाससे अपने ही श्वास से दीपक बुझ जाता है। ये कल्पना गलत सी लगती है। किन्तु ऐसा होता है। हम अनियन्त्रित होते है तब महत्त्व मालुम (समझ) पड़ जाता है। अभ्यास न होने के कारण हम सुन तो लेते हैं पर सुनते ही कर लो ये कोई जरूरी नहीं। दीप बुझता निजि श्वास से ये कल्पना नहीं है। बहुत तेज आंधी-तुफान उठ रहा है, हवा चल रही है। हवा किस जोर से चल रही है उसका स्तर नहीं देखा तो दीपक बुझना ही है।

इसलिए हवा का स्तर देखो-समझ देखो। नियन्त्रण होने में देर नहीं लगेगी। हमने बहुत बार सोचा-जब सामने व्यक्ति ज्यादा हो जाते हैं, सुन नहीं रहे। वे अपनी ही सुना रहे हैं। सुना रहे हैं तो उन्हें अपनी सुनाना भी हमारी गलती है, बंध करना भी गलत है। कोई भी नियन्त्रण में नहीं, भीड़ पर

नियन्त्रण नहीं कर सकते।

मैं आंखे बंद करके सिर निचे कर लेता हूँ। अपने आप ही दुरन्त सब मामला ढ़ण्डा हो जाता है। हम बोलना चाहते हैं वह भी दरबार लगा है तो बोलना चाहता है। ऐसे में हमारा बोलना निरर्थक हो जाता है। "भगवान बनाने जा रहे हो पहले भगवान बनाने की प्रक्रिया तो समझ लो।" भीड़ आती है। उस "भीड़ को दृष्टि उठाकर देखने वाला अज्ञानी होता है।" क्यों कि जब बिना देखे सबकुछ दिख रहा है तो देखने का पुरुषार्थ क्यों करें।

ये हमारा स्वभाव है। हम जानने का प्रयास क्यों करते हैं। जिज्ञासा शब्द की उत्पति बड़ी अनुठी है। इच्छा के बिना जिज्ञासा नहीं होती। "ज्ञातुम् इच्छा इति जिज्ञासा" जानने की इच्छा हो जाना ही जिज्ञासा है। बहुत जानना चाहते हो, बहुत तो नहीं जाना जायेगा क्यों कि क्षमता भी सीमित है। जिज्ञासा बनी रहती है। आशा उसमें लगी हुयी है।

आशा ही हमारी जिज्ञासा है। उसे और बढ़ाने में लगे हैं। आश्चर्य है आज की शिक्षा पद्धति। शांत नहीं कर पा रहे हैं। जिज्ञासा शान्त होते ही समाधान हो जाता है। जहाँ तक आशा लगी है, वहाँ तक जिज्ञासा है। संस्कृत में आशा का मतलब आसमान होता है। आसमान देखा है? ऊँगली ऊपर ही क्यों करते हैं? सुन रहे हो कि नहीं?

आसान प्रश्न है।

ऊपर एक-आध बार ही देखते हैं क्यों कि सबको सर्वाइकल की शिकायत रहती है। आसमान क्या अपर ही है यहाँ नहीं है क्या? आसमान कहाँ नहीं है? ये प्रश्न आया। तो जहाँ भगवान नहीं है वहाँ आसमान नहीं हैं। फिर ऊपर ही क्यों देखते हो। यहीं से वहाँ गये है। इतने से उठ गये है। देखो हमने हिन्दी बोली तो किसी ने ताली नहीं बजायी। इसका मतलब आप लोग लौट रहे हैं। हम प्रभु से प्रार्थना करते है आप लौट आयें।

यही निज पर नियन्त्रण होगा अन्यथा दीप बुझे, निजी श्वास से। अपने ही श्वांस से दीपक बुझ जायेगा। जिज्ञासा में ही समाधान विद्यमान रहता है, अन्तर इतना ही है आशा को समाप्त कर दो। आसमान देखने योग्य नहीं, जानने योग्य है। कल्पना मात्र रह जाती है। यहाँ कुछ भी नहीं दिख रहा है, ये निर्णय किस आधार पर किया। यह बहुतों की जिज्ञासा है पर हमें पसन्द नहीं है।

हम आशा को समाप्त करने आये हैं तो जिज्ञासा को समाप्त करें तब कहीं संभव है भगवान बन सकें। हम तैयार है, क्या आप लोग तैयार है प्रभु बनने को? कितना सरल है प्रभु बनना। इसलिए निज पर नियन्त्रण होना परम आवश्यक है। यही मात्र जैन धर्म है, यही सन्मार्ग है। उस सन्मार्ग पर विचरण नहीं कर पा रहे हैं। इसलिए क्यों

कि दुसरों पर नियन्त्रण करना चाहते हो।
पिताजी का नियन्त्रण बेटे पर है तो बेटे का नियन्त्रण पिताजी पर। पुरा का पुरा युग ही अनियन्त्रित है। उनको (दूसरे को) नियन्त्रण करने की अपेक्षा स्वयं पर नियन्त्रण कर लो। इसलिए नियन्त्रण हो, निज वै दिव बुझै, निजी श्वांस से ये हायकू हमने यहीं पर सिखा हुआ यहा था। आपने देखा? आप लोग तो उधर देखते नहीं हमेही देखना चाहते है, गिर भी जाते हैं।
पास से क्यों दूर से हम नहीं दिखते क्या? दूर से अच्छे दिखते हैं। यहाँ सुनते हो उसमय तो लगता है उनकी जिज्ञासा अब शान्त हो गयी। ताली भी बजा देते हो। पर बाहर जाते ही। आपको सोचना है। आप शान्त होने पर भी कल की चिंता करते हो। कल आता ही नहीं। हमारे यहाँ तो आज नकद- कल उधार।
आप दुकानदार है हम दो कानदार है इसलिए नियन्त्रण हो - स्वयं पर --- आपके सामने रखा।
अहिंसा परमो धर्म की जय। नुँ

Note o द्रव्य मन Software है तो भाव मन - Hardware
o कॉमनसेन्स is Not So Common.

रविवार

7-4-19 ट्युशन (अतिरिक्त प्रशिक्षण) क्यों? प्रातः कल का विषय स्मरण में तो होगा ही, ऊहापोह भी की होगी। आज भी प्रासंगिक समझकर रख रहा हूँ। चुंकि आज रविवार है, शिक्षक वर्ग भी आया है, साथ ही वकील लोग भी बैठे है क्यों कि आज न्यायालय बंद रहता है। बंद मतलब वे नहीं जायेंगे। तो अब शिक्षा के बारें में थोड़ा सा समझ ले। आज शिक्षा की क्या गति या प्रगति है यह महत्वपूर्ण है।

इसमें कौन-कौन भागीदार है? ये कहना तो कठीन है पर ये समझ ले कि इसमें आप लोगो का हाथ तो नहीं? विद्यार्थी विद्या के लिए विद्यालय में जाता है। प्रवेश होने के उपरान्त उसकी क्या गति होती है। इस पद्धति में हम सुधार लाना ही नहीं चाहते अथवा ला ही नहीं सकते ऐसी धारणा बना लीहै? विद्या को देने वाला महत्वपूर्ण तथा जिसे विद्या दी जा रही है वह दूसरे क्रम में आता है।

वह यह जानना चाहता है कि शिक्षा क्या होती है? इसीलिए मैं यह पुछना चाहता हूँ कि जब विद्यालय में शिक्षा दी जानी चाहिए तो फिर अतिरिक्त प्रशिक्षण (ट्युशन) की क्या आवश्यकता है। आवश्यकता है तो हम उसे बाधित नहीं करना चाहते किन्तु फिर वह विद्यालय क्यों जाता है। अतिरिक्त विद्या के केन्द्र एक भी, दो भी, तीन भी हो सकते हैं। सुनने से लगा ये अति-

भारारोपण हो रहा है।

माता-पिता एवं शिक्षक इस भार को उस विद्यार्थी पर लाद रहे हैं। वह हाजरी के लिए विद्यालय भी जाता है तथा बाकी अन्य केन्द्रों पर भी जाता है। इसके लिए वे माता-पिता से पैसे अलग से लेते हैं। उतना ही लेते हैं जितना बाजार का नियम है। कम क्यों ले? (व्यंग्य)। विद्यार्थी तो नहीं समझ रहा बल्कि उसकी प्रतिभा पर भी प्रभाव पड़ रहा है आप ये नहीं समझ पा रहे हैं।

हरेक विषय के लिए पृथक्-पृथक् अध्यापक की नियुक्ति की गयी है क्या ये ठीक है। जब ठीक नहीं है तो इन सब बातों को सरकार के सामने क्यों नहीं कहते। आप ही लोग जाकर कह दो। यहाँ अतिरिक्त शिक्षण हेतु लोग आते हैं। आज अतिरिक्त अंक भी बच्चों को दिये जाने लगे हैं। इसे आप लोग गलत कह सकेंगे? चुंकि आज रविवार है। कह सकेंगे तो तो बहुत अच्छा होगा।

न्याय देने वाले भी यहाँ बैठे हैं, उस पर उनसे उत्तर प्राप्त करना बहुत कठिन होगा। अखबार में तो जैसा हम बोलेंगे वैसा ही छप जायेगा। अतिभारारोपण का मतलब हिंसा होता है, ये पक्का है। आप अहिंसा की बात करते हो और इस प्रकार बच्चों पर हिंसा कर रहे हो। शिक्षा कितनी हेय? क्या श्रद्धा सीखा रहे हैं? ध्यान

रनी विद्यार्थी जीवन में स्पर्धा नहीं होनी चाहिए।
स्पर्धा से शरीर क्षीण, बुद्धि कमजोर एवं वाणी पर भी प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार से तो उसकी प्रतिभा, उसके मन पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। सरकार इस विषय में क्या सोच रही है? हमने पढ़ा था हवा भी है कि कोई बच्चा जो अभी उम्र में पूरा नहीं हुआ (नाबालिग) 18 वर्ष से कम है तो वह हथकरघा आदि में भी काम नहीं कर सकता। उससे काम करवाना अपराध माना जाता है। सुन रहे हो कि नहीं? हिओ To the Point (बिन्दुवार) अदालत बंद तो नहीं है?

इसे अपराध माना तो व्यवसाय (अर्थोपार्जन) के लिए भी वह तभी पुष्ट होने योग्य है। इतनी उम्र का होना अनिवार्य है। आज की शिक्षा के द्वारा बच्चों का बड़ा वर्ग त्रासदी का अनुभव कर रहा है। इतनी बड़ी हिंसा वो भी समाज के बीच में हो रही है फिर भी अपराध की कोटी में नहीं गिना जा रहा है। न्याय देने वाले भी उसी लाइन में हैं।

इनसे तो बच्चों को जैसी शिक्षा अर्जित करना था वह नहीं हो पायेगी। आज परिणाम की पद्धति भी गलत है। यह पद्धति कहाँ से आयी पता नहीं। अंक देने की पद्धति भारतीय शिक्षा पद्धति में नहीं हैं। भारतीय शिक्षा पद्धति को यदि स्वीकार कर

लेंगे तो अतिरिक्त देने की बात ही नहीं।

रिक्ता तिथी के पीछे अतिरिक्त लगता है। रिक्ता समझते हो ? 4-9-14 ये रिक्ता तिथी कहलाती है किन्तु यदि ये ही तिथीयाँ शनिवार को पड़ जावे तो फिर सर्वार्थ सिद्धि एवं अमृत योग बन जाता है। भारतीय शिक्षा पद्धति के अनुसार फीट बन जाये तो सर्वार्थसिद्धि एवं अमृत योग बन जाती है। योग्यता का मुल्यांकन हो, अंक ज्यादा लेना ये ठीक नहीं माना जाता।

पहले बहुत की सुन्दर व्यवस्था थी आज स्पर्धा की बात आ गयी। स्पर्धा में तो होड़ होती है इसमें बुद्धि बल नहीं। हाँकना ही होता है। शारीरिक शिक्षण तो आरोग्य का कारण है, बुद्धि विकास में कारण है पर स्पर्धा तो कषाय वृद्धि का कारण है। इसलिए कभी ऐसी भावना न करो उसके नम्बर कम मेरे ज्यादा आ जाये। ये ही भारतीय संस्कृति के विपरीत है। भारतीय संस्कृति कहती है सभी की बुद्धि जगत कल्याणकारी हो, सभी के नम्बर अच्छे आये, ये बात होती थी।

स्वस्थ होना, विनयी होना, विवेकी होना उस विद्यार्थी के गुण थे। आज इन सबमें अनियमितता ही रही है। 3 बच्चे कम्प्युटर के सामने बैठा है, दशा जन्म से पूर्व ही चश्मा लग रहा है। जन्म से पूर्व गुलाब माँ की आँखो पर उपनयन तो गर्भस्थ शिशु की आँखो पर तो उपनयन

ही लग गया।

माता-पिता के जैसे परिणाम वैसे ही बच्चों में आते है। पैतृक कहते हैं। [खानदानी] हओ। कुछ सुनने में नहीं आता या आधा अधुरा आता है तो हम भी हओ कह देते हैं। युगीन देन है। इसप्रकार "अतिभारारोपण शिक्षा की पद्धति में एक रोग है।" आप प्रयोग करो तो करो मैं इसका समर्थक नहीं हो सकता। ऐसा रोग कि चिकित्सा भी नहीं कर रहा, परिणाम आप देख ही रहे हैं।

जो विदेशी शिक्षा पद्धति है उसे छोड़ देना चाहिए। बाहर से आया समाप्त कर दो देश का देश में रह जायेगा। कूड़ा करकट दूर कर दो, आरोग्य तो भारतीय शिक्षा पद्धति से ही मिलेगा। ऐसा संक्षेप से रखा। चुंकि अदालत में पुछा जाता है क्या ये बात सही है तो बोलो नहीं-नहीं-नहीं। तीन बार बुलवाया जाता है दो बार में तो हाँ हो जायेगा। डबल नेगेटीव वन पोजेटीव के आधार पर।

हम भी चौके में तीन बार शुद्धि बुलाते हैं - मन शुद्धि - वचन शुद्धि - काय शुद्धि। ये बोलते है तभी पड़गाहन होता है। "शुद्धि तो आप अच्छे से बोलते हो, भले ही आप शुद्ध हो या न हो ये बात अलग है।"

अहिंसा परमो धर्म की जय। नुँ

Notes- मन की महिमा → आ०श्री कहते है चिड़िया अपने बच्चों को दुर रहकर भी सेहती रहती है। हमेशा मन से अच्छा सोचें।

8-5-19 "आओ मांजे सम्यग्दर्शन को" सोमवार

संक्षेप से आप लोगो के सामने एक उदाहरण के माध्यम से यह रखना चाहूंगा ताकि आप लोग अवगत हो जाये, ये उद्देश्य है। शुक्ल पक्ष में एकम से चन्द्रमा का उदय होता है किन्तु प्रथम दिन का चन्द्रमा किसी को नहीं दिखता। प्रसिद्धि तो यह है कि दूज का चन्द्रमा नजर में आता है। जैसे गर्भ में शिशु का दर्शन नहीं कर सकते वैसे ही एकम के चन्द्रमा का दर्शन नहीं होता।

ये भी सत्य है एकम के बाद ही दूज आती है। एकम को मानकर चलते है तभी तो दूज का चन्द्रमा निकला। अब धीरे-धीरे पूनमासी के दिन पूर्ण चन्द्रमा दिखाई देता है। क्या पूर्णमासी के दिन जो चन्द्रमा की कलाए है वही एकम के दिन भी है। नहीं ऐसा नहीं है। आप लोगो को तो केवल संख्या जोड़ने की आदत पड़ी है। एक-एक जोड़ते गये दिन को पूर्णिमा हो गयी।

एक-एक कला जो निकलती गयी उसके साथ गुणवत्ता भी दर्शाती है। पूर्णिमा को पूर्ण गुणवत्ता के साथ होता है तभी तो विशेष अमृत झरता है। इस उदाहरण से यह बताना चाहता हूँ कि एकम की अपेक्षा पूर्णिमा के चन्द्रमा के स्वाद एवं चांदनी दोनो में बहुत अन्तर है। इसलिए पूर्णिमा को पूर्णा तीथी माना जाता

है। सुधाकर बोलते हैं।

वह सुधाकर अमृत की एक-एक कला उद्घाटित करता है किन्तु प्रथम दिन जो अमृत वह पूर्णिमा के दिन नहीं। उसकी गुणवत्ता में विकास होता जाता है। यह क्रम 16 दिन तक चलता है। इसी प्रकार आत्मा में चतुर्थादि गुणस्थानों से विकास होता है किन्तु ऊपर-ऊपर स्वाद में बहुत अन्तर होता है। फिर तो नीचे भी आंशिक सिद्ध परमेष्ठी मानना पड़ेगा। अभी यहाँ मेरे सामने समयसार ग्रन्थ लाकर रखा।

रहस्योद्घाटन तो करना ही है। समयसार कोई का भी हो चाहे चांदी का हो या सोने का हो या अन्य कोई भी वह कोई काम आने वाला नहीं। क्यों कि - "सत्तं णाणं न जाणादि" शास्त्र किसी को नहीं जानता। वह जानने में हेतु मात्र है। इसका मूल्य नहीं, यह तो अनमोल (अमूल्य) है। फिर भी आज सब इसके प्रकाशन की होड़ में लगे हैं। हम भी भाव कर लेते हैं। यह अनमोल निधि है, इसे तो आराध्य के रूप में स्वीकार करें।

स्व समय को बताने का यह हेतु है। इसे शास्त्र कहा जाता है। अक्षरों का महत्व नहीं, अर्थ का महत्व है। अर्थ से भी आत्मिक भाव का महत्व है। भाव ही प्रयोजनभूत है। इसी प्रकार स्वाद का महत्व है। चन्द्रमा की चांदनी एवं स्वाद जो पूर्णिमा

को है वह एकम् को नहीं।

इस उदाहरण से यही कहना चाहता हूँ जो चन्द्रमा 16वें दिन है वह अन्य दिन नहीं। अन्य दिन में भी वही अमृत की वर्षा होती है तो फिर हमारा पूछना ये है समुद्र में पूर्णिमा को ही ज्वार-भाटा क्यों आता है। एकम्-दूज-तीज को क्यों नहीं? सुन रहे हो? (हिओ)

(आनंद आ रहा होगा।

अपनी धारणा बदल दो। वह चन्द्रमा 16वें दिन का अलग ही होता है। कला तो हो गयी पर वैसी अमृत की वर्षा नहीं होगी। इसी तरह सिद्धों में जो उल्लास है वह चतुर्थ-पंचम अथवा अन्यत्र नहीं। अपने सम्यग्दर्शन को मांजना है-मचाना नहीं है।"

अहिंसा परमो धर्मः की जय हो

वैद्य रवि पाराशर-बेंगलोर (आयुर्वेदाचार्य)

"नाड़ी देखकर सब बताना (आ० श्री से प्रभावित) सही निदान की यही पद्धति है। प्राचीन ही नहीं भारतीय पद्धति है। उन्होंने कहा- दवाई (औषध) की बजाय आहार ही ऐसा लो जो आपके आरोग्य के अनुकूल हो वे सारी बातें जो आ० श्री समय-समय पर बताते रहते हैं उनकी बातों से मेल खायी (उनके द्वारा दिये 118 अन्य डायरी में हैं।"

9-5-19 "अकल बड़ी या ज्ञान" मंगलवार

एक व्यक्ति जो राजा के दरबार में रहता था पर बहुत कुशल था एवं बहुत ज्ञान रखता था। राजा भी उसे हेरव सोचता था आज नहीं कल ये मुझसे राज्य छीन सकता है। यही विचार कर उसने सोचा कि ऐसे काम में लगा दिया जाये ताकि भविष्य में ऐसा कोई काम न कर सके। अब क्या करना है? व्यक्ति ने पुछा। वह बहुत विनम्र भाषा में बोलता था पर उसकी कुशलता राजा को खटकती रहती थी।

राजा ने कहा - कुछ नहीं करना बस वह पानी भाकर मुझे दो जो ओस के कणों से संग्रहित हो। सुन रहे हो? ओस के कण घास पर मिलेंगे। उन ओसबिन्दुओं को एक कटोरे में इकट्ठा करके मेरे लिए लाकर देओ, मुझे उससे प्यास बुझाना है। अब वह गया पर ओस के कणों को इकट्ठा कैसे करे? जैसे ही वह तृण पर से उठाने की कोशिश करता वैसे ही वह ओसकण टूटकर नीचे गिर जाता। अब क्या करें?

यदि नहीं देता है तो यहाँ से जाना पड़ेगा। किन्तु बुद्धि से सब संभव है। बुद्धि तो बुद्धि होती है। उसने अपना दुपट्टा घास पर फैला दिया और उसको लोटे में नीचोड़ दिया। ऐसा तीन-चार बार किया लोटा भर गया। राजा के पास ले जाकर बोला - लिजिये अपनी प्यास बुझा लो। कैसे किया? कुछ भी नहीं किया, बस आपके सामने

प्रस्तुत है।

प्रभु आपकी आज्ञा नहीं तो बुद्धि भी काम नहीं करती, इसलिए यह सब श्रेय आपको ही जाता है। ऐसा-ऐसा किया। तब राजा को ज्ञान नहीं अक्ल आ गयी। ज्ञानि एवं अक्ल में अन्तर है। अक्ल आने के लिए अक्ल के दांत भी आना चाहिए। छोटे बच्चों के पास अक्ल नहीं और आपके भी निकल गये हों तो...। 30 वर्ष के बाद अक्ल दाढ़ एवं 40 को छुने पर विवेक आता है।

जीवन में उन्नति चाहते हो तो अपनी प्रतिभा का सही उपयोग करो। प्रतिभा बहुत है। आत्मा का स्वभाव है पर हम उसकी प्राप्ति में कितना काम कर रहे हैं। "प्रयोजनभूत तत्त्व की प्राप्ति में कम समय और निष्प्रयोजनभूत तत्त्व हेतु रात-दिन लगे हैं" ध्यान रखो - प्रयोजनभूत तत्त्व के श्रद्धान से सम्यग्दर्शन होता है। संसार में चारों ओर निष्प्रयोजन भूत तत्व भरें है उसके श्रद्धान से सम्यग्दर्शन होनेवाला नहीं। उनसे आपका कोई मतलब सिद्ध होने वाला नहीं।

जीव-अजीव-आस्रव-बंध-संवर-निर्जरा और मोक्ष ये सात तत्त्व है। ये सात तत्त्व प्रयोजनभूत है। इनका ज्ञान नहीं तो भी इन पर श्रद्धान तो रख ही सकते हैं। इनमें आस्रव एवं बंध संसार के कारण तथा संवर एवं निर्जरा मोक्ष के कारण है। जीव त्रैकालिक है - मोक्ष त्रैकालिक नहीं। हाँ!

मोक्ष अभूतपूर्व है।

इसलिए मुक्ति (मोक्ष) को अन्त में रखा। जीव ही मुक्त होता है। जीव कर्ता एवं भोक्ता है, वही ज्ञाता-दृष्टा भी है। सातों तत्त्वों का ज्ञान होना मात्र ही पर्याप्त नहीं, आस्रव-बंध हेय है तथा संवर-निर्जरा के माध्यम से पूर्वबद्ध कर्मों को निकालना भी है। इतना कर लो फिर मोक्ष तो सामने खड़ा है। "मोह से प्रभावित होना छोड़ दो मोक्ष प्राप्त हो जायेगा।"

प्राणी ज्ञान का दुरुपयोग कर रहा है, इसीलिए मुक्ति भी नहीं मिल रही। अपने इस बहुमूल्य जीवन को नष्ट कर देता है। इसी ज्ञान के दुरुपयोग से संसार का परिभ्रमण करता रहता है। वह से यहाँ तथा यहाँ से वहाँ दिवार पर गेंद मारता है पुनः अपनी ओर आती है यह खेल खेलता रहता है। आपको क्या चाहिए?

विद्यालयों में यही शिक्षा दी जानी चाहिए ताकि वह संसार के परिभ्रमण से बच सके। बच्चे सही दिशा में पुरुषार्थ करें यही शिक्षा का मुख्य उद्देश्य होना चाहिए। इतना ही पर्याप्त है।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

Note चार इन्द्रियाँ दो-दो लेकिन काम एक करती है जबकि रसना इन्द्रिय एक है परन्तु काम दो करती है। एक तो चखना दूसरा बकना (वचन)।"

10-5-19 "कर्मों को पिघलाने का सूत्र" बुधवार

बहुत दिन की बात है लेकिन प्रासंगिक बात है। आप लोगों का ध्यान उस ओर चला जाये। सुनार के यहाँ सोने को पिघलाते हुये/पानी होते हुये देखा। कितना तापमान दिया होगा ये ज्ञात नहीं। परन्तु इतना अवश्य है सोने को पिघलाने में जो तापमान दिया जाता है वह आपके मूग-मोठ-चना आदि को पकाने अथवा चुरने के लिए जो तापमान दिया जाता है वह पर्याप्त नहीं। सोने को पानी बनाने हेतु तापमान बहुत चाहिए।

ये तो ठीक है। सोना पिघल गया, पानी बन गया लेकिन उसका आधार क्या है? वह कौन है जो इसके पानी होने के उपरान्त भी सुरक्षित है। अन्यथा उसको भी फाड़कर नीचे चला जाये। वह मिट्टी का पात्र है। सुन रहे हो? हाँ मृत्तिका की महिमा बहुत दूर तक है। जिस मिट्टी ने आधार दिया उसको कितना तापमान दिया होगा।

उसी आधार पर ही तो वह सोने को भी सुरक्षित रखती है। अब उस सोने के पानी को आप जिस भी साँचे में ढालना चाहते हो उसमें ढाल सकते हैं। उसकी मुद्रा - चैन - असली - नकली जो बनाना चाहो बना लो। क्या चाहते हो, वह

बना लो।

उसकी महिमा हमारी दृष्टि में आ गयी। पुद्गल गुण इस मिट्टी को किस तरह से बनाया गया तो उसके लिए भी तापमान दिया गया। उसी आधार पर वह पात्र ज्यों का त्यों बना हुआ है। कर्मों को गलाने के लिए भी बहुत तापमान चाहिए किन्तु इससे शरीर नहीं गलेगा। भीतर वज्रपटल जैसे सघन वे कर्म भी पिघल जाते हैं।

इसके लिए क्या करना होता है महाराज? कुछ नहीं - जो कुछ भी थोड़ा बहुत जोड़ा है उसे छोड़ना होता है। इतना ही करना है। हाँ! अगले जीवन में भी नहीं माँगना, जब तक मुक्ति नहीं मिले तब तक नहीं माँगूंगा। प्रभु का नाम भर लेते रहो। किन्तु लोह ऐसे पिघलता नहीं। इसे अच्छे ढंग से पिघलाओ। वह अन्यत्र नहीं यहीं पिघलेगा। यहाँ कितना तापमान होगा देख लो।

वीतराग भगवान के बारे में क्या कहें वे तो सभी के मोह को पिघला देते हैं। आप भी जल्दी-जल्दी अपने सोने को पिघला लो। आपमें भी रत्नत्रय प्राप्त करने की क्षमता है। परन्तु पूरा का पूरा दान देंगे तभी तो पिघलेगा। थोड़ा सा रोदा-रोदी करने मात्र से नहीं चलेगा। हम मंत्र पढ़ेंगे तो सब हो जायेगा। हमारे यहाँ एक कमरा ऐसा है, जिसमें --। तो आपके पास

क्यों गया, हमारे पास नहीं आया।
कह भी रहा है - महाराज का आशीर्वाद होगा तभी मिलेगा। हमारे पास आजाये सब काम हो जायेगा। आप तो फिर भी कमीशन मान्गेंगे हम कोई कमीशन नहीं चाहेंगे। ये ध्यान रखना यदि मोह का त्याग नहीं करेंगे तो वह जमीन के भीतर से भी खिसकेगा। दूसरे के घर में चला जायेगा। नीचे भी पुण्य - पाप के मार्ग बने है।

आपने देखा / सुना होगा / इसी पुण्य - पाप के आधार पर वह खिसकता है। हीरा भी कोयला बन जाता है और मोह कम कर दो तो कोयला भी हीरा बन जाता है। सब पुद्गल का परिणमन है। मोह भी पुद्गल है। चांदी - सोना - हीरा भी पुद्गल है। चांदी चढ़ाकर सोना, सोना चढ़ाकर हीरा मांगने वालों बोलो क्या चाहिए? पूछलेना अपने घर वालों से. पत्नि को अवश्य पूछ लो। किसी से कहियो नहीं।

अपने मन को तो कहोगे या नहीं। अभी हाँ कह रहा है बाद में मना कर दे तो...! इस प्रकार तापमान द्वारा वह स्वर्ण तो पिघला किन्तु पात्र नहीं पिघला। इसी प्रकार आत्म तत्त्व को शुद्ध बनाना है। स्वर्ण - स्वर्ण हो जाये और पानी - पानी हो जाये। भेद विज्ञान से ही ये संभव है। प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि

सबअपने भावों से उन कर्मों को पिघला दें।

महाराज बहुत मंदी है। ध्यान रखो मन्दी लाई जाती है, ऐसी मंदी हमने देखी है। मोह के कारण ऐसा होता है। 100 टंच सोना चाहते हो तो मोह को कम कर दो। समय आपका पूरा हो गया है। एक बात और, बार-बार कहना ठीक नहीं। इतना तो कहना होगा कि दो व्यक्ति बुलाकर यहाँ 200 को बुलाते हो। पहले एक पंक्ति फिर दो अब कितने लोग करने लगे।

कुछ लोग बार-बार चक्कर लगाते हैं। "चक्कर नहीं परिक्रमा लगाया करो।" चक्कर तो आपने देखा होगा शादी (विवाह) में फेरे पड़ते हैं। यहाँ चक्कर नहीं शक्कर है ध्यान रखो। 200 नहीं 2000 भी आ जायें, बैठे-बैठे काम हो सकता है। एक-दूसरे के हाथ लगाया करो। करंट होता है न विद्युत प्रवाह। सब ध्यान रखना।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

"खीर"

आचार्य श्री सागर जी महाराज अपनी प्रत्येक चर्या से अवगत कराते रहते थे कि कब-कैसा आहार-पानी आदि होना चाहिए। एक बार ब्रह्मचारी अवस्था की बात है वे आहार करके लौटे तो उन्होंने कहा - आज जो खीर बनी थी वह जवानों के खाने योग्य थी। मतलब गरिष्ठ होगी।"

11-4-19 "सार-सार को गहि रहे" गुरुवार

एक आदमी अपने हाथ में एक थाली लिये हुये है और वह कुछ बीन रहा है। कुछ को अलग कर रहा है और कुछ को अपनी ओर ले रहा है। यूं समझ लें थाली भोजन की थाली है या फिर भोजन बनाने की पूर्व भूमिका। एक को फटकार रहा है एक को पुचकार रहा है। जो प्रयोजनभूत है उसे रख रहा है. निष्प्रयोजन को बाहर कर रहा है। आप कहेंगे - महाराज आप भी तो फटकार देते हैं।

आप लोगो की तरह यहाँ प्रतिदिन हजारो लोग आते हैं। व्यवस्थापक भी हैरान हो जाते हैं। आपको यहाँ पूर व्यवस्थित बैठना चाहिए। यहीं सभी बैठ जायेंगे तो जो दर्शन नहीं भी कर रहे हैं तो वे देख तो लें। वे किसको देखना चाहते हैं? आपको देखना चाहते हैं क्या? चीन की दीवार खड़ी हो ऐसे खड़े हो जाते हैं। कौन वोट देगा? पुरी की पुरी जनता विरोध करने लगेगी।

आप लोग बस अपने को ही देखते हैं, थोड़ा सा दुसरे को भी देख लो। आप भी दर्शन/श्रवण करने आये हो वो भी दर्शन/श्रवण करने आये हो। सामने खड़े हो जाते हो तो वह पूज्य को देख नहीं पा रहे हैं। चुनाव में खड़े होते हैं ऐसे लोग पीछे जाओ। महाराज बहुत दुर से आते हैं तो मन में ऐसे भाव

तो होते ही हैं। हम छद्मस्थ है / कमजोर है।

ध्यान रखो दूर को भी निकट जानना चाहिए। अभिमुख हो। ग्रन्थों में आचार्यों ने आभिनिबोध ज्ञान के बारे में कहा - वह सामने से ही काम करता है भले ही दूर हो। पास में भी है पर सामने नहीं तो काम नहीं करेगा। वह विषय बनना चाहिए। हेय का ज्ञान होते ही उसे दूर कर देना चाहिए व्यक्ति को नहीं वस्तु को। थाली में भेद-विज्ञान को स्वीकारना है। ऐसा नहीं कि जिसको फटकारना है उसे तो रख लिया।

कंकड़-कंडड़ रख लो / जिसे रखना है उसे हटा दिया। साग-सब्जी बनाते समय सब ध्यान रखा जाता है। किसको-कितना पुचकारना ये भी ध्यान रखा जाता है। जो ज्यादा नटखटी बच्चे होते हैं उनको पुचकारा नहीं जाता। उनको सीधा रखने के लिए फटकारना आवश्यक है। इसलिए बहुत ही कठीन है- हेय को अलग करना।

उपादेय के ग्रहण को कभी भूलना नहीं चाहिए। हेय को जो छोड़ देता है, समझ लो वह भेद विज्ञान में निष्णात है। पाप कर्म को हेय दृष्टि से फटकारते जाओ। ये ध्यान में रखना पुण्य कर्म की कभी निर्जरा नहीं की जाती। आचार्यों ने किसी भी ग्रन्थ में पुण्य की निर्जरा नहीं बतायी। हां

दो प्रकार का बंध है - स्थिति-अनुभाग बंध।
स्थिति सभी (पुण्य
कर्मों की (उत्कृष्ट आयु को छोड़कर) पाप रूप ही होती
है। इसलिए प्रशस्त प्रकृतियों की स्थिति को
भी घटाना होता है किन्तु पुण्य/प्रशस्त कर्मों के
अनुभाग को कभी नहीं घटाते, वह तो बढ़ता ही
चला जाता है। बंध क्या है? कौन-कौन गुणस्थान
में होता है इसका भेदविज्ञान होना चाहिए। जो हेय
है उसे फटकारते जाओ।
इतना करोगे तो मोक्षमार्ग
को जान जाओगे। ये ही नहीं हो पाता, समय चला
जाता है। जो त्यागने के परिणाम करता है वही विद्वान
माना जायेगा, जो छोड़ने में नहीं है वह अविज्ञ है।
ज्यादा इकट्ठा कर रहे हो वह पाप है या पुण्य
इतना तो जानो। दान देना अलग वस्तु तथा हेय मानकर
छोड़ना अलग है। ये उसके में आता है। पूजक
पूजन एवं पूजन की सामग्री तीनों अलग है।
जो छोड़ने योग्य है वह
हेय है। खाने की चीज नहीं है। सुन रहे हो? (हओ)
समझ में आ रहा है न? भोजन की थाली तो ग्रहण
करने योग्य है किन्तु भोजन की सामग्री (थाली) ऐसी
प्रकार दानपुण्य करते समय समझना चाहिए। हेय-
उपादेय की पूरी जानकारी होना चाहिए, चाहे वह

छोटा हो या बड़ा, अमीर हो या गरीब।
मोक्ष मार्ग में भेद नहीं होता।
हर पूजक का आदर करना चाहिए। देवों को भी बुलाते हैं - साथी बनाकर पूजा में सम्मलित करते हैं। कल पात्र चयन हुआ बताते हैं। (गोटेगांव में) नोट लेकर आये हैं, इससे भी ज्यादा भीड़ यहाँ पहले से ही है। पूजन के पात्र बने हो ये ध्यान रखें। समोशरण में असंख्यात देव-देवी, पशु तिर्यञ्च रहते हैं। मनुष्य तो गिनती के रहते हैं। देव भी विनती करते हैं।
ये बात अलग है जो विनती मनुष्य करते हैं वह देव नहीं। वह बहुत श्रेष्ठ विनती है। दक्षिण में विनन्ति भी कहते हैं। विनय के साथ जो की जाये। "आप गिनती तो सीखते हैं, विनती नहीं सीखते।" भगवान के सामने जब जाओ उनके चरणों में सब सामग्री चढ़ा दो। थाल भी चढ़ा दिया - सामग्री भी अपने आप को भी चढ़ा दिया। आप सामग्री चढ़ा देते हैं थाल वापस ले जाते हैं।
यहाँ तो चढ़ाने वाले को ही चढ़ा देते हैं। तब कहीं जाकर भगवान सुनते हैं। यहाँ तो सुनाते हैं - सुनते नहीं। ऐसे में अभी नम्बर नहीं आयेगा। सर्वस्व का त्याग करना होगा। तत्त्व सूत्र में आया - स्वस्यातिसर्गोदानम् -- भगवान के

पास तो ठीक जब महाराज चौके में आते हैं तो क्या करते हो? सब स्वीकार कर लेते हो।

नवधा नहीं। भक्ति भी कहेंगे तो स्वीकार है। स्व के दो अर्थ हैं- स्व का अर्थ अपना एवं स्व का अर्थ धन भी होता है। केवल जड़धन ही धन नहीं चेतन धन को भी धन मानो। यही पाक्षिक सम्यग्दर्शन का लक्षण है। भगवान का पक्ष स्वीकारो तभी वे आपको स्वीकार करेंगे। "हातुं योग्यं हेयम् तथा आदत्ता योग्यं आदेयं" हेय को छोड़ना उपादेय को ग्रहण करना किन्तु उपाय को भी नहीं छोड़ना चाहिए।

पाप को निर्मूल करने का यही मात्र उपाय है। निर्जरा पाप की ही पुण्य की कहीं भी निर्जरा नहीं। स्वाध्याय प्रेमी यदि मिलें तो बता देना। वह तो बढ़ता ही चला जाता है। चतुस्थानीय बंध हो जाता है। पुण्य (शुभ प्रशस्त भावों द्वारा ही आत्मा पवित्र बनता है। पूयते... ये सब उपाय कहे, उपादेय तो सिद्धत्व है।

इतना ही पर्याप्त है। रोज-रोज न कहना पड़े आप शान्ति के साथ आकर बैठ जायें। व्यवधापक उसी में लगे रहते हैं। शांति और सुख से बड़ा और क्या है? अपने आप ही मालुम चल जायेगा। भेद विज्ञान एवं थाली के उदाहरण को याद रखना।

अहिंसा परमो धर्म की जय। ॐ

12-5-19 "मारक बना तारक" शुक्रवार

हीरा बहुत कठोर होता है। वह रत्न होता है। भिन्न-भिन्न लोगो ने उसका भिन्न-भिन्न अध्ययन किया है। इतना कठोर कि उसको पकड़ना कठीन होता है। लौह पर एक कणिका रखकर घन को पटका किन्तु उस कणिका को कुछ नहीं हुआ। वह उसे धुत्कार पाकर दूर पड़ी हँस रही है। मुझे कोई पकड़ नहीं सकता। इतना कठीन है फिर भी कलाकर उस पर औजार चलाकर उसमें अनेक पहलुओं का निर्माण करते हैं।

वह सहस्त्रपहलु वाला हीरा बहुत कीमती बन जाता है। उसमें बहुत कालिन्य होते हुये दुसरे तरफ से भी किया जाता है। उसकी कठनाई को भी समाप्त कर सकते हैं। वैद्य लोग उसको औषध रूप में प्रयोग करते है। शरीर की जो व्याधी होती है, उसे शान्त कर देते हैं। से ऐसे सीधे नहीं ले सकते किन्तु भस्म बना ली जाये तो ले सकते हैं। इतना कठीन भस्म कैसे? सुनार कहता है- इसे अग्नि का ताप देना होगा। अग्नि इसमें प्रविष्ट करेगी। एकाया प्रविष्ट होता है।

विद्या के माध्यम से एक व्यक्ती दूसरे व्यक्ति के भीतर प्रविष्ट हो जाता है। उसे ज्ञात नहीं होता। अग्नि भी हम प्रवेश करके उसे भस्म कर देंगे। उसका कालिन्य सब समाप्त हो जायेगा। ऐसे यदि हीरा ले लेंगे तो वह इतना कठोर एवं मारक होता है किन्तु अग्नि

के प्रवेश करने से वही भस्म हो गया।
भस्म को पुनः भस्म नहीं किया जाता। उसका जो कुछ भी सत्व था वह भस्म रूप में हो गया। जो हीरा मारक था वही औषध बन गया। अब वह रोगी को नहीं रोग को मार देगा। पर्याय बदलने से ऐसा हो गया। अग्नि के योग से रोग को समाप्त करने की क्षमता आ गयी। इसकी कठोरता समाप्त हो गयी। इतना कठोर दूसरे को काट सकता था। ध्यान रखिये - काटने की क्षमता को भी समाप्त किया जा सकता है।
आपके पास इससे भी कठोर - कठोर कर्म चिपके हैं। उस पर कितने भी घन पटको चूर नहीं होंगे, ऐसे भस्म करना चाहो नहीं होंगे। ऊपर की काया तो भस्म हो सकती है पर उस काया का आधार वह कार्मण शरीर अग्नि के द्वारा भी भस्म नहीं होता। इस शरीर पर मार पड़ती है तो दुःख का संवेदन होता है। मखमल मार से दुख तथा घन की मार से दुख नहीं अपितु शाबासी का अनुभव होता है।
मोह के कारण इसकी दशा ऐसी हो गयी। सब कर रहा है पर मुक्ति नहीं मिल रही। जिससे ऐसी दशा हुई है उसे हटा देते हैं तो संभव है छुटकारा मिल जाये। जिस राग के द्वारा कर्म बंध हुआ वह राग छोड़ देते हैं तो एक लेकेड़ भी

नहीं लगेगा / कर्म को हटना ही होगा।

वह रुक नहीं सकता। इस प्रकार के वीतराग भाव से शरीर भी जलेगा नहीं। दुनिया की अग्नि से शरीर जल जाता है परन्तु इन वीतराग भावों से शरीर नहीं जलता। ये भी एक रसायन है। चाहे तो कर सकते हैं। चाह है तो राह है। अनंत काल हो गया अनंतकाल और हो जायेगा कोई दया करने वाला नहीं। जिन्होंने साधना की उन्हें देखकर आप भी करें तो क्षमता आ सकती है। कर्मों पर श्रद्धान करेंगे, वीतरागता पर श्रद्धान तो लड़ियाँ की लड़ियाँ टूटने में देर नहीं लगेगी।

बस उद्घाटन की आवश्यकता है क्षमता तो विद्यमान है। यहाँ सहजशुद्ध बन रहा है, पहले भी कहा बार-बार कहना पड़ता है। उस वीतराग मुद्रा के नासाग्र नेत्र से कितने कर्मों का सफाया होगा, विश्वास करो। इसके लिए मात्र अन्तर्मुहूर्त चाहिए। बहुत वर्षों की आवश्यकता नहीं। वर्षा थोड़ी होती है तो दलदल मच जाता है और यदि झला के झला मतलब मात्रा बढ़ जाये तो दलदल साफ / निर्दल हो जाता है।

वर्षा का अतिरेक हो। इस वैभव के प्रति राग हो, विषयों के प्रति नहीं तो समझना राग साफ हुये बिना नहीं रहेगा। वह राग तो पर आश्रित राग है / शुभ भाव / पुण्य भाव से पाप को समाप्त

किया जा सकता है, ऐसा ग्रन्थकारों का कहना है।
बस पुण्य का उपयोग सांसारिक कार्यों में नहीं करना। ये पथ्य है। रोग दूर करने के लिए मात्र औषध ही पर्याप्त नहीं, पथ्य भी जरूरी है। कर्मबंध को हटाना है तो वीतराग के प्रति श्रद्धान हो जाये। आपका निस्तार अवश्य है। इस प्रकार हीरे के उदाहरण के माध्यम से कर्म की कठोरता को रखा। एक बार वह सम्यग्दर्शन मिल जाये तो अन्तर्मुहूर्त में मुक्ति मिल सकती है।
प्रयोजन मात्र कर्मों का क्षय करना है। "तप्यते कर्म क्षयात्"। दूसरे के माध्यम से यह संभव नहीं। "जैसे राग से कर्म बांधा वैसे ही वीतराग भाव से छूट सकते हैं।" आप पर आधारित है। चाहिए आपको? [हुओ] हुओ कहना भी कठिन था। हुओ के बाद सांसारिक प्रलोभन समाप्त हो जाते हैं। उन्हीं वह प्रलोभन मिटा नहीं किन्तु मिट सकता है। उसी वीतराग मुद्रा का दर्शन करें। यहाँ उसी का प्रबन्ध हो रहा है। पंचकल्याणक में भी यही क्रिया की जाती है। मैं भी प्रतिदिन उदारता के साथ आधा घण्टा दे देता हूँ।
लाभ का यदि दुरुपयोग होगा तो हम रोक भी सकते हैं। भावना यही रहती है इन लोगों का कल्याण हो। हमारा भी इससे बड़ा काम हो जाता है। हम कहेंगे नहीं। हमें तो कई गुना लाभ से प्राप्त हो रहा है। आपको भी अपने परिणामों को सुरक्षित रखना होगा। आत्मा को तपाने से कर्म कालिमा दूर होती है, हम सब उसी का उपक्रम करें। अहिंसा परमो धर्म की जय।

अष्टमी

13-5-19 "सुगन्धी भावों की" शनिवार

हजारों व्यक्ति है उन हजारों व्यक्ति के हाथों में घड़ियाँ है, वे सभी आपस में टकराती है। मेरे पास यहाँ भी एक घड़ी रखी है। कहा गया ये 9 मीनिट आगे है। ऐसे कैसे चलेगा, एक घड़ी से नियमित रूप से चली। फिर भी कम समय में अपना विषय रखता हूँ।

एक व्यक्ति ने कहा ये सुगन्धित पदार्थ है इसे नासिका से सुंघते चले जाये मस्तिष्क पर अवश्य प्रभाव पड़ेगा। दूसरे दिन भी प्रयोग किया किन्तु जल में डालकर सलाद पर लगा ले तो 12-15 घण्टे प्रभाव रहेगा। ये प्रयोग अपने तक सीमित रहे औरो तक कैसे फैलाये। कीमती चीज है। बात समझ में आ गयी। उसकी बत्ती-अगरबत्ती बनायी गयी। पुरी सभा भरी है। एक कोने में धुआ जिस ओर से आ रही है वहाँ लगा दी।

एक मिनिट भी नहीं हुआ, हजारों व्यक्ति की नाक में...। नाक कितनी है? [एक] देखो जल्दी कर दी न। दोनों नाक से तत्त्वों का ज्ञान (गंध) होता है। इन्द्रिय की अपेक्षा तो एक-एक ही है। एक नाक बंद हो जाती है दूसरी से काम होता है कि नही? तो एक अगरबत्ती से हजारों व्यक्ति लाभान्वित हो गये। खर्चा भी कम हुआ और अपव्यय से भी बच गये। दूर तक वह सुगंध चली जाती है। इस अगरबत्ती को पहचानने वाला बिना खर्च के भी दूसरे के माध्यम से भी काम हो जाता है। हम सोचते कम है - काम में ही लग

जाते हैं।

अथवा सोचने में ही सम्पूर्ण समय लगा देते हैं कभी कुछ भी नहीं करते। योजना भी हो एवं काम भी हो दोनों का अनुपात निश्चित हो तभी कार्य हो पाता है। इसप्रकार कम खर्च से भी अगरबत्ती से बात कर लेते हैं बहुत कुछ किया जा सकता है। हम भी इस योजना से लाखों का भला कर सकते हैं। ये ध्यान रखो - पहले स्वयं को लाभान्वित करें। जो स्वयं खुशबुदार है वही और को सुरभि बांट सकता है।

गंध की कीमत जानो, इसका उपयोगकरो इससे गरीब भी लाभान्वित होता है। ऐसा नहीं कह सकते कि - ऐ तुम मुझे मत सुंघो। तो क्या नाक कटवा फैंक दे क्या? या फिर नाक मरोड़ लें/सिकोड़ लें। सुगन्धी के विचार में पैसा नहीं लगता यदि दाम नहीं है तो भी भाव तो कर ही सकते हैं। इन भावों का इतना लाभ होगा की रख ही नहीं सकोगे।

इसके लिए ताला-चाबी की आवश्यकता नहीं। आसमान लम्बा-चौड़ा है। आप विचार करें नहीं कि इधर सभी लाभान्वित होते चले जाते हैं। कई डिब्बियाँ तो युगों-युगों से खोली ही नहीं गयी। इसलिए आत्म विश्वास से काम लेओ। हमारे मन के द्वारा सबका भला होयदि सोचते हैं तो सबका भला होता है। भीतर विश्वास होना चाहिए। जलकी तरंगे जहा

तक वायु की तरंगे वायु तक ही सीमित पर विचार (बुद्धि) की तरंगे जहाँ तक पहुँचाना चाहते हो वहाँ तक प्रभाव दिखाती है।"

यहाँ से स्वर्ग में भी आपके विचार टकरायेंगे। बुरे प्रभाव मत करो हमारे अच्छे परिणाम स्वर्ग में भी हलचली पैदा कर सकते हैं। ऐसे अनेक डिब्बे युगों से है जो खुले ही नहीं। एक आध बार तो प्रयोग कर लो। मैं क्या-क्या करूं सब मैं ही करूं क्या? आप कुछ भी काम नहीं करना चाहते हो। एक काम करो निष्काम हो जाओ। निष्काम होना और अच्छा है।

काम करने वाला व्यक्ति ही निष्काम होता है। सबसे बड़ा काम तो उसी के पास है। लेकिन कामना (चाहना) मत रखना। ऐसे काम से तो खुशबु और बढ़ेगी। इतना काम हो रहा है तो बदले में कुछ नहीं चाहना। संसार में तो चाह लगी ही रहती है। चाहना ही बदबुओं को निमन्त्रण देना है।" आप रागी-द्वेषी - कामी - क्रोधी - मोही व्यक्ति से कुछ मांगोगे तो क्या मिलेगा? सुगन्धी चाहते हो तो मांग मत रखो। हाँ घृणा (द्वेष) भी नहीं करना।

सुगन्धी उसी को मिलती है जो दुर्गन्धी को भूल जाता है। अपने बच्चों का भूतभूत साफ करते हो कि नहीं? अपने बेटे में राजकुमार की कल्पना करते हो। यदि सभी में राजकुमार का रूप देखने लग

जाओ तो गरीब कोई रहेगा ही नहीं।
भीतर जो सुगन्धी भरी है उसी को उद्घारित मात्र करना है। सम्यग्दर्शन-सम्यक् ज्ञान एवं सम्यक् चारित्र का कोई मूल्य नहीं होता। यहाँ बैठी जैन समाज से मैं प्रश्न पूछ रहा हूँ कि आप जो पुस्तक छपाते हो उस पर सर्वाधिकार सुरक्षित क्यों लिखते हैं। जितने भी पूर्वाचार्य हुये उन्होंने क्या लिखा? मूल्य की जगह सदुपयोग - स्वाध्याय लिखा।

सम्यग्दर्शन का क्या इतना ही मूल्य है। ये दुर्गन्ध कैसे आ गयी। उसका परिचय नहीं तो किताब में तो सुगन्धी नहीं होगी। ध्यान रखो - "सुगन्धी भावों से हुआ करती है ना, सिक्के में नहीं।" यदि भाव में दुर्गन्ध है तो उसे केसर के बोरे में भी बंद कर दो तो भी दुर्गन्ध का ही अनुभव होगा सुगन्ध का नहीं। आप उस सुगन्धी के बारे में सोच तो सकते ही हो।

उसी का ध्यान करके तो माँ के पेट में 9 महिने उस महादुर्गन्धी को सहन किया कि एक दिन आज नहीं कल मैं बाहर चला जाऊँगा। ये भी सोचा कि अब दोबारा इस गर्भ का कष्ट ऐसी दुर्गन्ध में नहीं आऊँगा। आप जाना चाहते हैं? नहीं? आपकी तो बदबू में ही जीवन यापन

करने की आदत पड़ गयी है।

अपने आपको बुरे विचारों से यदि नहीं बचाते तो वह खुशबु किस काम की? जो भीतर में भण्डार है उसका उपयोग नहीं हो पा रहा है। तो हमारे इस उदाहरण को याद रखेंगे। अगरबत्ती - पाउडर एवं तिलक पानी डालकर जो लगाया सबमें सुरभि है पर किससे कितना लाभ ये तो जान ही गये होंगे।

एक कोने में बस एक अगरबत्ती जलायी पुरा का पुरा सभा मण्डप को ही पवित्र कर देगी। उसका असर भी घण्टो तक बना रह सकता है। जहाँ भी जायेंगे हमें सुगन्धित पदार्थ आपको मिल जायेंगे। प्रभु के चरणों में पहुँचना समोशरण में तो अन्तर्जगत की सुगन्धी बंटती ही रहती है। उसी सुगन्धी को लेने के लिए स्वर्ग के देव भी धरती पर उतर कर आ जाते हैं।

आप यहाँ से ऊपर ही देखते रहते हैं, वहाँ जाना चाहते हैं। कौन भेज रहा है? वहाँ जाने के उपरान्त भी सुगन्धी मिले यह थोड़ जरूरी नहीं। "जिस व्यक्ति को धरती पर सुगन्ध नहीं आ रही उसे स्वर्ग में क्या आयेगी?" अच्छी नाक तो मिल जायेगी पर वह सुगन्ध नहीं ले पायेगी। "विचारों के अन्तर्जगत में सुगन्धी रखो तब काम होगा।" ज्यादा समय

तो आपका नहीं लेना चाहता।
जो कुछ लाभ मिला था उसी में दो चार मिनिट अपनी ओर से डालकर आप ही को दे दिया। आज की इस सुगन्धी को सूंघिये, नहीं? क्यों याद रखोगे? [हंसी] दूसरों को भी देओगे? [हंसी] सबके लिए हवा कर रहे हो।
अहिंसा परमो धर्म की जय।

संस्मरण - 1. "आंखों नये-नये चिंतन को अधिक महत्व देते हैं। एक बार खजुराहो में जयद्रथवध की पुस्तक पर वाचना होना था। उनके पुराने निशान वाली पुस्तक उन्हीं को दी गयी उन्होंने कहा ये तो आप लोग ले लो हमें ये दूसरी मिल गयी मतलब अपने निशान लगे थे पर इस बार शुद्ध हटकर चिंतन देना है इसलिए पुरानी पुस्तक नहीं ली। हुआ ऐसा ही एक जगह उन्होंने करेक्शन कराया होगा इस बार कहा नहीं इस शब्द का ऐसा भी अर्थ निकलता है।"

2.
पारा को शोधित हर कोई नहीं कर सकता जो आयुर्वेद के जानकार एवं अनुभवी वैद्य होते हैं वे ही शोधित करके भस्म बना देते हैं। एक बार सदलगा में जब मैं छोटा था तो किसी व्यक्ति को पूर्ण शोधित नहीं (कच्चा रह गया) ऐसा पारा दे दिया। उसके पूरे शरीर से त्वचा में से मांस जैसा बाहर आने लगा (कोढ़ हो गया हो) लगभग 6 माह में वह पुनः स्वस्थ हो पाया।"

GROUP

15-5-19 "जल की तरह है आत्मा" प्रातः रविवार

आप कोई कार्य करने में व्यस्त थे, वहीं पर अचानक कैसे हो गया पता नहीं आग लग गई। आग को बुझाना परम कर्त्तव्य है। किसी को बुला भी नहीं सकते, समय लग जायेगा। कुछ अन्य वस्तु आदि ढूंढ भी नहीं सकते क्यों कि उसमें भी समय लग जायेगा। आप के हाथ में एक तपेली (भगोनी) है, उसमें पानी है, पानी गरम है। अब आग बुझाने को पानी तो चाहिए पर ठण्डा नहीं गरम पानी है। आप सोचते हैं गरम पानी आग कैसे बुझायेगा?

जिसका स्वभाव तो ठण्डा है पर वह गरम हो गया अब आग कैसे बुझायेगा। आप सुन रहे हैं? (हां जी) हां! नाड़ भी हिल रही है। हमने सुना था पानी चाहे ठण्डा हो या गरम हो वह आग को बुझाने की क्षमता रखता है। अभी नहीं डाला तो सब स्वाक हो जायेगा। इसलिए ज्यों ही उसने थोड़ा सा पानी डाला आग एकदम शान्त। पानी कहता है- देखा सिया न, मैं गरम भले ही हूँ पर गरम होना मेरा स्वभाव नहीं, मेरा मूल तो ठण्डा ही है।

मैं गरम भी हो जाऊँ, बुझाना मेरा काम है। अब आपको देखना है आपके पास पानी है या नहीं, और जो पानी है वह भी आग बुझा देगा। इसलिए पुण्य फला अरहन्ता कहने में कोई बाधा नहीं। जो अरहंत पद मिला है वह पाप की निर्जरा होने तथा पुण्य की

वृद्धि होने से ही मिला है।

यह घोषणा है उन्ही अरहंत परमेष्ठी की। आपके पास राग-द्वेष-कषाय है ये सब कर्म निर्जरा में कारण हो सकते हैं। आपके पास कषाय है वह संसार वृद्धि का कारण है किन्तु आपने अभी भिन्न-भिन्न द्रव्यों से भिन्न-भिन्न भावों के साथ पूजा की जैसी भावना फल भी वैसा ही मिलता है क्यों कि भावना को भव नाशनी भी कहा है। भावना मात्र वृद्धि नहीं कहा। हाँ दुर्बुद्धि अथवा दुर्भावना से भव की वृद्धि होती है पर संसार पार करने में भी भावना ही कारण है।

उपयोग सही दिशा में करना है। राग का स्वभाव आप केवल बंध होना ही मानेंगे तो सराग दशा में निर्जरा तीन काल में नहीं होगी। पुण्य का बंध ही यह बता रहा है कि उससे पाप की भी निर्जरा हो रही है। यदि ऐसा नहीं होता तो फिर पुण्य फला अरहन्ता क्यों कहा। मुक्त होने की भावना ही व्यर्थ होगी।

यदि इसे स्वीकार नहीं करोगे तो पाप कभी भी आपका पीछा छोड़ेगा ही नहीं। संसार दशा में जब तक है तब तक बंध से मुक्त है ही नहीं। केवली भगवान को भी बंध बताया आगम में पुण्य बंध कहा। आगम को तीर्थ कहा। तीर्थ मात्र सम्मेद शिखर ही जाने पर हो ऐसा नहीं। सम्मेदाचल भी आगम में ही लिखा है

द्रव्यापेक्षा एवम् आगम अपेक्षा अन्तर है।

द्रव्य का भाव सत् है और सत् हमारा ध्येय है। "हमारी भावना हमारी दृष्टि के अनुसार हुआ करती है।" जैसी दृष्टि वैसी ही सृष्टि की रचना होती है। कर्त्तव्य फलीभूत हो जाता है। इसलिए गर्म पानी द्वारा भी वस्तु को सुरक्षित रखा जा सकता है, इष्ट की प्राप्ति संभव है। हाँ! ये बात अलग है कि वह गरम पानी किसी अन्य काम के लिए था परन्तु आवश्यक कार्य सामने आ जायेगा तो पहले उसे करेंगे। पुण्य कर्म से भी ऐसे ही कार्य किया जाता है।

अभी एक सज्जन आये। उन्होंने कहा - जो राशि हमने एकत्रित की वह दान में दे रहे हैं। मैं कहना चाहता हूँ - वे दे नहीं रहे अपने खाते में जमा कर रहे हैं। सोच समझकर ही ये कदम उठाया है। इसलिए देना नहीं - जमा करा देना। अपने ही नाम से कराना। कितना पुण्य मिलेगा पता नहीं। देना मात्र औपचारिक वचन है।

स्थान से स्थानान्तरण करना खर्च नहीं माना जाता। एक बैंक से दूसरे बैंक के खाते में चला गया। समय का अन्तर हो सकता है किन्तु कभी नहीं। भावों का अन्तर होने पर सबमें फर्क आ जाता है। आपने सबके सामने दे दिया - ये और अच्छा हुआ। भावों को कभी भी दबाना नहीं चाहिए। दूसरी वस्तु को दबा सकते

है, पर भाव नहीं दबाना।

जैसे पानी का स्वभाव ठण्डा है वैसे ही आत्मा का स्वभाव वीतरागता है। "वीतराग की भक्ति राग के साथ होने पर भी वह कर्म निर्जरा का साधन है।" इसी से पुण्य का बंध एवं पाप कर्म की निर्जरा हो रही है। जब तक पाप के अस्तित्व को पूर्ण नहीं हटायेगी तब तक वह पुण्य बढ़ता ही जायेगा।

आगम में ऐसी पंक्तियाँ लिखी हैं। समय 5 मीनिट ज्यादा ही हो गया। आज तो रविवार है। देखो! गांव में रहने वाली ब्र० भी English में बोल रही है (Sunday)। ये देश भारत है, आपमें भारतीयता ही होनी चाहिए। Made in Bharat कहना भी गलत है भारत का निर्माण ये कहें।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

सर्वार्थसिद्धि class में - "कितना सत्य"

1. कटनी में पण्डित जगन्मोहनलाल जी शास्त्री के पास एक बहू आयी। बोली-देव आते हैं मैं परेशान हूँ। उन्होंने एक श्री फल मंगाया - मंत्रित करके दिया कहा इसे शिखर जी में जाकर चढ़ा आओ। उस देव को शिखर जी भेज दिया। उसके बाद कभी उस बहू को परेशानी नहीं हुयी।

2. कुछ लोगो का कहना है - एक पंथ विशेष के स्वामी बाड़ीबर्ले में व्यन्तर बने हैं। यहाँ क्यों है - बोले बड़े देव ने हमारी ऋद्धियाँ छीन ली।

15-5-19 "आओं करें धर्म बैंक से अनुबन्ध" सोमवार

सब भावों का ही खेल है, उसी को हम आपके सामने रखना चाहते हैं। जैसे आप लोग अपने लेन-देन इत्यादि को कुशलता पूर्वक करते रहते हैं उसी प्रकार धार्मिक क्षेत्र में भी भावों के साथ अथवा भक्ति के साथ करते हैं तो कई गुना लाभ पा सकते हैं। या तो विधी का ज्ञान नहीं है, ज्ञान है भी तो उस प्रकार कर नहीं पाते हैं। सही विधी समझ लें तो एक समय में भी बहुत कुछ काम कर सकते हैं।

जैसे बैंक में धन रखते हैं, यह परम्परा पुरानी है किन्तु आज दूसरे रूप में आ गयी। आप बैंक में लेन-देन की अपेक्षा रखते हैं ताकि कम पड़ने पर निकाल सकें। कभी-कभी इस पर बैंक ब्याज भी देती है। अब बीच में राशि देने की आवश्यकता नहीं, बस समय का अनुबंध रखता है। जितना अधिक समय उसी अनुसार ब्याज दर भी भिन्न-भिन्न होती है। ऐसे भी धन कभी-कभी दुगुना भी होता है। और लम्बी राशि, लम्बे समय तक रखते हैं तो मुद्रीत रूप से बढ़ती है।

ऐसा अन्य किसी साधन से नहीं, अपने भिन्न-भिन्न जाति-प्रजाति के अनुबंध को स्वीकार है। आप लोगों की भी भिन्न-भिन्न परीक्षायें होती हैं। नम्बर ज्यादा लेना है तो कठीन प्रश्न तो आयेंगे। अभी देना ही देना है, मुझे नम्बर नहीं मिलें ऐसा नहीं कह सकते। इतने जल्दी भी नहीं कर सकते। संयम रखना अनिवार्य

होता है।

थोड़ा भी चूक गया तो घाटा लग सकता है। इसका धार्मिक दौर में असर अनुकरण कर लेना चाहिए। विधी को समझना आवश्यक है। नियमावली को स्वीकारना भी जरूरी है। अभी यहाँ एक व्यक्ति (N.R Jain इन्दौर) आये उन्होंने फार्म भर दिया और कहा एक ही साथ ले लो। ऐसा भी होता है। यह फिक्स डिपोजिट में आ जाता है। दान-त्याग-साधना में भावों में उछाल आने पर ऐसा अवसर प्राप्त कर लेता है।

एक-दो-तीन प्रतिमायें भी ऐसी ही हैं, उनमें भी असंख्यात भेदोपभेद हैं इसलिए बढ़ाते जाओ, और करते जाओ। कर्मों के अनुभाग एक सा नहीं होता, जितना करोगे उतना ही वह अनुभाग बढ़ता चला जायेगा। अलग ही क्वालिटी का वह पुण्य होता है। शास्त्रों को पढ़ने से ज्ञान होता है, उसे भावों की कुशलता से बढ़ा भी सकते हैं। क्षमता नहीं है तो कोई बात नहीं परन्तु विधी मुख्य है।

इसमें साहस की भी जरूरत होती है। कभी-कभी विधी बिगड़ सकती है। कभी-कभी बैंक फेल भी हो जाते हैं। होते हैं कि नहीं? बोलो ना? इसीलिए हमने पहले ही यहाँ पक्का कर लिया, ये बैंक कभी भी फेल नहीं होगा। यहाँ तो अनन्त गुण वृद्धि से बढ़ना ही है। तत्त्वार्थ सूत्र में उमास्वामी महाराज ने

भी कहा है- विधीद्रव्य दातृपात्रविशेषा - - -
जो फलवती जमीन में अच्छे बीजों का वपन करेगा वह तो सहस्त्रगुना बाहर आयेगा। यदि भूमि की उर्वरा शक्ति नहीं तो मात्रा में कमी आ सकती है। उर्वरा शक्ति को बनाये रखें। "भावों की इस भूमि को विशुद्धि के साथ फलवती बनाये रखें।" सामान्य व्रत पालन से भी सहस्त्रगुणा फल मिलता है। अब सोचता है- हम भी ऐसा कर लेते तो। महाराज ने हमसे नहीं कहा। उमास्वामी महाराज ने सभी से कहा है।
"उसी में लिखा है, अखबार तो पढ़ते हो कभी-कभी ये शास्त्र भी पढ़ लिया करो। ऊपर-ऊपर के गुणस्थानों में फल अधिक मिलता है किन्तु भावों की भी आवश्यकता होती है। फल पाने की इच्छा नहीं - कर्म हटाने की इच्छा हो। "नहीं भी चाहोगे तो भी पुण्य का बंध तो होगा ही, ये अनुबंध है इस बैंक का।" इसे देखने से लगता है, बड़ी अद्भुत व्यवस्था है। चाहे गरीब हो या अमीर, पढ़ा हो या अपढ़ सभी को मिलेगा।
मन लग रहा है तो कर लो क्योंकि मन उखड़ने लगता है तो पुण्य में भी कमी आ जाती है। थिति के अनुबंधन में कुछ कमी हो सकती है पर कर्म-उपबन्धन में कोई कमी नहीं हो सकती।" जो भी अनुबन्ध होगा वह तिरछावट के साथ होगा। आप विस्मित रह जायेंगे। अभी आगे की सीढ़ियाँ और भी हैं जिसके लिए योग्य साधना की जरूरत है। स्वाध्याय तो करते हो पर नियमों को याद रखेंगे

तभी फल मिलेगा।

मैं इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि आपने भी सुना होगा - देखा होगा अथवा पढ़ा होगा। ऐसे स्वाध्याय से दूर ही रहना। ये स्वाध्याय के अड्डे आपको अपने पुण्य कर्म से भी दूर कर सकते हैं। भजन - जाप - स्वाध्याय ये पवित्र कार्य / 6 आवश्यक आदि से पुण्य अर्जन होगा। ध्यान रखो - "कम द्रव्य लगाकर भी भावों की बढ़ोतरी होती है तो फल अधिक मिलेगा।" नहीं चाहेंगे तो ~~बुरी~~ मिलेगा पहले जो रखा था उसकी भी किमत बढ़ जाती है। भाव घट जाये तो घट भी जाती है।

फल के बारे में इच्छा न रखते हुये इसे कर्म निर्जरा का प्रबल साधन मानो। हमारे यहाँ एक बैंक - दूसरे बैंक में विलीन नहीं, ब्रांच में परिवर्तन नहीं, कभी भी दिवालिया नहीं। कई लोग कह रहे थे महाराज नकद नहीं आ रहा - Hard Case। यहाँ तो इधर फार्म भरा और अन्तर्मुहूर्त बाद उदीरणा प्रारम्भ। न ताला है न चाबी, न डायरी है, न कहीं जाने की आवश्यकता है। समय पर अपने आप ही मिलता जायेगा। देव लो हमारे पास तो हमेशा बड़े - बड़े ग्राहक आ जाते हैं। भगवान ने कह रखा है - ~~हमें~~ भी बैठे - बैठे बहुत मिलता है। आप इसे समझ नहीं सकते। ऐसा यह पवित्र कार्य है। त्याग - तपस्या का यह काम कभी घाटे का सौदा नहीं हो सकता। लाभ ही होगा। इसलिए मिला है तो सही - सही लाभ उठाओ यही मात्र कुशलता है। अहिंसा परमो धर्म की जय।नँ

16-5-19 "प्रवचनांश" [विषय - हिन्दी भाषा] मंगलवार

- प्रतिभास्थली की प्रस्तुति - "आप की अदालत".
  शब्द भाषा - हिन्दी पर
- चैत्र में आ गया सावन जैसा मौसम (वर्षा भी हुयी)
- हम एक ही दिन क्यों कल्याणक मनायें जीवन में प्रतिदिन कल्याणक मना सकते हैं।
- भगवान महावीर स्वामी ने दिव्य देशना किसी भाषाविशेष में नहीं दी - ओंकारमयी ध्वनि के रूप में दी, जिसे सबने अपने-अपने सदाशय से समझा।
- उनके भाव क्या थे। आशय को समझे बिना सब कुछ अधुरा है।
- आशय मतलब - अभिप्राय / तुम्हारे दिल में क्या है।
- दिल महत्वपूर्ण है - मस्तिष्क नहीं। दिल से ही आशय का पता लग सकता है।
- न्यायालय में शब्दों से ज्यादा भावों को महत्त्व दिया जाता है।
- जो नय प्रमाण तक ले जाये वह सुनय है, दुर्नय न हो। दुर्नय दुराशय की उपज है। वह जलाशय तक नहीं पहुँचायेगा प्यासा ही रहना पड़ेगा।
- महावीर का वह न्याय आज यहाँ तक आपको मिला है।
- अंग्रेजी को भी जब बोलना होता है तो English कहना होता है - यही अंग्रेजी माध्यम का भ्रमजाल है।
- आशय के अनुसार ही अर्थ निकलता है।

- आज भाषा का आग्रह हो गया। यह सत्याग्रह नहीं दुराग्रह बन गया है। हठाग्रह हो गया।
- भगवान महावीर स्वामी ने हमें दिव्यध्वनि तो दी पर भाषा का आग्रह नहीं रखा।
- ध्वनि देने से व्यवधान अपने आप ही हट जाते हैं।
- Horn Please - होर्न सामने वाले के लिए ही हो ऐसा नहीं पीछे वालों के लिए भी होता है। दया करके Horn दिजिए। ध्यान सही होगा तभी पकड़ सकते हैं।
- जो सामने है वही मात्र श्रोता नहीं, पुरा विश्व उस ध्वनि को सुन रहा है। ये तो मात्र प्रसारण का केन्द्र हैं।
- ध्वनि से कोई नहीं सुनता, प्रतिध्वनि से ही सुनाई दे रहा है।
- ध्वनि कई हो सकती है - तो भाषायें भी कई हो सकती है। अपनी-अपनी भाषा में ग्रहण कर लेते हैं।
- भगवान की दिव्यध्वनि भाषा रूप न होकर ओंकारमयी ध्वनि रूप थी। यूं कहे गद्य कम - पद्य ज्यादा थी।
- भारत में हर 4 कोश पर भाषा एवं 1-2 कोश पर पानी बदलता है।
- इसलिए बिमार होने से बचना है तो प्रासूक पानी पीओ।
- अभी अदालत देखी। एक व्यक्ति अंत तक जमा रहा। ध्यान रखों - जमने पर पानी भी बर्फ बन जाता है। बर्फ कभी रखाया नहीं जाता - पानी ही पीया जाता है। इसलिए अपने आशय को पिघलाइये - आग्रह मत रखीये।

o बर्फ केवल इसलिए मर्यादा बढ़ जाये। अंजुली में पानी नहीं टिकेगा किन्तु बर्फ टिक सकती है। बर्फ जितनी दूर रखोगे बेहोशी (सुन्न) आयेगी - विदेशी भाषा से भी बेहोशी छा रही है।

o आज विदेशी हवा के कारण बच्चे पानी नहीं पियेंगे किन्तु बर्फ को चाटेंगे। यही विदेशी भाषा का मोह है। उसका भ्रमजाल है।

o उब्बाता मात्र दूर हो सकती है पर प्यास बुझने वाली नहीं। प्यास तो अपनी भाषा (पानी) से ही बुझेगी। सारी समस्यायें समाधान में बदल जायेंगी।

o आग्रह - सत्याग्रह - दुराग्रह, दुराशय छोड़ो सदाशय का पालन करो तभी जयाशय मिलेगा।

o आज तक कोई भी धार्मिक ग्रन्थ इंगलिश भाषा में नहीं लिखा। बाइबल तो हिब्रू भाषा में है। जब अंग्रेजी में छपा तो पुछा गया कि किससे पुछकर इसको अनुदित किया। यह हमने एक लेख में पढ़ा था।

o एक नहीं अनेक बैठकों में यह निर्णय लिया - हमारी अपनी भाषा होनी चाहिए। माध्यम अपनी मातृभाषा हो। किन्तु आज तक निर्णयों पर अमल नहीं हुआ। जो मूल हमारे पास था उसे कोई याद नहीं कर पा रहा।

? इंगलिश भाषा लोकप्रिय भी नहीं - यह गलत धारणा क्या तो यह लोकप्रिय है। अंग्रेजी माध्यम के भ्रमजाल में लेखक ने सटीक लिखा है। लोकप्रिय होती तो फिर संख्या कम क्यों है?

o जिव्हा के दो काम है - रस का ज्ञान एवं शब्दो को वाणी तक भेजना। भाषा के निर्माण में हाथ है।

o शब्द अर्थ को गर्भ में रखकर काम करता है। अर्थ को संयोजित करके संज्ञी पंचेन्द्रिय ही बोलता है। असंज्ञी तक के जीव बोलते तो है पर उनका उद्देश्य नहीं रहता - अपना रोना रोते रहते है। दूसरे को समझा नहीं सकता।

o विज्ञान ने भी मान लिया है - शब्द जड़ नहीं matter नहीं / पुद्गल नहीं है। बुद्धी के माध्यम से वह अपने आशय को दूसरो तक पहुँचा सकता है। जैसे - कैप्सुल होता है। पेट में जाने पर वह अलग हो जाता है और दवा करने लगती है। शब्द मात्र कैप है।

o शब्द निर्माता ने किस आशय के साथ आपके पास वे शब्द भेजे है। सदाशय है या दुराशय है पहले जान लो।

o मात्र भाषा से ही अभिव्यक्ति नहीं मुख मुद्रा आदि से भी कृतज्ञता ज्ञापित कर देता है।

o भारत ही इस भाषा के व्यामोह मे उलझता जा रहा है। जल के मंथन से नवनीत की प्राप्ति तीन काल में नहीं होगी। झाँग जैसा दिखेगा पर वह नवनीत नहीं है।

o महावीर स्वामी का जन्म वैशाली में हुआ जो विशालता का प्रतीक था। उनका हृदय बहुत विशाल था।

o भारतीय देशो में मस्तिष्क को महत्व दिया जाता है, यहाँ हृदय को न्याय में भी हृदय को महत्व दिया जाता है। मस्तिष्क नहीं हृदय से काम

o भारत में युद्ध की बात नहीं अयुद्ध = अयोध्या है। अयोध्या में रह है तो युद्ध को भूल जाओ।

महावीर जयन्ती
7-4-19 "प्रवचनांश" [विषय - करुणाभाव] बुधवार

समसत्तु बंधुवग्गो पसंसणिन्दसमो ... सम सुह दुक्खो
समलोट्ठ कंचणो पुण, जीविद मरणे समो समणो॥

ऐसा साधक जिसके दिल में मित्र-शत्रु एक हो गये, संयोग-वियोग में एक ही भाव, रोग-शोक जीवन में प्रभाव नहीं, कंचन-कांच को समानता, मेरा-तेरा कुछ नहीं, कुटिया-कोठी कोई माथिना नहीं। दुनिया के सामने पागल बनने में ही सार है। यह धरती भी ऐसी विभूतियों को पाकर हर्षित होती है। चरण रज पूजनीय बन जाती है। इस धरती ने ऐसा मंच दिया जिस पर आज भी साधक चल रहे हैं।

बाहर की यह प्रकृति एवं आत्मा की प्रकृति दोनों अदृश्य हैं।

आत्मा की प्रकृति में डूबे बिना बाहरी प्रकृति पर समता धारण करना संभव नहीं है।"

पागल बनना बुरा नहीं, भीतर का ज्ञान रखते हुये। दुनिया तो उसको पागल एवं पागल के सामने नाचती रहती है।

ज्ञानी जीव किसी की गलती पर क्रोधित नहीं होता। वह उसके अज्ञान के बारे में यही सोचता है - बेचारा कर्म का मारा है। हमारी भी यही स्थिति थी।

एकान्त में बैठ उसके दुःख को देखकर रोता है। सोचता है इसका अज्ञान कैसे दूर हो। इसको बाहर से आँखें तो मिली है पर रोशनी नहीं मिली जो मुझे मिली है।

ज्ञान से ही अंधकार में प्रकाश की किरण आलोकित हो सकती है।

o ज्ञानी को दुःख का संवेदन होता है। मेरा विचार है - वे प्रभु तो सर्वज्ञ है फिर दुखी दुनिया को देखकर कैसे सहन करते होंगे। असहनीय दृश्य है। कहीं चले जाते तो फिर भी बुलाया जा सकता था किन्तु यहाँ तो पुरा का पुरा झरोख रहा है।

o वे अपने में रहते हैं। वैशम्य / विचित्र है। न ही कठोर है न ही मृदु है। महादयावान है। हमारा अभ्यास नहीं, उनका अनुभव है।

o न ही मृदु होना है न ही कठोर होना है - ऐसी साधना मुझे करना है। सहन करने की क्षमता आयेगी।

o शुरुआत में अनेक विकल्प किन्तु धीरे-धीरे पाठ्यक्रम बन जायेगा। फिर पाठ करने की भी आवश्यकता नहीं। "पाठ्यक्रम तब तक जब तक आत्मसात नहीं हो पाता।"

o दृष्टि एवं चित्त को स्थिर करने की आवश्यकता है।

o एक मांहि अनन्त राजे - अनंतमांहि एक, महावीर भगवान एवं आदिनाथ में कोई अन्तर नहीं। बड़ा अद्भुत है।

o सही - सही ज्ञान हो जाने पर सुख - दुख, भूख - प्यास, रोग - शोक सब समाप्त हो जाते हैं।

o जड़ - चेतन में भी साम्य / अभेद का दर्शन प्रभु करते हैं हम में भेद रेखा देखने में आती है। प्रभु ने समाप्त कर दी।

o जड़ को देख प्रभावित नहीं होते, चेतन में प्रभावित होने की बात नहीं।

- उन्होंने जो पथ बताया / संकेत दिये हैं, ये हमारा अहोभाग्य है। जबरदस्ती नहीं डाला किन्तु डूबने के भाव अवश्य किये हैं, उसी से हमारे भीतर परिवर्तन हुआ।
- भगवान महावीर हो या आदिनाथ भगवान हो, उन्हें स्मरण करके यही भावना भाओ हम तो कृत्यकृत्य हो रहे हैं जो होनहार है उसे भी देखो।
- "जीवाणां रक्खणो धम्मं" जीव मात्र की रक्षा का नाम धर्म है। किसी व्यक्ति अथवा जाति नहीं कहा, जीव कहा।
- संकेतों को समझकर अपने कदमों का उठाना आवश्यक है।
- नश्वर में अविनश्वर को मत देखो, हाँ! अविनश्वर में संसार देखने में आ जाये। हम विभाव से स्वभाव में आ जायें।
- अपने आप को प्रभु बनाने का संकल्प करें।
- संस्मरण - (पहले भी 2-3 बार महावीर जयन्ती मनायी। एक बार तो सम्मेदशिखर से सीधे यहाँ आये लगभग 200 किमी० चलकर। कैसे? दीवाली के दूसरे दिन ही कलकत्ता के कार्तिक महोत्सव हेतु विहार कर दिया। वहाँ से खण्डगिरी उदयगिरी की यात्रा करते हुये - रायपुर जो पूर्व में म० प्र० में ही था से होली की अष्टाह्निका करते हुये महावीर जयन्ती तक जबलपुर आये थे।)
- भुवनेश्वर (खण्डगिरी - उदयगिरी) में अतीत में राजा-महाराजाओं ने सैकड़ों गुफायें बनवायी। क्यों? इसमें बैठकर साधना कर सकें किन्तु आज सब पुरातत्व के अधीन है। पुरातत्व वाले कैसे लाने हैं, जब वहाँ साधना ही न करने दें तो। हम दिनभर

वहीं रहते रात में नीचे आ जाते थे। महावीर भगवान के अभाव में ये सब हो रहा है। पुरातत्व वाले इसलिए है कि आपको उपयोग नहीं करने देंगे। (व्यंग्य)

- नश्वर शरीर है, जो कुछ करना है वह कर लो। पंचेन्द्रिय विषय मौलिक नहीं।
- जड़ धन का उपयोग उनके लिए करो जो अपने उपयोग को भीतर ले जाकर सात्विकता से जी सके।
- उसकी विपरीतता, उसके अज्ञान पर हंसो मत बल्कि करुणा एवं वात्सल्य की वर्षा कर दो, देखो परिवर्तन जरूर आयेगा।
- वात्सल्य से खून की धारा भी बन पड़ी दुग्ध की धारा-सर्प ने जब महावीर भगवान को डंस लगाया।
- आज उनको याद कर रहे हैं ये भी बड़ी बात है।
- आपको अपना कर्तव्य करते जाना है; कुछ नया भी होना है, समय पर अवगत हो जायेगा।

□ □ □

## संस्मरण

"डूंगरगढ़ की बात है। ग्रीष्मावकाश में प्रतिभास्थली की बहनें आयी। आन्टी ने कहा अभी आपको अपने-अपने स्थान लौटना है। कुछ बहनों ने कहा - आन्टी हमें कुछ भी नहीं मिला। आन्टी ने कहा - कुछ नहीं मिला, ऐसा नहीं है। बुत किससे मिले - आपने हमें किससे - गुरुजी - गुरुजी को किससे ऐसे करते-२ महावीर भगवान तक पहुँच गये। महावीर भगवान के दिये बुत मिले फिर ये क्यों कह रहे हो कि कुछ नहीं मिला।"

18-5-19 "महावीर की भी मानें" गुरुवार

आप लोगों के पास पाँच इन्द्रियाँ हैं, उनसे काम लेने वाला भी रहता है जिसका नाम है मन। ये 6 हमेशा आपके साथ है। असंयम एवं संयम के लिए कारण बनती है। जो इनको वश में करता है वह संयमी तथा जो इनके वशीभूत हो जाता है वह असंयमी है। आप कौन है? असंयम का मतलब उसने किसी संयम को स्वीकारा नहीं, इन्द्रियों के काबू में रहना। लोक में भी असंयम करते है तो पुलिस पकड़ करके ले जाती है, करके देख लो।

जब छोटे थे तो बाइसिकल / साइकल चलाते थे / उस पर दो ही बैठकर जा सकते थे, कभी-कभी तीसरा पीछे बैठ जाता था / यदि सामने पुलिस खड़ी दिखती तो वह कूद कर भाग जाता / जो जबरदस्ती करता है उसे पकड़ लेती है, यहाँ पर भी प्रतिसमय वह पुलिस देखती रहती है उसी अनुसार आपको दण्डित भी करती रहती है। सोचो! ऐसा कौनसा अपराध किया जो यहाँ आगये, वहाँ क्यों नहीं गये / असंयमी कौन है - संयमी कौन है?

पशु भी व्रत लेकर संयम को ग्रहण कर लेते है / आप भी दुकान पर बहुत संयम रखते है नहीं तो महावीर स्वामी की तरह दिवालिया होने में देर नहीं लगेगी। दिवालिया मतलब दोनों हाथ खाली। एक व्यक्ति जो शीतशय्या के वशीभूत हो जाता है। सब भूल जाता है, लीन हो जाता है / असंयमी भी संयमी बन जाता है। भगवान की भक्ति में लीन, ऐसा आगम में

उल्लेख मिलता है।

कर्णेन्द्रिय के विषय व्यापक है। कल रसनेन्द्रिय (जिव्हा) का दो प्रकार से उपयोग बताया था, एक चखना दुसरा वक्ता बनना। दो इन्द्रिय भी वक्ता है। आप भी तो मतलब की बात समझ लेते हो, शेष छोड़ देते हो। सर्प के पास भी जिव्हा है, आपके पास भी जिव्हा है। जब सपेरे के माध्यम से वह फणा को उठाता है तो जीभ बाहर निकालता है उसे द्विजिव्हक संस्कृत में कहा, अर्थात दो जिव्हा जिसके पास है। एक सत्य - एक असत्य।

लोकमें दो जिव्हा वाला असत्य माना जाता है। उसके दो जिव्हा हमेशा रहती है। क्यों रहती है- क्या है ये पुनः में नहीं आया। किंवदन्तियों को चलती ही है। कुछ रखा था चाट लिया, जीव्हा कट गयी, दो भागों में विभक्त हो गयी, लोभ के कारण ऐसा हुआ। दो इन्द्रिय के पास कर्णेन्द्रिय नहीं। सर्प के पास दोनो है। दो इन्द्रिय जीव बोलता है पर अनक्षरी भाषा। तिर्यञ्च में अक्षरी भाषा नहीं।

सर्प आपकी भाषा को सुनता है- समझता है। इसीलिए तो आपने यदि छेड़छाड़ कर दी तो रात 12 बजे भी हजारों के बीच में भी आपको पहचान लेता है। सुन रहे हो न? हाँ उसके पास प्रत्यभिज्ञान है। वैर पकड़ने में माहिर है, फोटो ले लेता है, रात में भी उस फोटो से मिला लेता है। थोड़ा भी

प्रतिकूल अवश्य पकड़ लेगा।

ज्ञान का वैचित्र्य देखो। जिन दांतो से काटता है वहीं वह वादन/स्वर में भूल जाता है। ऐसे भी सर्प भक्ति में नाचने लग जाते हैं। रक्तेक्षणं समद कोकिल कण्ठ नीलम् --- भक्तामर की कारिका है। भगवान की भक्ति में क्रोध से जिसकी आंखे नीली पर कुछ नहीं करता है, जानता है भगवान की भक्ति कर रहा है।

ज्ञान के कारण ही असंयम, एवं ज्ञान के कारण ही संयम की ओर चला जाता है। भक्ति में लीन वह विषधर भी विष को भूल जाता है। समोशरण में सब वैर को भूलकर प्रभु की वाणी आपके साथ बैठकर सुन सकता है। वैर दूर क्यों हो जाता है, ये समझना है। प्राकृत में इसे दिग्गंथी कहते है। दीर्घ गृन्धी (गांठ) पड़ जाती है। दोनों पल्ले पकड़कर सुलझा सकते है- आप लोग सांठ-गांठ करते रहते हो। सुन रहे हो? (हिओ)

जो भी आपका संबंध है वह उसी के साथ है बाकी के साथ नहीं हैं। कर्णेन्द्रिय के विषय में लीन तो वह असंयम की ओर हो जाता है उसी कान से वचन सुनकर भक्ति में लीन तो संयम की ओर आ गया। रसनेन्द्रिय से रस में जाना असंयम होगा तथा प्रभु का नामस्मरण उच्चारण करना संयम की ओर ले आयेगा। आप भी सुनने आते है। कल का अलग माहौल आज हमने सोचा था महावीर जयन्ती थी क्या पता भीड़ आयेगी कि नहीं परन्तु कल से भी

ज्यादा भीड़ है।
कल शोभायात्रा - निर्धारित स्थान था इसलिए
भक्ति के भाव हो। भुक्ति का अर्थ भोजन होता है। भक्ति
भी एक प्रकार का भोजन ही है। एक बार भोजन का
नियम नहीं - रात्रि भोजन त्यागी भी कर सकता है -
अच्छे ढंग से भक्ति। रात-दिन भी, गरिष्ट से गरिष्ट
भी कर सकता है। ऐसे लोग भी हैं पैसा देकर भी अर्थात
दान देकर भी भक्ति करते हैं।
आपने ताली क्यों बजायी? इसलिए
की वह मोह की ग्रन्थि को ढीला कर रहा है। गांठ खोलने
कुछ निकाल दिया। पुरा निकालने का अभी मुहूर्त नहीं आया।
निकालते समय संभव है पसीना भी आजाये। जो नहीं
निकाला वह सोचता होगा हमारी ग्रन्थि कब ढीली होगी?
दुसरा साधन भी ग्रन्थि/गांठ खोलने का - खुंकर दो (कार
दो) जिसको दोबारा गांठ लगाना है तो कहेगा नहीं। देख
लो मोह कितना प्रबल होता है।
हेय को हेय, पुद्गल को पुद्गल जानते
हुये मान नहीं पाता। पीले पुद्गल (स्वर्ण) को बहुत चाहता
है। किसी को दिखाता नहीं देखकर संतुष्ट हो जाता है। तो
सर्प भी भक्ति भी करता है - जिह्वा के वशीभूत हो जाता है
तो नरक - निगोद तक चला जाता है। पार्श्वनाथ का जीव ऊपर
कमठ का जीव नीचे गया। 10 भव तक वैर किन्तु अन्त में
कमठ कमठ ने भी प्रभु के केवलज्ञान से सम्यग्दर्शन को

प्राप्त कर लिया।

जब कर्म० कम० को सम्यग्दर्शन हो सकता है तो आप तो और आगे बढ़ सकते हैं। जो इन ग्रन्थियों को हटाने का संकल्प ले लेता है तो सर्व की दशा में भी सम्यक् दर्शन को पा सकता है तो फिर मनुष्य दशा में आप वंचित क्यों रहेंगे। अपने संकल्प को ओर आगे बढ़ाना। जैसे 5-7 वर्ष का किया वैसे ही जल्दी-जल्दी मुक्ति मिले, आज ही फार्म भर लेना। और बुद्ध भरने का कम नहीं जो भरा है उसे खाली करने का काम करना।

इतिहास / प्रथमानुयोग पढ़ने से रोंगटे खड़े हो जाते हैं। भावों के माध्यम से कैसे कर्म बांध लेते हैं भावों के माध्यम से ही बांधे गये कर्मों को साफ कर सकते हैं। वह कहता नहीं अपना मार्ग प्रशस्त करता है। इतना ही कहना है दो इन्द्रिय रसना एवं वचन दोनों है पर अपना वचन सुन नहीं सकता। आप बोलते भी हैं और सुनते.... भगवान के वचन नहीं सुनने का संकल्प जैसा है। कल कहा था- महावीर को तो मानते हैं पर महावीर भगवान की नहीं मानते।

मानने के साथ ही साहस के साथ कदम बढ़ाना पड़ता है। साहस के साथ सभी के कदम हो इन्हीं भावों के साथ।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

19-5-19 "ध्वजा का महत्त्व सक्रियता से" शुक्रवार

आप लोग ध्वजारोहण करते हैं, इसे मांगलिक कार्य माना जाता है। वह ध्वजा कपड़े का होता है। रस्सी खेंची नीचे आ गया किन्तु उसमें गतिविधी नहीं एकदम स्तब्ध - निस्पंद है। मंगलाचरण तो हो गया पर हम चाहते हैं कि उसमें कोई गतिविधी हो। गतिविधी के लिए उसमें ऐसा बुद्ध नहीं है - हाथ हो अथवा पैर हो। ये तो है नहीं फिर कैसे आसमान में लैहेगा? ध्वजदण्ड भी स्तब्ध एवं ध्वजा भी निस्पंद। ऐसे में उत्साह नहीं रहेगा।

ध्वजा आसमान में लहराना अच्छा लगता है। इसके लिए उसे वायु की आवश्यकता है। सदागति भी कहते हैं। आत्मा को भी सदागति बोलते हैं। गति के लिए / क्रिया के लिए वायु होना चाहिए। जैसे गर्मी का मौसम होता है - ऑक्सीजन की मात्रा घटने लगती है। कहीं भी चले जाओ - ऊपर जाने पर तो मिल जाये किन्तु वहां तो और कम हो जाती है। कृत्रिम प्राण वायु (नेन्टीलेटर) पर ले आओ।

अकृत्रिम चैत्यालयों की पूजा करने वालों! कृत्रिम वायु ले रहे हो फिर अकृत्रिम मिलेंगे कैसे? ध्वजा को मंगल के रूप में स्वीकारा किन्तु वायु के बिना उसमें हलचली नहीं आती। हलचल के बिना कोई आकर्षण नहीं होता। विशेष यह कि वह वायु कभी देखने में नहीं आती। आंखों का विषय नहीं रहती

स्पर्शन का विषय बनती है।

उस वायु को मिलने पर ही मुख पर ताजगी आती है। "श्वांस लेते ही विश्वास जाग जाता है।" आज प्राणवायु की मात्रा कम एवं अन्य की मात्रा ज्यादा हो रही है। हर व्यक्ति से विशेष प्रोत्साहन मिले ऐसा संभव नहीं। आप निमन्त्रण से आ सकते हैं पर वायु निमन्त्रण से नहीं आती। इसके लिए सक्रिय होना जरूरी है। सम्यग्दर्शन के 8 अंग होते हैं तो अंगी को उपदित करने में कारण होते हैं।

आंखो/नेत्रों में टीमटीम हो रही है, पैर लड़खड़ाने लगे हैं ये सब बता रहे हैं अब भीतर कितनी क्षमता बची है। लाठीया का सहारा लेकर चल रहा है। अब चलने की क्रिया नहीं चालान की क्रिया हो रही है। इसके लिए चेतन-धारी व्यक्ति रखे हो। समझ में आ रहा है कि नहीं (हुओ) हुओ तो सीख ही रखा है। जब क्रिया में अनुभवन नहीं तो बताना पड़ता है, तुम योग्य नहीं हो तुम जा सकते हो। नई जाते हैं तो --- रास्ता सीधा है जाइये।

सम्यग्दर्शन में क्रिया करने की क्षमता नहीं किन्तु इन आठ अंगो के जुड़ाव से ये ज्ञात हो जाता है - भीतर क्या क्षमता है। इसीलिए इसको सक्रिय सम्यग्दर्शन कहा जाता है। ध्यान रखो अनुपात से ही अंक मिलते हैं। अनुपात शब्द धर्म कांटा का काम करता है। पालड़ियों के माध्यम से समझ में आ जाती है - क्षमता

क्या है? और इसका मूल्य कितना है।

सम्यग्दर्शन को बहुमूल्य करने वाली यह सक्रियता ही है। इसी से आत्मा का अनुगत जात हो जाता है। बैठे-बैठे काम नहीं होता-संकेत भी देना होता है। हर क्षेत्र में एक विधी होती है, निधी भी होती है। विधी- निधी के साथ सान्निधी नहीं रहेगी तो कुछ नहीं होगा। किन्तु सान्निधी होने के उपरान्त भी बैठे-बैठे कुछ नहीं होता। कुछ देना नहीं तो काम नहीं होगा बात समझ में आ रही है? हमें भी समझ में आ रही है।

हम भी यही चाहते है- क्यों कि समझदार को ईशारा ही कॉफी है। ज्यादा करोगे तो युग स्वीकार नहीं करेगा। कहने की नहीं करने की बात करो, सक्रिय व्यक्ति ही स्वीकार कर सकता है। गर्मी के दिन में भी मानसून (वर्षा) कहाँ से आयी। अब भविष्यवाणी भी भूत वाणी हो गयी। सत्ता चलाने वाले बाजार में मंदी ले आते है। कागज पर वेतन बढ़ना तो लोन का वेतन है। इधर का उधर करना है।

जब निधी है ही नहीं फिर सान्निधी किसी की भी हो खाली है भण्डार। जल का स्त्रोत नहीं तो नल में पानी नहीं आयेगा, आंखो में भले ही आ जाये। वो भी 4-5 दिन ही फिर ऑपरेशन से भी नहीं आयेगा। आप उनके वंशज है, जो हमेशा

सक्रिय रहे हैं।

आज हाथ-पैर में क्षमता नहीं तो स्ट्रेचर ले जाते हैं मतलब पहले से ही राम नाम सत्य है कि तालीम चल रही है। न बैठने - न चलने और न ही संकेत देने की स्थिति है। अब तो उठा लो। इसीलिए जैन धर्म सक्रिय भी है एवं आस्थावान भी है। आस्थावान है तभी हाथों से ताली बजी अन्यथा बंद करो-बंद करो कहना पड़ता।

हमारी अनुपस्थिति में भी ऐसा ही कार्य हो तभी हम समझेंगे की सक्रिय है नहीं तो ऊसही-ऊसही मानेंगे। ज्यादा कहना अच्छा नहीं। ये तो आस्था के साथ रास्ता पर चलने की क्रिया है। महावीर जयन्ती एक दिन की नहीं एक वर्ष तक प्रभाव डाले तब सार्थक है। अन्यथा वह खबर स्टाम्प मात्र है। मुद्दा सक्रिय तभी जब उसमें गतिविधी होती है। ध्वजा का सही दिशा में जाना ही मंगलकारी माना जाता है।

युवावर्ग आया था कहने लगा - महाराज इस बार महावीर जयन्ती पर हम लोगों का शीतोपचार काम नहीं आया। (वर्षा होने से) स्वर्ग से जो आया वही काम आया। सही दिशा में काम करना जरूरी है। जो धन सक्रिय नहीं उस धन से कोई मतलब नहीं, लोन लेकर ज्यादा सक्रिय करना चाहो वह औरों का नहीं है। इतना ही पर्याप्त समझता हूँ।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

outing
20-4-19 "मेरी जड़े अभी हरी हैं" शनिवार

मौंग हैं कि जिन अभिभावकों ने यहाँ प्रतिभास्थली में अपनी बच्चियों को शिक्षण एवं संस्कार हेतु साहस करके समर्पित किया है, हमेशा के लिए नहीं कुछ सीमा तक। वह दृश्य भी आप याद रखें जब आम्र के वृक्ष पर बौर आते हैं और कुछ समय बाद आम्र के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं। परिवर्तन होकर भी वे एक साथ पकते नहीं, कभी-कभी पहले भी पक जाते हैं।

ऐसे ही आपके बच्चे हैं। यहाँ शिक्षण-संस्कार के बाद वे यहीं की यहीं रहने का भाव कर रहे हैं। माता-पिता को चाहिए कि मोह को दबाकर उदारता के साथ स्वीकारता दें। इससे हजारों को प्रेरणा मिल सकती है। ये कभी सोचा भी नहीं होगा कि हमारी बच्चियाँ स्वयं पढ़कर, पढ़ाने भी लग जायेगी। मैं निश्चिंत था। पूर्व काल में ऐसा ही होता था। आज शिक्षा एवं चिकित्सा दोनों में ही गम्भीर समस्या आ गयी है। किन्तु समस्या का हल भी निकलता है।

"अति की इति होकर अथ का प्रारम्भ अवश्य होगा।" अच्छे कार्य करने के लिए अच्छे संकल्प लेना पड़ता है। संकल्प लेने के बाद भी बैठना नहीं है। जिस दिशा में रात-दिन उसी दिशा में प्रयोग प्रारम्भ हो जाता। स्वप्न में भी, कथन-सोचने एवं देखने में भी और लेना-देने बस एक ही बात होती है।

कौन क्या देख रहा है? कौन क्या कर रहा है? इस दृष्टि से भी इसका प्रचार-प्रसार हो रहा है।

जबलपुर ही नहीं जहाँ से भी आप आये होंगे उसके अड़ोस पड़ोस के लोग भी कह रहे हैं। ताली बजाने में अनुमोदना की तो हमें भी तो लाभ मिलेगा। जहाँ कहीं से भी आये हो इस कार्य की प्रशंसा करें। हरेक व्यक्ति परिचित होगा वहीं पर वातावरण बन जायेगा। भारत का काम तो हो ही जायेगा। खरबूजा को देखकर अन्य खरबूजे भी रंग बदलने लग जाते हैं। हम तो इसी बात की प्रतिक्षा में हैं।

रंग ही नहीं अन्तरंग बदलो। ये बात लोगों तो भारत में ही क्या सर्वत्र खुशबू फैल जायेगी। गर्मी के दिनों में ही खरबूजा आता है, जो प्यास एवं लू से बचाता है। अनेक छात्रायें इसमें आ रही है जो शिक्षा के साथ अपनी मुक्ति का मार्ग भी प्रशस्त कर रही हैं। इस जीवन में न सही अगले जीवन में हम इन पांचो कल्याणकों को पूर्ण करें। अभिभावकों ने पहले सोचा होगा - जंगल में कैसे इसे किन्तु अब देखो! जंगल में मंगल हो गया।

आंखों में पानी आ जाता है। हमें विलम्ब हो गया। पहले ही यह योजना बन जाती तो बहुत से खरबूजे तैयार हो जाते। किसान पहले सोचता है तब जाकर गर्मी में उसे खरबूजे प्राप्त होते हैं। अब चारों

तरफ से मांग आ रही है।

क्या करें पके खरबूजे कम है एवं लू लगने वालों की संख्या अधिक है। जो खा रहे हैं-वे भावना भायें कि सबके लिए प्रतिभास्थली हो जाये ताकि भारत का उद्धार हो। भावना भव नाशनी होती है। भीतर से परिवर्तन ही तो बाहरी वातावरण कुछ नहीं कर सकता। अब सबने ठान लिया है। शिक्षा-पद्धति के कारण कितना नुकसान उठाना पड़ा है। छोटे-छोटे गाँवों में भी प्रभाव पड़ा। 70 वर्ष में पूर्व की वैभवशालनी वे क्षणिकायें समाप्त ही हो गयी।

ध्यान रखो! "जिस पेड़ की जड़ हरी रहती है, भले ही ऊपर से छिन्न-भिन्न जैसा लगता है। सूख गया है किन्तु कोई भी उखाड़ नहीं सकता।" वर्षा होते ही पुनः हरा-भरा हो जाता है। भारत के मूल में बहुत गहराई है। इसकी शिक्षा-सात्विकता को कोई भी नष्ट नहीं कर सकता। हरेक व्यक्ति इसी का अनुकरण करें।

एक आवाज को कोशो दूर भी पहुँचाया जा सकता है। आगे-पीछे वाले एक-दूसरे को आवाज देते रहें। यह अनादि की परम्परा चली आ रही है। इस परम्परा में कुछ छिन्न-भिन्न भी हो गयी- पंचम काल कलिकाल है इसमें भी हुण्डावसर्पिणी काल है। इतना अवश्य है कि इस हुण्डावसर्पिणी काल में भी मात्र चर्चा नहीं,

उर्चा भी की जा सकती है।"

ये नमुना देखलो। विश्व भी सोचता होगा, ये भारत को क्या हो गया है? उसी के माध्यम से तो सूर्य दूर तक आलोक पहुँचाता है। भारत जैसा देश सो जायेगा तो विश्व तो रवो जायेगा। भारत को जागना ही होगा। विलम्ब तो हो गया किन्तु एक भी जागेगा तो सबको जगा देगा। जब जागे तभी सवेरा। हम स्वयं जागे- सुकृत स्रोत - भावना आदि पहले जायें। अवश्य ही वह अतीत का भारत जो विश्व गुरु है लौट आयेगा।

संस्कार तो है पर अभी सोये हुये हैं। शेर तो शेर होता है। अभी सो रहा है तो मृग घुम रहे हैं, एक अंगड़ाई ले ले तो देख लो क्या होता है। आलस्य / दुर्व्यसन सभी भाग जायेंगे। गा-गे-गी में भविष्य की क्रिया है। था-थे-थी में भूत की तथा है, हूँ में वर्तमान की क्रिया है। "आप है तो मैं हूँ तथा मैं हूँ तो आप है।" बस ये तीन क्रिया पद पर्याप्त है। जो हमें तीन काल का ज्ञान करा देते हैं।

आव कहने से क्या अर्थ होता है? हूँ कहने से भी अर्थ निकलता है। ददा भी छोटे बच्चे को देख मुस्कान लेने लग जाते हैं। कलियाँ खिलती हैं, फूल खिलने को तैयार है। ऐसा ही यहाँ घटित हो रहा है। प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि ये दिन दुनी और --- रात चौगुनी) सोओगे तो चौगुनी नहीं, रात-दिन को एक करना

होगा। दिन को रात नहीं, रात को दिन करना होगा।

यह एक व्यक्ति से संभव नहीं। ध्वजा को हाथों में थामे रखना है, पैरों से नीचे देखते हुये चलते भी जाना है। संकल्प से ही ये संभव है। संकल्प के धनी बनों। अभिभावकों से यही कहना है अपनी प्रतिमा के बारे में अडोस-पडोस को भी बताते रहो, हमारा क्या कर्त्तव्य है और ये क्या करते हैं। आपने जो धन का अर्जन किया है, उसमें से थोड़ा भी देंगे तो आपको प्रतिफल अवश्य ही मिलेगा।

भारत वर्ष में गुरुकुल में कभी भी मांगना नहीं पड़ता था। आपने तो यहाँ चेतन धन लगा दिया जिनकी हमेशा परमार्थ की ओर ही गति होती रहेगी। अभी छात्रायें जा नहीं रही है आप ले जा रहे हो। संकल्प से आये थे आपको कल्पकाल के लिए दिखाने की आवश्यकता है। ये आप ही लोगो को देखने की आवश्यकता है।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

Notes – वैद्य संगोष्ठी –

- आज बच्चे गोद तो ले रहे हैं किन्तु गोद के बच्चों को फेंक रहे हैं।
- समय बचाओगे तो आप नहीं बच पाओगे। मृत्युंजय नाम रखने मात्र से मृत्यु से नहीं बच पाओगे।
- पेथी से नही पथ से स्नेह है मुझे।

रविवार
२१-५-१९ "आयुर्वेद महाविद्यालय का मंगलाचरण" प्रातः

आज रविवार है और यह मांगलिक कार्य आप लोगों के माध्यम से प्रारम्भ हो रहा है। विशेष विज्ञापन के बिना एवं पूर्व भूमिका बनाये बिना भी ऐसा मांगलिक कार्य प्रारम्भ हो सकता है। इस पवित्र कार्य का प्रारम्भ इसी स्थान से हो रहा है यह बहुत महत्त्वपूर्ण है। आज रविवार है समय भी कॉफी हो रहा है किन्तु कॉफी समय हो गया ऐसा अनुभव नहीं हो रहा है।

इन लोगों ने मध्याह्न का कार्यक्रम रखा है। ऐसा नहीं समझना कि आज केवल प्रातः ही हो गया। जो लोग नहीं आ पाये अथवा जिनको जानकारी नहीं है इन सभी को भी लेकर आयें, उन तक सूचना पहुँचा देना। किसी प्रकार के विलम्ब के बिना यह कार्य तीव्र गति से हो इन्हीं भावों के साथ!

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

वैद्य संगोष्ठी-

० चलने का नहीं चढ़ने का इरादा कर लो। बस साहस चाहिए।
० ऋद्धि-सिद्धि के बिना प्रसिद्धि नहीं हो पाती।
० "एक जुट हो - एक से जुड़ो नहीं - बेजोड़ बनो"
स्वार्थ में एक से एवं परमार्थ में एक जुट होता है।
० ऐलोपैथी में दवा भी मरती है। आयुर्वेद में मरज को भी मरण तक पहुँचा देता है। मृत्युंजयी बन जाता है। पण्डित या पण्डित-पण्डित मरण करता है।

21-4-19 रविवारीय प्रवचनांश

- अभिमान किस पर करते हो उस मिकुआ (मिक्रु) का देखो जो खसखस के दाने से भी छोटा जीव है, आप उसे देख रहे हैं, वह आपको देख रहा है। इस यंत्र का निर्माण किसने किया / सोचो!
- संत कहते हैं - उस मिकुआ को समझाना चाहे तो भी समझा नहीं सकते, आप समझदार हो समझना चाहे तो समझ सकते हैं।
- ग्रामीण लोग भी आपसे अच्छे काम कर लेते हैं। उदाहरण - बीना बारहा में गांव का मिस्त्री, एक व्यक्ति ने रतन की प्रतिमा को घुमा दिया।
- आ० ज्ञानसागर जी संस्मरण - पंडित श्यामलाल जिन्होंने बड़े श्रम से विद्याध्ययन की। गमछा बेचकर अर्थोपार्जन करते थे। पर संतोषी एवं परिग्रह परिमाण व्रती थे - एक दिन में 10-12 पगड़ी बेचूंगा। एक घण्टे में भी बिक गयी, तब दूसरे दिन ही मिलेगी। कभी-कभी शाम भी हो जाती थी लेकिन नियम 10-12 पगड़ी ही बेचना है ज्यादा नहीं। शेष सारा समय तत्व चिन्तन एवं लेखन में देता था। आज सबके उपयोग में वे ग्रन्थ आ रहे हैं।
- गांव की तरफ न जाने का प्रण ले रखा है, ऐसा लगता है। इस धारणा को तोड़ना जरूरी है।
- पहले ही वैद्य देखकर रोग की पहचान कर लेते थे, आज देखकर भी देख नहीं पा रहे हैं।

- वैद्य जी जो अगले भव में अभिमान के कारण बंदर बने उनकी कहानी पर आधारित था पूरा प्रवचन।
- राजा के यहाँ औषधोपचार - देखने मात्र से ठीक कर देते थे। पहले रोगी को भी दवा नहीं बताते थे कि क्या दिया जा रहा है - पूर्ण श्रद्धान रहता था - वैद्य पर भी और औषध पर भी। आज विश्वास उठ गया।
- आज की दुनिया सामान्य को भी विशेष एवं विशेष को भी सामान्य स्वीकार कर लेती हैं।
- निश्चय - निश्चय की बात करने वाले व्यवहार को ही भूल गये।
- अब तो देश नहीं परदेश (विदेश) की ही बात अच्छी लगती है। उलटी भी सुलटी लगती है।
- उसे 12 वर्ष के बच्चे बिना नेत्र खोले भी सारा काम यंत्रवत् अपने पास भी ये कला थी पर उपयोग नहीं कराती। क्योंकि सामवान / इधर-उधर की लाइट बंद कर देते हैं। मोटर-गाड़ी में भी लाइट पर काली पट्टी ताकि रोड पर ही रोशनी पड़े-आँखों पर नहीं। इसी को बोलते हैं सामान्य - विशेष।
- बालक के उदाहरण से स्पष्ट है आत्मा सावरण होते हुये निरावरण का काम भी कर सकता है।
- राम में भी दिन का काम कर सकते हैं - चोरी था - लाइट (टॉर्च भी) नहीं। पगडंडी सफेद दिखती है, चलते जाते थे। ये अनुमानिक नहीं सामान्य - विशेष है। अभ्यास से हो जाता है।

"अनाभ्यास दशायाम् जायते परतः अभ्यास दशायां जायते स्वतः" आज अनाभ्यास से ही जी रहे हैं।

० बंदर रात में भी एक डाल से दूसरी डाल पर अचूक चला जाता है। अस्पताल कभी भर्ती नहीं आपको भर्ती करा सकता है।
० ड० हजार के इंजेक्शन से ही काम होता हो, ऐसा नहीं है। वाली उकाली से भी काम। बस कह दो - अभी अभी विमान से उतरा है पुण्यवान हो - एक लास्त भी दो तो काम है। विदेश से आयी है।
० मैं वैद्य था - अवैद्य हो गया - यही प्रज्ञापराध है।
० अध्यात्म ग्रन्थ, सिद्धान्त ग्रन्थ, आयुर्वेद ग्रन्थ में मिलेगा यह शब्द। १०८ बार सन्यास पहने वालों को पता नहीं कि प्रज्ञापराध क्या होता है।
० चारित्र / अच्छाई के साथ ज्ञान लिया है तो वह परगति में भी वह ज्ञान काम करता है।
० बंदर जो वैद्य था (शर्व) जंगल के पत्ती से मुनिराज के घाव को बिल्कुल ठीक कर दिया। वैद्य चरक वानरः इसीलिए कहा।
० आपके ही ग्रन्थ रद्दी से खरीदकर - made in अमेरिका लिखकर सर्वाधिकार सुरक्षित / पेटेन्ट कर लिया।
० आँखे बंद मत करो - न ही आँख मिचौली भी मत करो।
० अब भयंकर रोग नहीं रहेंगे, सबको शंकर प्राप्त होगा।
० यहाँ श्राप भी मनाते है पर पहले श्रद्धा नहीं होती।
० आत्म संतुष्टि नहो तब तक करते रहना चाहिए। सफल अवश्य होगा।
० आयुर्वेद ग्रन्थों का एक-एक शब्द साधना से उगाया है हमारे पास।
० उपवास, हरीआदि का त्याग भी इसीलिए बताया। उसका विकल्प मत ढूंढो।
० जो बेमौसम खायेगा वो बे मौसम जायेगा।

० ० ०

22-5-19 मरण का भी मरण कैसे हो? सोमवर

पहले भी अध्ययन आदि होता था आज भी अध्ययन जीवनोपयोगी शिक्षा का कॉफी प्रचार-प्रसार हो रहा है। कॉफी का मतलब शिक्षा की अपेक्षा बाहर भी आना-जाना होता है। घर में तो मिलती नहीं। प्राचीन काल में भी यह व्यवस्था होती थी। दक्षिण में गुरुकुल परम्परा जो आज भी विद्यमान है। जैन हो जैनेत्तर। जैनेत्तर में मठ कहा जाता है तो जैन में गुरुकुल। उत्तर में थोड़ा-बहुत देखने को मिलता है।

शिक्षा एक अनिवार्य तत्त्व है। सीखने का नाम शिक्षा है। कैसे चलना - कैसे खाना - पीना, रहना, बैठना, बोलना इत्यादि। इसकी शिक्षा होती थी। स्वशिक्षित होकर ये शिक्षा ग्राम, जनपद, प्रान्त, जिला, राष्ट्र के बारे में भी शिक्षा होती थी। ऐसी शिक्षा अन्य राष्ट्रों पर भी अपना प्रभाव डाल सके। उन्हें भी जीने का बोध प्राप्त हो। कल यहाँ आयुर्वेद को लेकर जो मुख्य चिकित्सा पद्धति है महाविद्यालय की स्थापना की बात सुनी थी। आयुर्वेद में आहार को औषध कैसे बनाया जाता है ये सीखाया जाता है।

घरेलु औषधियाँ होती थी जो पाकर आज समाप्त सी हो गयी। जैसे आषाढ में बेल लेने का मना है सावन में नींबू फाल्गुन में चना इत्यादि। "क्वार करेला भादो मही - मरो नहीं तो पड़ो सही" यह आयुर्वेद का एक दोहा सीख लो फिर जीवन पर्यन्त मृत्युंजयी

बन जाओगे।

"आयुर्वेद में मरण का भी मरण हो जाता है," पण्डित मरण अथवा बाल-पण्डित मरण बोलते हैं। मरण अनिवार्य है पर आत्म विजयी होकर जाते हैं। आज फास्ट फूड के ऊपर नित्य नये लेख निकल रहे हैं। भिन्न-भिन्न भाषाओं में भी है उनका कहना है ओरेंज बेंद करके बेंद कर दीजिये इनका उपयोग। इनसे भयानक रोग हो रहे हैं। सुबह से लेकर शाम तक 10-20 व्यक्ति हमारे पास आ जाते हैं, देखा नहीं जाता है। आप सब ओरेंज बेंद किये हुये हैं।

एक औषधालय नहीं घर-घर औषधालय बनाना होगा तभी जी पाओगे। भोजन करना किन्तु कौनसा करना ये बहुत महत्वपूर्ण है/जो धर्म ध्यान में सहायक हो। "राग-द्वेष की उत्पत्ति होना अधर्म है तथा राग-द्वेष की उत्पत्ति न करना धर्म है।" दर्शन शास्त्रीयों का ये कहना है। जैसा आहार वैसी ही मन-वचन काय की चेष्टा होगी। अभी-अभी पढ़कर आये आहार हमारी साधना में सहकारी कारण है। आत्मस्थ होने के लिए यह आवश्यक है। (पु.सा.)

तीर्थंकरों ने भी ग्रहण किया। इसका वर्णन यत्र-तत्र मिलता है। एक स्थान पर लिखा था- "आहारदान एवं औषधदान क्रियाओं पर आधारित है तथा ज्ञानदान एवं अभयदान क्रियाओं पर आधारित है।"

एक गाथा यह पर्याप्त है।

श्रावक दो दान में ही चारों दानों का लाभ मिल जायेगा। श्रावक शुद्ध आहार एवं शुद्ध औषधी देंगे तभी श्रमणों की शुद्ध चर्या रह पायेगी। कल भी कहा था। कुछ लोगोंने कहा - हम नहीं आ पाये। हमने तो संकेत दे दिया था, नहीं आये तो आप जानें। ऐसे भी श्रावक विवेकशील होते हैं जिनके द्वारा आहार - औषध दान दिया जाता है, बदले में उन्हें ज्ञानदान की प्राप्ति सहज हो जाती है।

जीवदया का भी पालन करते हैं। खेती - किसानी के माध्यम से अपना एवं दूसरों का पालन करते हैं। स्वयं श्रावक ही पानी काम में लेते हैं पर खेती में कुआ - बावड़ी को छानना शक्य नहीं। शक्यानुष्ठान का ध्यान रखना चाहिए। हल चलायेगा पर जीव जन्तु बचाकर, प्रयास करेगा। हलधर की परम्परा के लोग हैं। 63 शलाका पुरुषों में हलधर भी आते हैं।

इस प्रकार आहार - विहार - निहार सभी का मानसिक प्रभाव भी पड़ता है। मन पर प्रभाव पड़े इसीलिए वे साधु ज्ञानदान के द्वारा मोक्ष मार्ग की ओर आने की प्रेरणा देते हैं। अभी एक लड़का आया - महाराज आशीर्वाद दो - बाहर जा रहा हूँ। चलूंगा। अपने ही हाथ से भोजन बनाकर खाऊंगा। मैं फास्ट फूड खाकर

अध्ययन नहीं पास्ट फूड खाकर अध्ययन करूंगा।"

पुराने जमाने में जो बनता था वह खायेगा। उदाहरण बन सकते हो। कल शाम को भी हमने धन्यवाद शब्द कहा था मतलब अच्छा काम किया। इसका समर्थन अनुमोदना करते है। धर्म तभी सुरक्षित रहेगा। राजस्थान में प्रत्येक गांव में औषधालय खुले है। हम इस ओर आये- सुशील जी वैद्य जी जयपुर से आये तो कुण्डलपुर में औषधालय खोला और वह परम्परा डाल दी। वृद्ध होने एवं दूर होने से आ नहीं पाते।

कल यहाँ ऐसे ही महाविद्यालय का संकल्प लिया। "शुद्ध औषध चाहते हो तो शुद्ध औषधी बनाने वालों का भी निर्माण होना चाहिए।" विशेष ज्ञान रखने वाले भी विशेष औषध भी बनाते है। आयुर्वेद में दवा भरती नहीं 100-100 वर्ष तक भी विकृत नहीं होती। "वर्तमान में औषध का हाल ये है कि रोगी से पहले ही औषध का मरण हो जाता है।" जैनाचार्यों ने ऐसे अनेक ग्रन्थों की रचना की है। कल्याणकारक ऐसा ही ग्रन्थ जो सोलापुर से प्रकाशित है।

विद्वान ब्राह्मण ने प्रस्तावना में मुक्त कण्ठ से प्रशंसा लिखी। निष्पक्ष होकर समीक्षा करो। घर-घर में इनका पठन-पाठन हो। यहाँ की समाज ने संकल्प ले लिया - कटिबद्ध है। नाम चाह रहे थे। काम हो जाये नाम भी हो जायेगा। जैसे प्रतिभा स्थली में भर्तीकरण वैसे यहाँ भी। ये Vest नहीं Invest है। लोभी तो हो ही ऐसा धन कमाओ जो अविनश्वर हो। इससे इस भव - अगले भव एवं दूसरों को भी पाठ मिलेगा।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

२३-५-१९ "संयम कहाँ, संयमासंयम में?" मंगलवार

बहुत दिनों बाद दादा जी ने नाति को देखा। बहुत बात करता है वह। भले ही वह छोटा सा है किन्तु संस्कार इसी को कहते हैं कि वह भी अपने इष्ट की खोज करता रहता है। मन-वचन-काय की चेष्टा चलती रहती है। वह बोल भी रहा है और सुन भी रहा है। अब दादा जी के जाने का समय हो गया। वह पुछता है - कहाँ जा रहे हो? क्यों जा रहे हो? आदि-आदि। मैं भी साथ चलूंगा।

अब क्या करें। बेटा वह दूर है, तुम रहने दो। सुन रहे हैं आप? [हाँ] जिद करने लगा। दादा जी भी क्या करें? पोते (नाति) का प्यार तो आप सब जानते ही हो। कई दादा जी बैठे हैं यहाँ। चल दिया एक हाथ पकड़ लिया दादा जी का। दादा जी भी धीरे-धीरे जा रहे हैं। दादा जी अभी कितना दूर है? बस, थोड़ा सा दूर है। थोड़ी देर बाद फिर पुछा। बस थोड़ा सा दूर है। तीसरी बार पुछा तो बस आ ही रहा है, पास में ही है। अब कितना पास है? बस आ ही रहा है।

नाति दादा जी को कहता है - जब वह आ ही रहा है तो हम यहीं बैठ जाये। अब ऐसे नातियों को दादा जी क्या उत्तर देंगे? बोलो? मोक्षमार्ग में भी ऐसा ही कुछ-कुछ होता है। श्रावक लोग इसी तरह करना चाहते

है। दोनो हाथ लड्डू रखना चाहते हैं।
महाराज को तो नहीं छोड़ते किन्तु अन्य सब कुछ भी चाहते हैं। क्या? जब चाहे - जितना चाहे, जहां चाहे, जैसे चाहे करते रहते हैं। असंयम को छोड़ेंगे नहीं, इधर महाराज को भी छोड़ेंगे नहीं। इन लोगो को कैसे समझाये। सामायिक के समय भी - बैठे रहेंगे (हम जाओ नहीं कहते हैं) ये सोचते हैं महाराज 5 मीनिट में उठ जायेंगे, ये तो 2½ घण्टे का संकल्प लेकर बैठे हैं।
अब सोचता है - घड़ी के कांटे चल ही नहीं रहे लगता है कैसे गये। महाराज के पास रहकर भी कैसे सकते हैं। सोचलो। ऐसे में मुक्ति आ रही है। पता लगा लेना कौनसे मार्ग से आ रही है। अविश्वास कैसे कर सकते हैं महाराज, हओ। विश्वास व्यर्थ तभी जब आप श्रम करेंगे। स्वयं श्रम करोति इति श्रमणः। आप लोग तो थक जाते हैं। अब 2½ बैठ गये - थोड़ा आड़े तो हो जाने दो। हमारे यहाँ आड़ा-तिरछा कुछ है ही नहीं, सब सरल मार्ग है।
असंयम भाव के साथ कुछ संयम हो जाये ऐसा नहीं हो सकता। संयम जब से प्रारम्भ होगा अन्तिम समय तक चालु (साथ) रहता है। कितना भी लम्बा समय क्यों न हो। हमारे यहाँ 5 वर्ष में डबल

का पुनर्वधान नहीं।

जिस श्वांस के साथ ग्रहण कर लिया अब अन्तिम श्वांस तक आपका अनुबंध है। दुर्लभ संयोग होता है यह। सम्यग्दर्शन असंख्यात बार प्राप्त करके छोड़ दिया जा सकता है, संयमासंयम असंख्यात बार ग्रहण-छोड़ सकते हैं, अनन्तानुबन्धी की विसंयोजना असंख्यात बार ग्रहण करके छोड़ सकते/छुट जाता है पर संयम तो एक बार प्राप्त कर लिया तो फिर मात्र 32 बार की ही लिमीटेशन है।

संयमासंयम के लिए 32 नहीं लिया। समझ है संयमासंयम एवम् संयम दोनों एक नहीं हैं। दोनों क्षयोपशम भाव है पर संयम के सामने तो औदयिक भाव है। इस प्रकार आचार्यों ने संयम को ऐसा व्याख्यान दिया है। बार-बार सुनते हैं पर स्वीकार करने का साहस नहीं कर पाते। ये संयम का टिकिट किसी दुकान कम्पनी से नहीं मिल सकता।

कम्पनी आपकी नहीं हो सकती। बहुत पुरुषार्थ करेंगे तब जाकर इसे हासिल कर सकते हैं। वैसे कम्पनी किसी की नहीं है भूत काम करने का अवसर प्राप्त होता है। ये अपने भीतर से असंयम भाव निकालने से ही होता है। आपको भी वह अवसर मिले। जिसको मिला वह अहोभाग्य वाला है। इसको (असंयम भाव/संयमासंयम) रखकर गंध लेना चाहते हो, न भूतो न भविष्यति।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

२५-५-१९ "संसार बहाने के तीन कारण" बुधवार

संतों ने संसार के कार्यों के विषय में तीन हेतु दिये हैं। पहला - पर कृत्तित्व दुसरा - पर भोक्तृत्व एवं तीसरा पर स्वामित्व। प्रसंग यहाँ पर मात्र पर स्वामित्व का है। दूसरे पर स्वामित्व जो होता है, वह मात्र अभिमान को लेकर होता है, इसके बिना संभव ही नहीं हैं। इसका हम अध्ययन नहीं कर पाते हैं। जो इसका अध्ययन अथवा शोध करता है वही गहराई में उतरता है।

गहराई में जाने वाला कहता है - कौन-कौन व्यक्ति कैसे - कैसे कर रहा है। संसार को ही अपने हाथ में लेना चाह रहा है। एक बार पढ़ने में आया था - इस बात में रहस्य भी होगा। मैं भी सोचता रहता हूँ। तद्‌वियों - महर्षियों ने लिखा है तो जरूर सार्थक होगा। जब शेरनी बच्चों को जन्म देती है तो वह बिल्कुल एकान्त ढूंढती है। ऐसा क्यों करती है वह तो शेरनी है।

शेरनी है तो वहाँ शेर भी है। ये भी रहस्य की बात है। कहीं शेर देख न ले, शेर देखेगा तो अनर्थ हो जायेगा। अतः पता नहीं लगना चाहिए। पति और पत्नि है, पत्नि को संतान की उत्पत्ति हो और पति को पता न चले, ये कैसे संभव है। दोनों साथी है उसके। क्यों ठीक है न? बस यहीं तो रत

कर गये।

आप लोकतंत्र की अपेक्षा बात कर रहे हो, पर ऐसा है नहीं। स्वामीन् शब्द है संस्कृत के अनुसार। इसमें इए् प्रत्यय लगकर स्वामीनी बनेगा। वह स्वामीनि तो है ही भले ही इए् प्रत्यय लगाये या न लगाये। यदि आप संस्कृत को बदलते हो तो पूरी संस्कृति ही बदल जायेगी। आप लोकतन्त्र की बात सोच रहे हो। अच्छी बात है किन्तु ज्यादा सोचोगे तो गड़बड़ हो जायेगा। तो वह उसे एकान्त में जन्म देती है।

वह जान लेती है कि लड़का है या लड़की है? लड़का है तो उसकी रक्षा शुरु हो जाती है. इतिहास पढ़िये। राजवंश की रक्षा पहिले की जाती है (पन्नाधाय)। वह सोचता रहता है ये गर्भवती है और मैं इसका स्वामी हूँ। मुझे अपनी रक्षा करना है अतः वह पूरे जंगल में उसको ढूंढने का प्रयास करता है परन्तु यह भी उसका संरक्षण करती रही। बड़ा होगा तो स्वयं ही ज्ञात कर लेगा। अब बात सामने आ गयी।

उसने शेर से क्यों छिपाया? स्पष्ट है जंगल का राजा मैं हूँ और मैं ही रहूँगा दूसरा कोई आ जाये तो---! फिर बेटा भी क्यों न हो। मुझे अपने ही बेटे के सामने वार करना होगा। आपका लड़का है, स्वाभिमान के साथ सोचते हो किन्तु लोकतंत्र में ऐसा

नहीं होता।

प्रत्येक राजा का यह कर्तव्य है कि वह प्रजा का संरक्षण करें। आप अपने ही स्वामी है, दूसरे के स्वामी नहीं। आप अपनी रक्षा/अपना पालन स्वयं के पैरों पर खड़े होकर करते हैं। शासन/सरकार कर है। सरकार कौन है/चुनाव सामने है इसीलिए आपका कर्तव्य क्या है वह याद कराना चाहता हूँ। आपके मतदान पर ही उनका जीवन खड़ा है, इसे ध्यान में रखें।

जनता का भला कभी कर सकेंगे/आप थोड़ा भी स्खलित होंगे हम नीचे ले आयेंगे। आपको वहाँ हमने ही चुनकर भेजा है। पहले राजतंत्र था - लड़का भी यदि गलती करें तो माफ नहीं किया जाता था/ऐसे सैकड़ो उदाहरण प्रथमानुयोग में भरे है। आ० समन्तभद्र स्वामी ने इसीलिए प्रथमानुयोग को बोधि समाधि निधानम् कहा है। इसी से आज तक धर्म की रक्षा हो रही है। अद्यैव निर्वणामीति स्वाहा कर रहे है। यह निश्चिंतिता कहाँ से आयी? हमने जो मतदान दिया उसी का फल है। सीमा तक जो खड़े है उसी से काम हुआ।

आप जो भी विधान आदि अधिक साधना करते है इसका फल सर्वप्रथम वहाँ जायेगा, बाद में आपके पास आयेगा। इसीलिए आत्मा का आत्मा के द्वारा उद्धार होता है। दूसरे का स्वामी मत बनो; आप

स्वामित्व को सुरक्षित रखो।"

आप भले ही कोठी में रहते होंगे, हम तो अपनी कुटिया में रहते हैं। कोठी जब भी गिरेगी अन्तिम संस्कार की भी जरूरत नहीं पड़ेगी किन्तु कुटिया गिरेगी नहीं यदि गिर भी जाये तो यूँ ही उठ जायेंगे। दूसरे का स्वामित्व स्वीकार करोगे तो गिर जाओगे। इसलिए इप् प्रत्यय सोच समझकर लगाना चाहिए। संभव है महावीर भगवान ने यही सोचा है। हम पर्याप्त है।

सिंह एवं सिंहनी के इस उदाहरण को याद रखना। दाम्पत्य जीवन को देखते हुये भी उसने लड़के को बचाया क्योंकि लड़का बाद में तो स्वयं ही लड़कर ले ही लेगा। इस प्रकार ये अध्यात्म शास्त्र है जिसमें भारतीय संस्कृति के ये तीन सूत्र महत्त्वपूर्ण है। स्वामीत्व को ईश-ईश्वर आदि भी कह सकते है। पर कृतित्व-परभोक्तृत्व एवं पर स्वामित्व तीनों ही संसार के कारण है।

अहिंसा परमो धर्म की जय। नँ

गुरुवाणी

- सफलता का मिलना आवश्यक है किन्तु पहले अभिमान छोड़ना पथ्य बताया। पथ्य नहीं तो कोई तथ्य नहीं निकल पायेगा।
- Expiry date - वो भी जिन्दा नहीं, आपको भी जिन्दा नहीं रहने देगी।

२८-५-१७ "ड़ाकिया बनो" गुरुवार

आपको हम उस व्यक्ति के बारे में कैसा वह व्यक्ति इस प्रकार का काम करता है, ध्यान आकृष्ट करना चाहेंगे। आपको भी अच्छा लगेगा। ऐसा अच्छा लगेगा कि हल्दी लगे न फिटकरी और रंग चौखा आय। रंग पक्का लगाना चाहिए। पक्का कैसे लगता है देखो। जिसके जीवन का जो आधार था वह टूटने जैसा हो गया। घर उसका बिखरने को है। घर होते हुये बेघर होने जा रहा है।

जहाँ पचासो रहते थे आज वहाँ यह अकेला है और कोई नही रहा। अब वह दूर रहा है। जहाँ कभी राजसी ठाठ था। आज वह करोड़पति भी रोड़पति बनने जा रहा है। समझ में आ रहा है न? आप भी तो रोड़ से ही आ रहे हो ना? ऐसी अनेक समस्याओं से ग्रसित व्यक्ति के बारे में वह संदेश देकर जाता है। वह कौन है जो इन सभी समस्याओं के बीच भी अपने कर्त्तव्य का पालन करता है।

आपने उसे जाना होगा। कभी परिचय तो पाया होगा। दूध निकालो। होली के रंग से भी पक्का रंग होना चाहिए। ऐसा रंग लाओ की बहिरंग अंतरंग सब रंगमय हो जाये। किन्तु आप न ही तो दीवाली अच्छे से मनाते हैं और न ही होली अच्छे से मनाते

हो। अब मैं ऐसे लोगो को कैसे उपदेश दूँ।

वह कौन व्यक्ति है, जो इन सभी घटनाओ से प्रभावित नहीं होता है। वह है डाकिया, पोस्टमेन बोलते है। सारी की सारी डाक उसी के हाथ से होकर वितरित होती है। आज तो क्या कहें। पहले तो डाकिया आया - डाकिया आया। कुछ डाक देखकर हंसते है तो कुछ रोते है। शोक समाचार लाने वाला भी वही डाकिया है। ऐसे शोक में डूबाने वाले डाकियाको तो पहले रोना चाहिए।

इसमें आपका ही अपना कर्म आपको रुलायेगा, डाकिया के कारण रो नहीं रहे है। वह व्यक्ति भी इसीलिए दुखी हो रहा था। अब दुसरी ओर ऐसा भी होता है कि यदि पीढी दर पीढी बैठे-बैठे भी खायेगे तो भी समाप्त होने वाला नहीं है। आपके दादा-परदादा ने इतना एकत्रित करके दे दिया। वह आने वाला है या आपको वहाँ तक जाना है। मैं क्यों जाऊँ वह आकर दे। इस प्रकार की वार्ता डाकिया से सुन लिये तो भी गुस्सा नहीं होते।

आप भी जब कभी गुस्सा नहीं होते, फिर भी केवलज्ञान क्यों नहीं हुआ? इसलिए नहीं होगा आपको कभी हंसना अच्छा लगता है कभी रोना तो कभी स्तब्ध होना। ऐसा नहीं है। हमारे आशीर्वाद का महत्व भी कम हो जायेगा। हम ऐसे डाकिया है जो

आपके रोने में आयेंगे नहीं।

जिस प्रकार डाकिया को रोना नहीं उसी प्रकार संसारी लोगो की सोच हो जाये। मुनि बनना बहुत आसान है बस डाकिया बन जाओ। किन्तु आप तो कभी सुख - कभी दुख, कभी दुखमा - कभी सुखमा अभी तो दुखमा - दुखमा और आने वाला है इसलिए अभी रोइयो नहीं। नहीं तो पानी सूख जायेगा। उस दुखमा दुखमा में भी जीवन यापन करना होगा। आज पंचम काल में दुखमा में दुख है किन्तु दुख के साथ भी धर्म ध्यान कर सकते है।

अर्थात चतुर्थ काल से भी बदतर कर रहे है इस काल में। छठे गुणस्थान तक पीड़ा-चिन्तन आर्तध्यान बताया पर सप्तम में ऐसा नहीं। गिर गया सीढ़ी पर किन्तु पहली सीढ़ी पकड़ लिया, नीचे जाना ही था। जिनका अन्तर्मुहूर्त काल में उत्थान - पतन होता रहता है वह दुनिया में रहकर भी दुनिया से निराला है।

डाकिया ऐसा ही होता है। इसलिए काल पंचम हो या षष्ठम (छठा) काल हो काल को दोष देना मूर्खता है। गले में कोई नहीं बांधता, एक झटका देगा तो क्या होगा। वह क्या है - चैन। चैन भी कहती है - दूसरो के देखने से चैन का अनुभव होता है। इसीलिए तो कॉलर के ऊपर चैन

आ रही है।

ये क्या है? दुख में बेचैन हो जाते हैं। बे यानी दो डबल चैन हो जाते हैं। सुख-दुख ये सब मान्यता पर आधारित है। लहरे/तरंगे उठ रही है उन्हीं में लीन हो जाता है। हमारी आस्था की क्या सीमा है? वह बाहर नहीं किन्तु बाहर से भीतर आ नहीं पाती। तरंग ही बता रही है वह उठती है और समाप्त हो जाती है। भगवान का यही स्वरूप है, इंडिया की तरह सब मालुम होने पर भी सुख-दुख सबमें वह अपने में रहते हैं।

आने वाले काल में (दुखमा=दुखमा) तो नरक से ही आयेंगे और नरक ही जायेंगे। दुखमा में क्यों हाय-हाय कर रहे हो, ऐसा व्यक्ति सबको नरक जायेगा। मनुष्य बनेंगे पर उम्मीदवार वे ही होंगे जो नरकों से ही आकर सीट पुरी करेंगे। थारी-म्हारी करते हैं वे ही नरक जाते हैं। बहुत पास Border पर ही बैठे हो। अहो बैठे हो उसी के नीचे नरक है। रत्नप्रभा आदि आप तो वैसे ही रत्नों के पेमी हो। एक रत्न भी नहीं मिलेगा वहाँ। तत्व ज्ञान महत्त्वपूर्ण है।

दुख अथवा सुख का संवेदन करते हो साथ ही आवेदन भी करते रहते हो। महाराज आशीर्वाद दे दो। हम क्या करें? एक हथौड़ा दे दो, थोड़ा-थोड़ा तोड़कर दे देंगे। पुण्य दे रहे हैं तो आपका भाग्य ही नहीं है ग्रहण करने का जैसे पेवर (शुद्ध) दूध पीने की क्षमता नहीं

होती है।
ये पक्का है कोई भी काल हो चतुर्थ हो या पंचम आपका किया हुआ आपको ही फल मिलेगा। उस कर्म के उदय में हा-हू न करो। हाय-हाय करोगे तो मतदान की ओर चला जायेगा। आचार संहिता में हाय-हाय नहीं। यहीं तक ही ही हा-हू सप्तम में तो वह भीतर चला जाता है। आज का उदाहरण अचानक याद आया, इसने सोचा परोस दे तो अच्छा होगा। खा रहे हो या नहीं? बोलो ना? विश्वास की बात है।
मुनिमहाराज में उस क्रिया का अनुकरण होता है उनसे थोड़ा-थोड़ा आप में भी आ जाये। आखों को मलिये नहीं। थोड़ा सा दुख हुआ कि दोनों पल्ला हाथ में आ जाते हैं। जैसे तो बहुत बड़ा/ज्यादा कचरा आँख में चला गया हो। दुख की अभिव्यक्ति करते होती है पर अपने तक ही सीमित रखे। संवेदन में जब तक चुनाव का विकल्प रहता है तब तक ठीक नहीं। पंचमकाल दुखमा है अभी डबल दुख नहीं है। सहन करने की क्षमता है।
आगम में ऐसा उल्लेख मिलता है फिर जब अन्य कार्य में क्षमता है तो इसमें क्यों नहीं है। आपका गुणस्थान गिरेगा नहीं। औदयिक भाव है, कर्म के उदय में हो रहा है।
अहिंसा परमो धर्म की जय। नुं

[पुष्पदन्त सागर जी की समाधी पर]

26-5-19 "हमेशा तैयार रहो" शुक्रवार

हम लोगो को आचार्यों ने कदम-कदम पर संबोधित किया है और उस घटना से हमेशा-हमेशा जाग्रत किया है। और बाध्य भी किया है। आचार्य कुन्दकुन्द महाराज जी ने भी इसीलिए अपनी दीक्षा की तिथी को याद करने को कहा है। प्रकारान्तर से यही बताया कि दीक्षा तो हो गयी किन्तु भविष्य में जो होना निश्चित है कब होना है ये संदेहास्पद है। भविष्य संभावनायें... वह दृश्य (समाधी) सामने आ जाता है।

जीवन क्या है? एक क्षण भी आगे व्यतीत नहीं हो सकता। चुनाव तो 5 वर्ष में एक बार होते हैं उसकी तिथी भी निश्चित है किन्तु यहाँ भविष्य संदेहास्पद है। यह भी निश्चित है कभी भी हो सकती है - आपत्तिकाल बोलते हैं इसे। जैसे- चुनाव बीच में भी कभी-कभी हो जाते है तो पहले आपत्तिकाल लग जाता है। "जीवन तो निश्चित है पर मृत्यु निश्चित नहीं है।" ज्ञानी लोगो ने इसे इन्द्रधनुष की उपमा दी है।

आप लोगो ने वर्षाकाल में बादलो के मध्य सूर्य के संयोग से इन्द्रधनुष की रचना देखी होगी। क्षणभंगुर होता है वह दिखता है और चला जाता है। इसलिए जीवन के क्षणभंगुरता एवं आकस्मिक इस प्रकार होने पर कभी भी विस्मय नहीं करना चाहिए।

एक नहीं यहाँ तो नौ-नौ द्वार है।
समझ में नहीं आता इन नौद्वार के होने पर भी आत्मा कहाँ अटकी है। जैसे ट्यूब में हवा भर दें तो छोटा सा छेद भी पकड़ में आ जाता है फिर यहाँ तो बड़े-बड़े 9 छेद है। एक नहीं 9-9 पंक्चर है। आत्मा को बाहर फिर भी नहीं आने देते यही बंधन का प्रतीक है। जब छोटे में थे तो जल के बुलबुलों से खेलते थे। देखकर कूदते थे। साबुन का पानी हो तो और बड़े-बड़े बुलबुले / अच्छे बुलबुले बनते थे परन्तु मात्र एक-आध सेकेण्ड में ही वह फूटना निश्चित है।
इसे देखने में मनोरंजन होता था। ये शरीर भी तो एक बुलबुला है। आगम में आता है- जलबुद्बुदसम--। इसका फूटना निश्चित है। कब-किसका फूटेगा पता नहीं? इसीलिए दो तरह का संलेखना काल बताया- निर्धारित एवं अनिर्धारित। संक्षेप में भी संलेखना - तात्कालिक सभी कार्य छोड़कर / त्यागित करके अपने आत्म तत्त्व का चिंतन करता है। इस शरीर को छोड़ने में किसी प्रकार का खेद नहीं करता।
इसी द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव के साथ होना था यह जानता है। "होना था इसको लेकर केयरलेस भी नहीं होता तथा होना था ऐसी दिनचर्या अथवा कातरता भी मन में नहीं लाता।" मूलाचार में आया है- सिंह वृत्ति से जीवन यापन करते हैं। "आश्चर्यतो

यह है कि मृत्यु नहीं हो रही है।"

साधक जब तक मृत्यु को प्राप्त न हो तब तक एक-एक क्षण का उपयोग महत्त्वपूर्ण मानता है। बाकी सब तो औपचारिक है। क्यों कि मृत्यु कब होना - कैसे होना कुछ भी निश्चित नहीं है। आपने फोटोग्राफी देखी है? पहले ½-½ घण्टे बैठा देता था फिर 1-2-3 करके लेते थे। इतने में यदि आप हंस गये, उबासी आ गयी, पीछे देखने लगे, हाथ से खुजाने लगे तो फोटो कैसी आयेगी? आप फोटो लेने वाले को कुछ कहें, वह कहता है बल दबाते जैसे आप थे वही आया है।

कभी भी बल दब सकता है आपको कई बार कहा था। इसी प्रकार सब कर्म निश्चित है परन्तु आयुकर्म अनिश्चित है। ऐसा धोखा देने वाला यह आयुकर्म है। जो स्वरूप को जानता है वह धोखा नहीं खाता। गाड़ी आगे-पीछे हो सकती है किन्तु आयु पूर्ण होने पर कोई भी रोकने में समर्थ नहीं हो सकता। "आयु क्षय मरणं" आयु का क्षय हो गया है अब रुक नहीं सकते आगम का उल्लेख है। इतना ही।

फोटोग्राफी से समझ गये न? "अपने ही चित्र की विचित्रता से परिचित होना अनिवार्य है। लोग मृत्यु के नाम से ही भयभीत हो जाते हैं। परन्तु सम्यग्दृष्टि जीव निर्भय रहता है। सप्तभय विमुक्का" कहा। वह सात प्रकार के भय से

ऊपर उठकर जीता है।

जो इन भयों से ऊपर उठता है वही अविनश्वर का बोध कर सकता है। जीवन तो क्षणभंगुर ही है पर आत्मा क्षणभंगुर नहीं वह तो अविनश्वर है। यह शरीर तो छूटेगा, इसके वियोग में दुःखी नहीं होना है। इस काल में वैसे भी अविनश्वर पद की प्राप्ति नहीं होगी अतः पुनः धारण करना होगा। पुराने को छोड़ना और नये को धारण करना जैसा है इस शरीर का त्याग है।

अब इससे अवगत हो जायें कितने क्षण निकल चुके कितने बाकी है ज्ञात नहीं है। हम कहीं पर भी, किसी भी रूप में हो वह छोड़ेगा नहीं। त्यागियों को तो विशेष जागृत होना चाहिए ताकि वह संयम [व्रतों] को निर्दोषता से पालन कर सके।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

Notes-

- मौसम आते समय एवं जाते समय भी फल सब्जी (मौसमी) नहीं खाना चाहिए।
- पथ्येसति किं विषदं - पथ्येऽसति किं विषदं।
- अनुपात सबसे बड़ी पद्धति है।
- उनब मुझे कहना नहीं करना है।
- मंच बहुत है पर सरपंच (अगवा) कोई नहीं बनता।
- प्रयोग के बिना विश्वास खास नहीं ले सकेगा।

27-4-19 "कैसे धोयें कर्मों को" शनिवार

वर्षा ऋतु में वर्षा होती है, प्रतिदिन हो ये नियम नहीं किन्तु वर्षा ऋतु उसी को बोलते हैं जहाँ गरमी थोड़ी भी तेज होते ही वर्षा हो जाती है। आर्द्रता को बनाये रखती है, रात में तापमान गिर जाता है। इस ऋतु में पानी नदीयों द्वारा बहता हुआ समुद्र तक चला जाता है। दो माह आगस्त्य नक्षत्र का उदय होता है। प्रत्येक दिन कोई न कोई नक्षत्र का उदय तो हमेशा रहता ही है।

ज्ञानार्णवकार ने इस नक्षत्र की विशेषता बताते हुये कहा कि अन्य नक्षत्रों के साथ पानी जो बहता है वह अशुद्धि को लिए हुए रहता है किन्तु इस नक्षत्र के आते ही नदियाँ साफ-स्वच्छ दिखने लगती हैं। एक भी कण मलीनता का नहीं दिखता। सब कूड़ा-कचरा नीचे बैठ जाता है अथवा बह जाता है। नदी का पानी/कुयें का पानी दर्पणवत् हो जाता है। आप अपना प्रतिबिम्ब उसमें देख सकते हैं अब दर्पण की कोई आवश्यकता नहीं पड़ेगी। ठीक हैं न? हओ बोलो। हओ का अर्थ होता है ठीक है महाराज, बिल्कुल सही, बराबर। अर्थात् अर्थ है हओ के।

लेकिन अपने मतलब का अर्थ नहीं निकालना। तो मैं कह रहा था अगस्त्य नक्षत्र के आते ही जैसे धरती पर जो पानी बह रहा था वह साफ-सुथरा हो जाता है। इसी तरह ऐसा कौनसा भाव है उस नक्षत्र की तरह जो हमारे भावों/परिणामों की मलिनता

को दूर कर स्वच्छ कर देंगे?

इसमें कोई संदेह नहीं है आपने जब से कमाया है उसमें से यदि कुछ निकालने (दान) का सोच लेते हैं तो उस पुण्य कर्म के माध्यम से सत्ता में जो पाप है वह साफ होना प्रारम्भ हो जाता है। सोना-चांदी को ऐसे साबुन आदि से साफ नहीं करते उसे तो रीठा लगा दो फिर देखो चमकने लग जाते हैं। जैसे तो आज ही खरीदा हो। इसी प्रकार दान करने से चमक आने लग जाती है।

उसके भाव भी शुभ हो जाते हैं। शुद्ध भाव भी हो जायें तो कहना ही क्या? दाग की रीमझीम से कचरा बहता नहीं पर मुसलाधार पानी गिरने पर कचरा बचता नहीं सब बहा ले जाता है। इसी प्रकार के शुभ भाव होते हैं कुछ लोगों के तब निकल देते हैं। देखो! लाओ-लाओ कहने वाले तो साला जी बन जाते हैं जब कि देओ-देओ तो दादा जी बन जाते हैं।

धीरे-धीरे ताली बजा रहे हैं। दान की अनुमोदना तो अच्छे ले करो। वैसे-वैसे छठवां हिस्सा मिल रहा है। सोच लो हमारे लिए कितना हिस्सा मिलता होगा? एकत्रित नहीं कर सकते। हमने तो ताला-कुंची भी नहीं रखा। बस इसी तरह बहते जाओ। जिस किसी के जीवन में कोई आधी-

व्याधि हो सब दूर होती जावें।

"लेने में लेप होता है परन्तु देने में धोना होता है।" बिना धोबी के भी ये काम हो रहा है। अज्ञान के वशीभूत होकर कर्म किया आज अवसर आया है तो आपके ऐसे भाव हुये। ऐसे भाव भी साता के उदय से ही हो सकते है। "साता के उदय से ही संग्रहित हुआ परन्तु सही स्थान पर लगाना साता का उदय मात्र नहीं अनेक तपस्याओं का फल है।" ऐसी भविष्यवाणी है अच्छे कार्य में लग गया अब तो अच्छा ही होना है।

दान से भी कर्मों की निर्जरा होती है। मोह से निकलना बहुत कठीन है। हओ तो कहो? कहो या न कहो भीतर तो जो है सो है। गाँठ पर गाँठ लगाते जाओ। नाकबंद करके भी खुलने वाली नहीं, अब तो कैंची से काट दो। लेकिन पसीना आता है। जितना देओ उससे कई गुना लेओ, यहाँ ये स्कीम है। सम्यग्दर्शन के अस्तित्व का प्रतीक है। शुभ भावों से देओगे, यदि नहीं भी चाहो तो भी कई गुना मिलेगा। वो भी चतुःस्थानीय ही बंधेगा।

जैसे बट्टा रहित बिस्किट होते है- सोने के बिल्कुल Pure रहते है। रसी को चतुःस्थानीय बोलते है। आप बच नहीं सकते ऐसा बंध होना अनिवार्य है। "पुण्य की निर्जरा करो अपने स्वाध्याय में ऐसा कहने वाले पुण्य के बदले में पाप का बंध कर रहे है।" जो बात आगम में है ही नहीं फिर भी

वे कह रहे हैं।

हाँ! स्थिति की निर्जरा फिर भी होती है परन्तु अनुभाग की (प्रशस्त वर्ग) कभी निर्जरा होती ही नहीं। उसका यदि आप त्याग भी कर दें तो भी नहीं रुकेगा, वह तो ताजा अच्छी क्वालिटी का बंधेगा। अहंकृत्य का ध्यान रखना, भोगों में तो परतंत्रता ही आयेगी। माँग कर क्यों खा रहे हो। दूसरों को खिलाकर खायेंगे ये संकल्प कर लो। फिर देखो कई गुना वो भी अच्छे सत्व के साथ मिलेगा।

भोगभूमि में ऐसा ही मिलता है। 1-2-3 उपवास बाद हरड़-बहेड़-आँवला बराबर अमृत तुल्य आहार। इसका अर्थ है जितना अधिक आहार/भोजन वह रोगी/भोगी का प्रतिक है, योगी तो थोड़ा ले लिया। ये सब सम्यग्दर्शन के साथ त्याग भाव का परिणाम है। स्वर्ग में भी इसी प्रकार महिनो में अमृत का भोजन। भूख लगती ही नहीं एवं नींद तक नहीं लेते। थकावट होती ही नहीं। हाँ! इतना अवश्य है वहाँ से पुनः इधर आना ही पड़ता है। ऐसी गति यदि त्याग करोगे तो क्या होगा? इस गति में त्याग कर लो। बच्चे भी शक्ति के बाहर कर रहे हैं। इनको अच्छाई की ही ओर ले जायेगा। मोहनीय कर्म की निर्जरा तो हो ही रही है। निदान के बिना कर्त्तव्य भाव से, अच्छे परिणामों से शास्त्रोक्त करते हैं तो फिर अतिशय पुण्य तो मिलेगा ही। इस प्रकार का आपका हेतु न होना चाहिए।

अहिंसा परमो धर्मकी जय हो

रविवार
२४-५-१९ "पूर्णायु चिकित्सालय दिलायेगा पूर्णायु" प्रातः

समय बहुत कम बचा है, आज रविवार भी है। आप लोगों की प्रार्थना हुयी है जो काम करने जा रहे हो उसके नामकरण की आवश्यकता है। दुनिया में भी जब कोई सदस्य आता है तो व्यवहार को चलाने के लिए कोई एक नाम रख दिया जाता है। किन्तु मैं आप लोगों से यह कहना चाहता हूँ कि हमारे निमित्त से नामकरण कराना चाहते हो तो काम भी करोगे या नहीं। आपके पास पैसा तो इकट्ठा होता जायेगा हमारे नाम के निमित्त से फिर उसका इस काम में सदुपयोग भी होना चाहिए।

इसके लिए जिन लोगों ने इस कार्य को अपने कंधों पर लिया है - धर्म संरक्षिणी सभा भी है, अथवा जो काम करना चाहते हैं वे आयें एवं यहाँ सामने तिफल प्रदान करके संकल्पित हों। जैसे प्रतिष्ठा महोत्सव आदि में आचार्य निमन्त्रण भी होता है कि नहीं? इसके साथ बाहर वाले भी आना चाहें तो आ सकते हैं, परन्तु ज्यादा भीड़ न करें।

आप सभी लोग जो कार्य का संकल्प लेने जा रहे हैं, उसके लिए आपने कहा महाराज नामकरण की आवश्यकता पड़ती है। इसमें कोई दो राय नहीं है कि ये शुभ कार्य होने जा रहा है "यह संसार का काम नहीं अपितु संसार से मुक्ति दिलाने वाला है।" हम भी ऐसे कार्य में यदि निमित्त बनते हैं तो कोई दोष नहीं है। जबलपुर

तो बहुत बड़ा है, इसे जबरदस्त कहते हैं।

इतना ध्यान से सुन लो यदि आप जबरपुर वाले हैं तो कार्य में कोई गड़बड़ी देखेंगे तो हम जबरदस्ती कह भी सकते हैं। ये न ही मन्दिर है तथा न ही विद्यालय है। यह एक ऐसा महा-विद्यालय आप खोलने जा रहे हैं जहाँ इस शरीर की चिकित्सा होगी जो मोक्षमार्ग में अपना काम करता रहता है। उसके लिए यहाँ पर शुद्ध औषधियों का निर्माण, उनका वितरण, वैद्यों को तैयार करना, छात्र-छात्राओं का भर्तीकरण आदि आदर्श कार्य किये जावेंगे। जो लुप्त प्राय हो रहा था वह पुनः सबके सामने लाने का आप लोगों ने बीड़ा उठाया है।

नामकरण की बात आयी है तो इतना ध्यान में तो होगा ही कोई भी नाम अजर-अमर तो है नहीं। भोपाल में चातुर्मास के दौरान बताया - महाराज यहाँ चिरायु है। हमने कहा भैया! जितनी आयु मिली है उसमें एक समय भी कोई मिला नहीं सकता फिर चिरायु कैसे? हाँ! ऐसी चिकित्सा विधी हो सकती है जो आपको पूर्णायु दे सके। तो यहाँ का नाम क्या है? "पूर्णायु आयुर्वेदिक चिकित्सालय" पूर्णायु का मतलब क्या है?

कोई भी आपको अजर-अमर नहीं बना सकता किन्तु आज जो अकाल में ही काल के ग्रास में जा रहे हैं,

उससे बचा सकता है। अकाल मरण से बचाकर आपकी जितनी आयु है उसे पूर्ण किया जा सकता है। रोग इत्यादि, रक्तचाप, पागल हो जाना, वेदना होने से अकाल मरण हो सकता है।

उससे बचने हेतु आचार्यों ने विभिन्न प्रकार के औषधदान का उपक्रम किया। औषध से इस अकालमरण से बचा जा सकता है। ऐसी-ऐसी औषधियों का निर्माण यहाँ पर होगा (इसलिए चिरायु नहीं अब पूर्णायु के साथ-साथ यह नामकरण हुआ) इसमें केवल चिकित्सालय एवं अध्ययन ही नहीं अपितु अनुसंधान भी होगा। नर्मदा नदी का यह तट, जबलपुर जो संस्कारधानी से इसकी शुरुआत हो रही है।

इन लोगों ने तो नाम के पूर्व ही वहाँ काम करना आरम्भ कर दिया (हमने सोचा अर्ब तो नामकरण कर ही देना चाहिए। लेकिन इतना ध्यान रखना - उत्सुकता से नहीं उत्साह के साथ आगे बढ़ना है। उत्सुकता एवं उत्साह में बहुत अन्तर है। जो गम्भीरता रखता है, वह उत्साही होता है उत्सुक नहीं। भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि आपका उत्साह यूं ही दिनदुनी और रात चौगुनी बढ़ता जावें। ये भी ध्यान रखना - नाम के लिए नहीं काम के साथ वो भी सुदामा बनकर काम करना होगा और अपने को आगे बढ़ाकर पूर्णायु बनाना होगा। पूर्णायु को पूरा करना होगा। अहिंसा परमो धर्म की जय। नँ

21-5-19 "लापता का पता लगाने के सूत्र" सोमवार

आप लोगों ने यह देखा होगा और विचार भी किया होगा, जिसका वह परिणमन है अथवा जिसका वह परिणाम है। फिर भी वह परिणमन परिणाम से अपनेआपको पृथक जैसा कर रहा है। क्या वजह है? उसे आपके सामने लाना चाहता हूँ। उस दूध को विधिवत् दही का रूप देकर मंथन किया, जिससे नवनीत तैरने लगा किन्तु तक्र वैसे का वैसा बना रहा।

ऐसा परिणमन आया कि वह नवनीत तैरने लगा, वह सोच रहा है ये मेरा अद्भुतपन है। क्या आपने कभी ऐसी जिज्ञासा की? वह कितना दिख रहा है क्या आप अनुमान लगा सकते हैं? आप तो २०वीं शतीमें चल रहे हो। उदाहरण देने से पहले यह भी सोचना होता है कि क्या यह २०वीं शती का है? ग्रामीण लोग फिर भी पहचानते/जानते हैं क्यों कि उन्होंने ऐसा अतीत में परीक्षण किया है।

जैसे दूज का चन्द्रमा दिखता है उसी स्वरूप में नीचे का हिस्सा दिखता है, ऊपर का नहीं दिखता है। ऐसा क्यों? ऐसा स्वभाव/परिणमन है। इस प्रकार स्वभाव-विभाव में कितना अन्तर है यह ज्ञात कर सकते हैं। वर्तमान में कुछ स्वाध्याय करने वाले ऐसा ही अनुभव कर रहे हैं। उन पर कृपा हो गयी हो। जिसे ऐसा अनुभव हो रहा है। जब जल नहीं है तो

पुरा क्यों नहीं दिख रहा।

उसी नवनीत के गोले को आग पर तपाया जाता है तो घी बनता है किन्तु भारमें अन्तर आ जाता है। मक्खन एवं घी में अन्तर होता है। जब पुरा पानी निकल जाता है तो नवनीत शायद घी बन जाता है। "जब तक विभाव लगा रहता है तो भीतर वाले उस स्वभाव की उपलब्धि नहीं हो पाती।" वह घी नहीं कहलाता। उस डूबे हुये नवनीत के गोले अथवा दूध के चन्द्रमा को आप क्या कहेंगे? सूर्किमा तो नहीं कह सकते हो।

उसकी आयु बहुत ही कम है, ज्यों ही तपाने को रख दो - पिघल गया। गया तो जीवन गया। अब तैरा नहीं सकते। तैरेगा तो घी की तरह तैरेगा। आचार्य इसी को स्वभाव कहते हैं। यही तपस्या का फल है जो विभाव से स्वभाव की ओर ले आता है। अब उसे डूबो भी नहीं सकते। डूबो कर दिखा दो? इतने व्यक्ति बैठे हैं - एक आध हाथ तो उठा दो। डूबती नहीं - वह तो ऊपर ही आयेगा। तैराक डुबकी तो लगा सकता है पर डूबेगा नहीं।

कुछ अपवाद है कि वह डूब भी सकता है। यदि पानी को ग्रहण कर ले तो। नवनीत में पानी था तब तक वह तैर तो रहा है परन्तु पुरा अभिव्यक्त नहीं हो रहा। इसी प्रकार हमारे शरीर में वह आत्मतत्त्व विद्यमान है, चाहें तो बाहर आ सकता है। जब वेदना

होती है तो आत्मप्रदेश बाहर आ जाते हैं।
वेदना होगी तभी आप चिकित्सा हेतु जाते हैं। इन सबको देखने से लगता है कि यह आत्म तत्व शरीर को छोड़ना नहीं चाहता। छुड़वाना चाहो तो भी सहज नहीं इतना घनिष्ठ संबंध है। परिग्रह को चिपकाये हुये हैं। कितना भी मंथन कर लो। प्रभु से प्रार्थना करो कि आपने कौनसा रास्ता अपनाया? वे प्रभु जाते समय बताकर गये। आप ढूंढोगे इसलिए मेरा पता लिख लो।

हम आपकी प्रतिक्षा करेंगे। आप यहाँ प्रतिक्षा कर रहे हो- वे कहते हैं- मैं यहाँ नहीं आऊंगा। जाने के उपरान्त ही नींद खुलेगी। पता अब पूछ रहे हैं, जब वे लापता हो गये हैं। लापता का अर्थ अभाव नहीं। ढूंढो, कहीं न कहीं हैं। आयु को जब तक धारण किये हो तब तक उनके पास नहीं जा सकेंगे। आयु का सम्बन्ध आत्मा से लगा रहता है। जब तक आयु पूर्ण न हो, उनकी खोज कर लो, पूरा पता लग जायेगा, क्यों कि वे वहीं रहते हैं।

उनके पास शक्ति तो है पर आगे जाने की पटरी नहीं है। धर्मास्तिकाय रूप पटरी नहीं है। "इस शरीर को अच्छे कार्यों में लगाओगे तो पक्का है लापता का भी पता लग जायेगा।" यहीं से बोल रहा गये हैं। वैसे स्वभाव को पकड़ना कठिन है। पकड़ से

बाहर है, किन्तु हम पकड़कर ही रहेंगे। जाना चाहते हो हम पता देवें? शरीर से पता नहीं लगेगा। तीन लोक में ही उनका पता है बाहर नहीं। ॐ

आप लापता ही रहोगे। लापता की कैसे खोज की जाती है यदि समय मिलेगा तो फिर बताऊँगा। हमने पहले ही कहा था - समय के अनुसार ही कार्य करो। हमारे लिए भी उस समय की बाबंदी है।

अहिंसा परमो धर्म की जय। बुँ

नये दो हायकु -

(1) "दवा - दवा है, कड़वी हो या मिठी, आरोग्य पाने"

(2) "मुझे संभाला, उन्हें दवा दुआ दूं, ऋण चुकाऊँ"

रविवारीय मुख्य-मुख्य प्रवचनांश [28-4-19]

- आयु रूप प्राण को अच्छे ढंग से जानने का नाम ही आयुर्वेद है।
- जो आहार को ही औषधी बना दें, वह आयुर्वेद है।
- यंत्र को मुख्य एवं मंत्र को गौण करना ठीक नहीं, जो आज हो रहा है। इसीलिए भटक रहे हैं।
- मन-वचन-काय को संयत बनाने का नाम ही योग है। तीनों काल में सामायिक करना योग है।
- पायस पूर्णा में आप सभी पायस (तत्त्वज्ञान) का पान कर रहे हैं।
- आजकल के वैद्य भी रोग की उदीरणा करा रहे हैं, रोग

को बुलाओगे तो पहनने लायक भी नहीं रहोगे।

० तापमान 5° को छू रहा है और बीड़ी पी रहा है वाह! कितनी क्षमता है तापमान सहन करने की। वही यदि धुनि बन जाये तो अब्बा परिवह को सहन कर लेगा।

० जो साहित्य भटकाये, उससे बचना पहले आवश्यक है।

० बीड़ी नहीं पी जाती चुंआ पीया जाता है। चुंआ ही पीना है तो रसोई में जलाओ - खाओ भी, पीओ भी एवं आंखों में भी आँज लो। सब शुद्ध हो जायेगा।

० जिसके पास अन्तर्दृष्टि है उसकी बाहरी दृष्टि एवं सृष्टि दोनों अच्छी है।

० आज उपनयन (चश्मे) में तो अनेक कोण आ रहे हैं किन्तु सोचने का दृष्टिकोण समाप्त होता जा रहा है।

० बिना आयुर्वेद के समाधीमरण नहीं कर सकोगे। आज दवाई को आप नहीं दवाई ने आपको खा लिया है।

० अध्यवसाय ही अब व्यवसाय बन गया।

० वैद्य लोग धन के दास न बनें - चेतन धन को देखें।

० घरेलू व्यवहार जो बंद हो गया वह पुनः चालु हो।

० 24 घण्टे में एक बार खाने वाला साहुकार होता है। बच्चे जैसे मत करो।

० ज्यादा परिश्रम, यद्वा-तद्वा भोजन करने से चिडचिडापन आता है।

० भारत को लौटाना चाहते हो तो पेंथी को पहले लौटाओ।

० ०० ०

30-5-19 "राग की लाली से बचो" मंगलवार

सूर्य नारायण को लेकर दुनिया में क्या-क्या होता है? इस उदाहरण के माध्यम से अपने प्रयोजन को भी सिद्ध करेंगे। आप लोगों को ज्ञात है कि जब सूर्य का उदय होता है तो कैसा नजारा होता है। लोग उसे देखने के लिए बड़े-बड़े पहाड़ों पर जाकर पहले से ही प्रतिक्षारत रहते हैं। फोटोग्राफी वाले उस क्षण का बहुत इंतजार करते हैं जब सूर्य के उदय से पूर्व लाली फूटने को होती है।

इसके उपरान्त अब हमारा कार्यक्रम प्रारम्भ होता है। लाली कैसी होती है? लाल-लाल, इसी लिए नाम भी रखते हैं- भास्कर, भानु, लालचन्द आदि। लाल भी है और चन्द भी (सफेद) है। यह सबलोगों को अच्छा लगता है। अब हम पश्चिम की ओर आते हैं। उस ओर वह सूर्य डूबने को होता है। डूबते हुये सूर्य की भी लाली होती है। जिसे देखने के लिए फोटोग्राफी करने के लिए लोग विशेषकर हस्तशिल्प आदि वाले अपनी स्याही एवं कलम से बांधने का प्रयास करते हैं। उसी दृश्य के लाख-10 लाख नहीं करोड़ तक ले लेते हैं।

ये इसलिए बता रहा हूँ कि यहाँ की संस्कृति उगते सूर्य को पूजने की है। पश्चिम में जब सूर्य जाता है तो उस लाली को नहीं पूजा जाता। [सुन रहे हो आप लोग?] [हाँ] यही बात जो मुख्य है वही सुननेकी है,

बाकी तो लाग-लपेट करना होता है।

जैसे फोटोग्राफी तो एक ही सेकण्ड की होना है परन्तु ये परदा खेंचो, ऐसे होना-वैसे होना कहा जाता है। ताकि आप भी सोचो कि सही पैसा लिया गया है। अब उसके विषय की ओर हम आयें कि आखिर ऐसा क्यों होता है। जब सूर्य पूर्व में होता है तो वह उदय / जागृति की भावना का प्रतीक है, इसीकारण उसकी आरती उतारी जाती है। वही जब पश्चिम में होता है तो लाली तो है / माउन्ट आबू अथवा सोन मुद्रा-पंचमढ़ी के उतुंग पहाड़ से देखने जाते हैं।

कभी शहर के लोग भी देखते हैं किन्तु कोई आकर्षण नहीं रहता क्यों कि यह संध्या की लाली है। उसकी अपेक्षा तो रत्नदीपक का प्रकाश अच्छा है। कवि लोग इसका वर्णन करते हैं। सुरः वायां को नरपति तरसे - ये अज्ञान है। भोगों की आकांक्षा है। सुबह की आरती जो उतारते है उससे अज्ञान दूर होता है। इसीलिए लिखा - प्रभात में भी लाली संध्या में भी लाली है।

एक जगाती एक बुझाती, कितने अन्तर वाली है।

यह हमने शुभभद्र स्वामी की आत्मानुशासन का जब अनुवाद कर रहे थे तब लिखी थी।

दो लाइन में श्लोक का पुरा अर्थ बन ही नहीं पा रहा था। प्रशस्त राग की क्या भूमिका है? इस दोहे प्रभात में भी - -- से पता लग

जाता है।

एक जगाती मतलब प्रभात होते ही सब विषयों से दूर हो जग जाते हैं। "प्रशस्त राग को मात्र बंध का कारण न माने। बंध के विनाश का भी कारण है।" आप सोये ही ना रहे जागते रहें। प्रभु के दर्शन मात्र से जागृति का भाव आता है। जब जागे - तभी सवेरा कहते न? कैसा लगा? सिलोना] अलोना को भी सलोना बोला रहे हैं।

इस प्रशस्त राग की भूमिका में ही भक्ति/अनुष्ठान आदि सत्कार्य करते चले जाते हैं। हम मात्र दिन में ही नहीं रात में भी सोते-सोते भक्ति करते हैं। "प्रभु भक्ति से जागृति आ जाती है।" गृहस्थ दशा में ये करना अनिवार्य है। जबलपुर वाले इसी राग से तो यहाँ तिलवारा आ जाते हैं। ये लोग इसी कार्य के लिए त्रिकाल चौबीसी बना रहे हैं। क्यों ऐसा ही है न? हमारा भी इसमें आशीर्वाद है। आप जो भी इसमें लगा रहे हो उसमें से कुछ तो हमें भी मिलेगा।

प्रशस्त राग में लगाना भी मार्ग है। यहाँ कोई प्रकार का प्रबन्ध नहीं है फिर भी दौड़े-दौड़े चले आते हैं। विषयों को कुछ समय तक भूल जाते हैं। अब घर (वहाँ) का कुछ याद नहीं रहता। इसको बंध का कारण नहीं समझना। लाली होने पर भी यह लाली अच्छी है जो जगाने वाली है। भगवान की वह वीतराग छटा

जो बुद्धि के राग को दूर करने वाली है।
वही लाली यदि भुलाने में कारण बने तो मैं उसे स्वीकार नहीं करता। एक राग को छुड़ा रही है दूसरी राग को पकड़ रही है। एक में शुभोपयोग है दूसरे में अशुभोपयोग। अब समय परिवर्तन कर दिया गया है ताकि आप लोगों को ज्यादा गर्मी न लग जाये। फिर कभी बालभानु को भी दिखायेंगे। आप तो हमने लाली को तो दिखा ही दिया है। अब बाद में कौन-कौन देखेगा-देखो। हओ तो कह दो (इतना ही पर्याप्त है।

अहिंसा परमो धर्म की जय। बुँ

Notes-

- जड़ सम्पत्ति को नहीं जिन गुण सम्पत्ति हो देखो।
- रसना इन्द्रिय पर विजय करने वाला मात्र भोजन पर ही विजय प्राप्त नहीं करता बल्कि वचनावली पर भी विजय प्राप्त कर लेता है।
- जिनेन्द्र वही बन सकता है जब आहार पर नियन्त्रण हो।
- गाय-भैंस इत्यादि का पालन होगा तभी आयुर्वेद की औषधीयों का निर्माण कर पाओगे।
- सोच-विचार को सुधारना चाहते हो तो अल्प मात्रा में आहार ग्रहण करो।
- आयुर्वेद के प्रचार-प्रसार में अपने धन का सदुपयोग करना संस्कृति एवं धर्म को बचाना है।

1-5-19 "साधना का सूरज" बुधवार

कल प्रभात में भी लाली और संध्या में भी लाली के बारे में थोड़ा बहुत विश्लेषण किया था। कुछ श्रोताओं की अपेक्षा थी - उस लाली की अपेक्षा ही आज आगे चलते हैं। अब सूर्य ऊपर चढ़ आता है, तो उसका उपयोग कौन करता है। सभी लोग अपने-अपने अनुसार करते हैं। किन्तु कुछ ऐसे भी मुनि महाराज होते हैं जो आतापन योग धारण करते हैं।

ये कौनसा योग है? हाँ! जैसे एक-एक कदम सूर्य चलता है वैसे ही ये भी एक-एक कदम चलते हैं। कैसे? उस सूर्य की प्रखर किरणों के बावजूद नीचे देखकर इर्यासमीति पूर्वक चलते हैं। उस आलोक पुंज सूर्य के उपयोग में मुनि महाराज भी पीछे नहीं हैं। आप सूर्य के उदय एवं अस्त को देखने दूर-दूर जाते हैं वे सूर्य के उदय से अस्त तक पूर्ण साथ रहकर आनंद का अनुभव करते हैं।

गर्मी के दिनों में भी गमन करते हैं। सूर्य के उस आताप को ओढ़ लेते हैं, जो कर्मों की निर्जरा में निमित्त बन जाता है। ये सब परवश होकर नहीं करते बल्कि उत्साह के साथ स्ववश होकर करते हैं। इसको बाधा न समझकर अव्याबाध सुख में कारण बना लेते हैं। ऐसे उन महामुनिराज को हमारा नमस्कार हो। इतना ही नहीं वह सूर्य

जैसे-जैसे ऊपर चढ़ता जाता है, उसी तरफ देखते भी जाते हैं।

हम यदि थोड़ा सा उखर तेज सूर्य हो तो देखते ही युं कर लेते हैं। वे दीर्घ संहनन के धारी होते हैं। आंखे बंद नहीं करते। जब से उदय होता है बस इसी ओर आंखे रहती है। वह ऊपर चढ़ता जाता है दृष्टि भी चढ़ती जाती है। भरत-बाहुबली में दृष्टि युद्ध हुआ था, कौन पहले पलक झपकाता है? ये ऐसे मुनिराज होते हैं दृष्टि/पलक झपकाते ही नहीं। जिस तरफ सूर्य उधर ही ये देखने लग जाते हैं।

जब सूर्य अस्त/बंद होता है तभी दृष्टि भी बंद होती है। ऐसे-ऐसे भी मुनि महाराज भी हैं और हम भी हैं। वे २२ परिषह में ३०० परिषह के रूप में नहीं उपसर्ग के रूप में उस आतापन योग को स्वीकार कर लेते हैं। जो कर्म हमने बांधे हैं, वे युं ही नहीं जाते। बाह्य तप के साथ अन्तरंग तप भी करते हैं उन कर्मों को दग्ध होना ही पड़ता है। एक बार सोचा था जो इलेचकुमार है - "चिराग नहीं, आग जलाऊँ ताकि कर्म दग्ध हो" इसलिए सम्यग्ज्ञान नहीं सम्यग्ध्यान चाहिए। ध्यानाग्नि से ही कर्म नष्ट होते हैं। कल हमने राग की बात की थी और आज वीतराग साधना के साथ उस ध्यानी-मौनी-योगी की बात की। वे जग भेरक्कर भी जगत रहते हैं और आप सोये रहते हैं। ऐसे मुनि महाराज की उपासना को नमस्कार करना भी बहुत बड़ी बात है। उन्होंने हमसे कुछ बोला नहीं, हुंकारा नहीं, हम छूएंगे, मिलेंगे तो बात करेंगे।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

2-5-19 "नम्बर लेने के सूत्र" गुरुवार

एक प्रसंग जो हम सुनते हैं वह आपके सामने रख रहा हूँ। कृष्ण जी बैठे हैं, आजु-बाजु में भामा एवं रुक्मणी बैठी हैं। भामा का मतलब सत्यभामा आप जानते ही हैं। उसमें कृष्ण जी ताम्बूल बनाकर दोनों पत्नियों को देना था। इसलिए जो सुपारी होती है उसको काटने का औजार सरौतिया, दक्षिण में इसे अरवुक बोलते हैं। उस सरौतिया से सुपारी के टुकड़े करने हैं। परीक्षा की घड़ी थी।

सुपारी को तोड़ते समय कृष्ण जी ने देखा था न देखा क्या पता उनके हाथ से धार बह चली। रुक्मणी एवं भामा दोनों ने देखा तो विचलित हो गयी। लाओ, कुछ तो लाओ, ऐसा कहते हुये भामा चली गयी। इधर रुक्मणी ने देखा क्या करें? अच्छी गुणवत्ता पूर्ण साड़ी तत्क्षण है हथकरघा की हो उसके पल्ले को पकड़कर फाड़ दिया और बांध दी रक्त बंद हो गया। अब भामा आयी, रुक्मणी ने कहा ऐसा-ऐसा हो गया है।

अब देखना ये हैं दोनों पत्नियाँ हैं। जायकर विषयसामग्री जो सब गृहस्थ चाहते हैं। "सागरा विषयोन्मुखाः" कहा। जो सागार होते हैं वे सब विषयों के उन्मुख रहते हैं। जो इन विषय-कषाय को छोड़ देते हैं उनके भाव ही नहीं होते। इसीलिए एक भोजन कर रहा है तपस्या के लिए, एक विषय-वासना के लिए भोजन गृहण कर रहा है। इन्होंने

विषयों का त्याग किया है, आहार का नहीं।

पांच इन्द्रिय और मन के विषयों का निरोध कर दिया। इनको पुष्ट करने वाला कोई काम अब हम नहीं करेंगे। यही दृष्टि उन्हें प्रत्याख्यान के त्याग में सक्षम बना देती है। उससे नीचे जो है वह स्वयं भी अच्छा बनायेगा और दान भी देगा। अपने यथेष्टपन को छोड़ता नहीं। गुणों के प्रति जो भाव होना चाहिए वह भी उसका रहता है पर पूर्ण रूप से त्याग नहीं कर पाता।

खाने के बाद भोजन का त्याग है, कब तक? जब तक अन्यों का समय नहीं आता। सही है ना? बोलो ना? [हओ] उसका विषयों के प्रति प्रत्याख्यान जीवन पर्यन्त के लिए नहीं होता। अभी आप पूजन कर रहे है, पूरा का पूरा द्रव्य चढ़ा दिया। बाह्ये तरोपाधि समग्र तेयं, कायेषु ते द्रव्य गत स्वभाव: अध्यात्म वृत्ति वाले के बंध एवं निर्जरा का कारण भाव ही होते हैं। इससे पूर्व भी आचार्य समन्तभद्र स्वामी कहते है। सावद्य लेषो बहु पुण्य राशौ, दोषाय नालं कणिका विषस्य श्रमण भी त्याग एवं श्रावक भी त्याग करते हैं। श्रावक पूरा त्याग नहीं कर पाता। वह जो द्रव्यादि चढ़ा रहा है उसमें दोष भी लगते है किन्तु आचार्य कहते है वे दोष ऐसे हैं जैसे अमृत के समुद्र में विष की एक कणिका मात्र। कोई फर्क पड़ने वाला ही नहीं है। फिर भी बाहरी विष की कणिका सदृश जो है वह

सावद्य होने से बंध का कारण होता है।

मुनिमहाराज तो भक्ति में अपने भावों को चढ़ाते हैं। इतना करसकते हैं कि इस भक्ति की प्रस्तुति में हाथों का ही फल, मस्तक को झुकाना आदि करके प्रभु के चरणों में चढ़ा देता है। इतना ध्यान रखना मुनियों की जो निर्जरा होती है वह श्रद्धालु को कभी नहीं होगी। हमारा इतना सा करना और आपके द्वारा लाखों-करोड़ों सोना, रत्नों के हैसी फल भी चढ़ाओ तो भी की बराबरी नहीं हो सकती।

इसप्रकार गुणों की अपेक्षा पूजा एवं पूजक में बहुत अन्तर है। तो वह भामा भी कृष्ण की पत्नि है और रुक्मणी भी किन्तु यह जो उसका पहनावा है उपकरण है उसे गौण करके फाड़कर बांध देती है। ऐसा क्यों किया? आचार्य कहते हैं- गुणिषु प्रमोदम् अर्थात गुणवान के प्रति प्रमोदभाव का होना सम्यग्दर्शन का सहज भाव है।

कृष्ण जी ने भी कहा- गुणवत्ता की दृष्टि से आपने (रुक्मणी) नम्बर ज्यादा लिये हैं। ये भी ध्यान में रहे कि "नम्बर लिये जाते हैं दिये नहीं जाते।" आपकी दृष्टि गुणों पर है यही दृष्टि समीचिन अर्थात सम्यग्दृष्टि मानी जाती है।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

3-5-19 "शुभ-लाभ है सरस्वती-लक्ष्मी का प्रतीक" शुक्रवार

हम बहुत प्रकार के कार्य करते रहते हैं। शुभ कार्य भी करते हैं एवं अशुभ कार्य भी करते हैं। कभी-कभी भावों में शुभ होने पर भी कार्य अशुभ हो जाता है तथा अशुभ भावों से भी शुभ कार्य देखने में आता है। [ देखो - इतना कहने पर भी लाइट (mobile) जल रही है। बच्चों के हाथ में मोबाइल नहीं देना चाहिए। आप क्या कर रहे हैं। इतना खतरनाक साधन बच्चों को दे रहे हैं। ] यही तो मैं कह रहा हूँ। शुभ भावों से कार्य भी शुभ हो ये जरूरी नहीं।

इसे आप उदाहरण से अच्छे से समझ जायेंगे। एक स्थान पर एक मुनिमहाराज गर्मी से तप्त शिला पर बिल्कुल शान्त बैठकर ध्यान में लीन हैं। एक राहगिर उस ओर से पैदल ही आ रहा था। वहाँ उसे जंगल में एक पेड़ की छाया मिली, सोचा यहाँ विश्राम कर लूं। दूर शिला पर बैठे मुनिराज को देखा। उसके पास नवनीत था। लगता है अभी ही केशलोंच भी किया है। चलो महाराज को नवनीत लगा दें ताकि कुछ गर्मी से राहत मिल जाये।

अच्छा है न उसका भाव?

कुछ ही समय बाद वह नवनीत पिघलकर महाराज की एड़ी तक आ गया। वहीं पास के बिल से चिंटिया आना प्रारम्भ हो गयी। तभी एक दुसरा व्यक्ति और आया। उसकी भी दृष्टि पड़ी। क्या कर सकते हैं? उसने गन्नारखा

और उन मुनिराज पर फेंक दिया।

वह गन्ना खाने वाला उन पर फेंक रहा है। इससे चिंटिया सब नीचे आ गयी किन्तु उस व्यक्ति के भाव उपकार के नहीं थे, हँसी-मजाक के भाव थे। सारी चिंटिया नीचे उतर कर आ गयी, जैसे-चेलना ने सर्प को दूर कर दिया था। मुनिराज न ही नवनीत लगाने वाले पर हर्ष कर रहे थे तथा न ही गन्ना फेंकने वाले से द्वेष कर रहे थे किन्तु अपने ही बद्धकर्मों को शान्त भाव से देख रहे थे।

हम शान्त बैठकर भी अशान्ति के कारणों को आमन्त्रित करते रहते हैं। विवेक के न होने पर ऐसा ही होता है। ये क्यों नहीं मानते कि तीव्र कर्म के उदय में ऐसा ही होता है। संसार ऐसा ही विचित्र है। कब किस प्रकार का उदय आ जायें, विचट परिस्थितियाँ हो सकती हैं। इसलिए ज्ञान प्राप्त करने के चक्कर में मत पड़ो। भारत ज्ञान प्राप्त करने के चक्कर में ही भटक गया। निष्प्रयोजन है उस अर्थ के लिए ज्ञान हासिल करने में लगा है।

वह कोई उपयोग का नहीं। ऐसा मैं इसलिये कह रहा हूँ। उसके उपयोग में नहीं आयेगा क्यों के उद्देश्य ठीक नहीं तथा दूसरा आधार सहीत नहीं है। आपके भारत की यह दशा हो गयी है। पहले सब तरफ शुभ कर्म था। घर की दिवारों पर लिखा रहता था, एक तरफ-

शुभ, दूसरी तरफ लाभ।

"शुभ से सरस्वती की छाया एवं लाभ से लक्ष्मी की छाया उस घर पर रहती है। आपके यहाँ क्या होता है? गृहलक्ष्मी कैसी है ये नहीं देखते. लक्ष्मी को पहले देखते हैं। धन्य है आप एवं आपके माता-पिता। बच्चों को इस तरह का ज्ञान करायें/आपका चिन्तन अब इस ओर आ जायें तो बहुत अच्छी बात होगी।

जो पढ़े हैं उनका कोई उपयोग नहीं होने वाला है। हमारे पास आते हैं- महाराज आशीर्वाद दे दो? हम आशीर्वाद तो सोच समझकर ही देंगे। महाराज कुछ ऐसी दया कर दो? हमारी दया भी अब सयानी हो गयी। हम पर सरस्वती की कृपा है। आप पर भी उस सरस्वती की कृपा हो जाये, गृहलक्ष्मी तो घर पर ही होगी।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

"फास्ट मृत्यु"

"आचार्य श्री कहते हैं कि फास्ट Life नहीं फास्ट मृत्यु की ओर जा रहे हो। चाहे Fast food हो, Fast Relation हो, Fast जेनरेशन हो, Fast गति हो आदि सभी Fast मृत्यु की ओर धकेल रहे हैं, इसीलिए भगवन ने दीर्घायु चिकित्सालय/औषधालय के निर्माण का आशीर्वाद प्रदान किया।"

4-5-19 "कहीं बोध न बन जाये बोझ" शनिवार

समयसार के एक प्रसंग में बहुत ही अच्छी बात कही गयी है, उसे समझे। हम कहाँ तक उसका अर्थ समझ सकते हैं। उदाहरण के माध्यम से कहा है। एक संज्ञी जीव अपने संज्ञीत्व का कहाँ तक उपयोग करता है। उस संज्ञी एवं हमारे जीवन में कहाँ तक घटित हो पाता है। तभी यह उदाहरण हमारे लिए सार्थक होगा। मैं उदाहरण को अच्छा मानता हूँ - विषय की अपेक्षा। क्यों कि उदाहरण सीधे ही भीतर तक पहुँच जाता है।

ज्यादा अध्ययन नहीं हैं तो भी टिकिट खरीद कर बैठ ही जाता है। यात्री तो वह भी कहलाता है। ये बात अलग है कि आप उस टिकिट का उपयोग कहाँ तक करते हैं, देखते हैं। तो उस समयसार में चलते हैं। व्यक्ति सुनता भी है, बोलता भी है, प्रतीति भी करता है फिर भी वह कहाँ तक आत्मसात् करता है, ये प्रसंग यहाँ पर है। कहीं हमारी स्थिति भी कुछ ऐसी तो नहीं? उदाहरण दिया वह तोता पाठ करता है किन्तु गुणों को ग्रहण नहीं करता।

गुण ग्रहण करने वाला ही सार्थक माना जाता है, पाठ करना सार्थक नहीं। आप लोग पाठ करते हैं या नहीं? हाँ, महाराज! हमारे यहाँ तो ४४ दिन तक भक्तामर का अखण्ड पाठ चलता है। बिना रुके, लगातार। भक्त बनें या न बनें किन्तु भक्तामर का

पाठ प्रतिदिन होता है।

ये बात उस तोते से ही सुद्ध हो। मेरा ये उदाहरण समयसार में दिया है। पाठ करने में तोते का समयसार में क्या योगदान है? आचार्य कुन्दकुन्द ने तोते को ही याद किया। ध्यान रखो यदि गुणों का चिन्तन नहीं कर पा रहे हैं तो उस तोते की तरह मात्र पाठ कर रहे हैं। तोता बहुत ही होशियार होता है - वह गीता - वेद का भी पाठ करता है। आर्या-छन्द में तो उसे प्राविण्य प्राप्त है।

कोई भी कारिका हो, तोता बद्ध प्रस्तुत करता है। किन्तु एक अक्षर का भी उसे भावार्थ पता नहीं होता। इसी बात को अभव्य के लिए उदाहरण दिया। उस अभव्य का श्रुतज्ञान भी 11 अंग तक पहुँच जाता है। इतना ही नहीं यदि वह मिथ्यादृष्टि मात्र है अभव्य नहीं है तो 11 अंग से भी ऊपर 10 पूर्व का ज्ञान 10 पूर्व पूरा नहीं दो प्रकार के होते हैं - भिन्न 10 पूर्वी, अभिन्न 10 पूर्वी। उसमें प्रवेश तो कर लेता है लेकिन पूर्ण उत्तीर्ण नहीं कर पाता है।

देखलो वहाँ तक जाने के उपरान्त भी वह मिथ्यादृष्टि बना रह सकता है। सोचो, आप। जो व्यक्ति दिन-रात स्वाध्याय के ही गुण गाता रहता है। उनसे कहें - पूजन भी करो। अरे... थे तो। ऐसा व्यक्ति उस तोते की

भ्रांति रूढ़ा लगा रहा है।

पूजा का उपदेश जिनेन्द्र भगवान ने ही दिया है। श्रावक का चार प्रकार का धर्म बताया - चहुविधो धम्मो - "दानम् - पूजा शीलमुपवासो" इसमें स्वाध्याय तो लिया ही नहीं गया। श्रावक के जो छः कर्म बताये ये आचार्य पद्मनन्दि पंचविंशतिका ग्रन्थ बहुत बाद में आया उसमें स्वाध्याय को जोड़ दिया। उससे पूर्व नहीं था। इसीलिए चार धर्म में स्वाध्याय नहीं लिया। दान-पूजा को ही मुख्य कहा।

दान शब्द कहाँ से आया? तो शास्त्रों से आया है। दान, आदान के लिए नहीं कर्तव्य मानकर देना चाहिए। कर्तव्य मतलब करने योग्य कार्य को करके वह कृतकृत्य हो जाता है। व्यवहार में आप अनुभव भी करते हो दान देकर व्यक्ति हल्का हो जाता है। मोह रूप ग्रन्थि का जो भार था, वह भार कम हो जाता है। भार कम होने पर अपने आप गर्दन सीधी होने लग जाती है।

सिर पर से कंधो पर लेते ही कैसे दीर्घ श्वांस लेने लग जाते हैं, इसी प्रकार दान करने से बोझ हल्का हो जाता है। यदि व्यक्ति दान की बात नहीं करता तो उसका बौद्धिक भी बोझ का काम करता है। फिर भार तो भार ही है, चाहे चन्दन का भार हो या बबूल की लकड़ी का भार हो। पक्का है। यदि ।। अंग तक भी पहुँच गये

तो भी वह पाठ का ही काम, मात्र होता रटंत है।
शास्त्र में ज्ञान नहीं होता, उसे पढ़कर हम ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।" इसलिए प्रत्येक आवश्यक करते समय यह ध्यान करना चाहिए कि मैं ये क्यों कर रहा हूँ। मात्र सात तत्त्वों के नाम नहीं रटना। जीव कहने मात्र से जीव तत्त्व को स्वीकार करना चाहिए। इसी तरह आस्रव तत्त्व कहने से उस पर विश्वास करना चाहिए। इसी से अजीव तत्त्व भी ज्ञात हो जाता है। अभी हम प्रवचनसार में पढ़कर आये हैं।

किसी कार्य में बाह्याभ्यन्तर दोनों कारण होते हैं। बाह्य में संलेखना है कारण एवं आभ्यन्तर कषाय। संलेखना दोनों में जो कारणभूत है उसे ध्यान रखना अनिवार्य है। मनुष्य जीवन मिला है, तत्त्व की खोज हेतु मिला है। तत्त्व की खोज तभी कर पाओगे जब खान-पीन, रहन-सहन आदि को ठीक रखेंगे। तोता की जैसे नहीं, होनहार बनना है आपको। हो प्रयोजनभूत को स्वीकारें एवं अप्रयोजनभूत को नहीं स्वीकारें।

राम का प्यारा तोता होता है किन्तु यदि वह राम की ही ऊँगली को काटने लगे तो -। मुख से राम-राम रट भी रहा है। बहुत देर तक राम-राम बोलो जाओ। बोलो क्या होगा? मरा-मरा निकलने लगता है।

राम का नाम मात्र रटने से मरण पर्यन्त भी कुछ भी होने वाला नहीं है।

सद्दहदि य पत्तेदि य रोचेदि य तह पुणो य फासेदि,
धम्मं भोगणिमित्तं ण हु सो कम्मक्खयणिमित्तं॥ [२७६समा]

इसलिए बिना श्रद्धा के अथवा उपयोग के स्वाध्याय मात्र करना उस अभव्य की भांति ही है। जिसके ११ अंग का ज्ञान भी कोई काम का नहीं। जैसे द्रव्य वेद से नौ ग्रैवेयक तक चला जाता है वैसे ही ११ अंग वाला मिथ्या-दृष्टि का हाल है। बड़ी ही मार्के की बात कही है। गुरुजी इसका उदाहरण देते थे भद्रबाहु के पास स्थूलभद्र आचार्य आये। उन्होंने उसको परकाया प्रविष्ट होने की विद्या सीखा दी। स्थूलभद्र ने उसविद्या का प्रयोग कर लिया। भद्रबाहु महाराज ने कहा-अब आप अपना बिस्तर बांध लो। यहां से जाओ।

आज आप ऐसे ही प्रयोग कर रहे हो जो उपयुक्त नहीं हैं। हमने कई बार पहले भी कहा है। हमें इसीलिए नियुक्त भी किया है कि इनके हित की बात करते रहना चाहिए। अहित की बात तो है नहीं। जब छोटा था तो कोई भी ग्रन्थ हो मराठी हो या संस्कृत में हो। मैं सबसे पहले ये देखता था कि इसका मूल्य कितना है। उस पर लिखा रहता था, मूल्य - स्वाध्याय, सदुपयोग, तत्त्व चिन्तन। अब ये विकास हो गया है। कितना विकास? तो ११ अंग।०

पूर्व तक पहुँच गया है।

अब लिखा होता है- सर्वाधिकार सुरक्षित, C.P। एक से पूछा ये C.P क्या है? महाराज Short फॉर्म है - कॉपीराइट। आचार्य कुन्दकुन्द ने आपको अधिकार दिया है क्या? "अधिकारी तो हो गये- मर्मधारी नहीं हो पाये।" उसका मूल्य क्या है ये पता नहीं, वो तो अमूल्य है। गीता - कुरान - बाइबिल को छू कर बतलाओ तो वह डरता है। मैं छू नहीं सकता, वे आराध्य है।

सर्वाधिकार सुरक्षित वालों को बहुमान नहीं है। मेरे वचन आपको कड़वे लग सकते है किन्तु दवा तो दवा होती है। हमेशा मीठी-मीठी दवा नहीं दी जाती कभी कड़वी भी पीवाना चाहेंगे तो पी लोगे? हओ तो कह ही दो। जब उसका फल जो अनमोल है - कर्म रोग को हनन है तथा परम्परा से मुक्ति की प्राप्ति तो फिर क्या सोचना है।

इस तरह तोते जैसे नहीं रहना। श्रद्धान तो करना ही है, उसके साथ-साथ पालन भी करते जाना है। आचार्य कुन्दकुन्द की बात आप सभी के सामने रखी। गर्मी भी तेज होने लगी। हमने सोचा आप सभी आलस्य से दूर हो जायें यही भावना से कहा।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

रविवार 5-5-19 "आओं सुरक्षित करें धरोहर को" प्रातः

आज रविवार है। मध्याह्न में यहाँ के लोगों ने कहा है। आपने सुना होगा। हमने कुछ नहीं कहा। आप सामने आकर बैठ गये हैं तो थोड़े समय में रहस्य बताना चाहते हैं। आप देखो। किसी को प्यास लगी है, वह प्यास बुझाना चाहता है। क्या करे? एक ने कहा - पास में ही नदी बहती है, जाकर पी सकते है। वह कहता है - मुझे डर लगता है कहीं गिरन जाऊं। तो उसके लिए व्यवस्था कर दी गयी। एक लौटा है दिया, वह लौटा भी भारी पड़ने लगा।

उसने कहा - भाई कोई दूसरी चीज दे दो ताकि अच्छे ढंग से पी सकूं। उसे एक प्याला दे दिया उस प्याले में व्यवस्था भी बनी थी। आप सुन रहे हो? कहीं चटका न लग जाये, इसलिए पुख्ता रहता है। उस प्याले में कम्पनी की तरफ से ही ऐसी व्यवस्था थी। जल की धारा होती है किन्तु धारा आई कैसे तो प्याले को यूं दबा दिया जाता है। मतलब इसकी बनावट ही ऐसी कर देते हैं ताकि धार बन जाये। उसके बिना आ ही नहीं सकती।

इस धार के माध्यम से थोड़े में पीकर अपनी प्यास बुझा सकते हैं। यह उदाहरण मैं इसलिए दे रहा हूँ कि धार ऐसे ही नहीं बनती, कितनी कठनाइयों का सामना करना पड़ता है। भगवान का श्रुत सागर अपार है, उसे कौन पीयेगा पता नहीं। गणधर परमेष्ठी उसमें से

कुछ लेकर धारा बनाते हैं।

उस धारा से ही आचार्यों के माध्यम से यहाँ तक पहुँचा है। उसी से हम सबकी प्यास बुझ रही है। "अरहंत भाषितत्थं... यह ज्ञान दिव्य-ध्वनि के द्वारा आता है, जिसे केवल गणधर परमेष्ठी ही झेल सकते हैं। झेल करके भिन्न-भिन्न प्यालों-मौका के माध्यम से जिसकी-जितनी क्षमता है उपलब्ध करा देते हैं। इससे ज्ञात होता है कि आचार्यों की हम पर बहुत करुणा दृष्टि रही।

बड़ी सावधानी से हमें वे पिलाते हैं/समझाते हैं। चुस्की भी बजाते रहते हैं, कहीं इसका न लग जाये। इसका भी लग जाता है तो भी संभालते हैं। हमारे लिए उस अर्थ तक पहुँचाने का साधन नहीं था। पंक्तियाँ आती हैं- दो किस भाँति, पदार्थ पाँति- — / आचार्यों ने इसे आसानी से पिलाने का प्रयास (पुरुषार्थ) किया है।

बार-बार समझाने का पुरुषार्थ/प्रयास किया कि जो भी इस दिशा में काम कर रहा है, वह बीज का काम करेगा। वह बीज जब धरती में रोपा जायेगा तो ऐसे महान क्षुधा एवं अज्ञान रूपी अंधकार को दूर करने में सक्षम होगा। आज उसमें से एक-आध तारा भी चमक जाती है तो देख सकते हैं। सूर्य के अभाव में भी उस तारा की चमक ही बता रही

है कि ये भी कुछ है।

जब छोटे में विद्यालय जाते थे उस समय खगोल का अध्ययन कराया जा रहा था। रात में भी वहीं (विद्यालय) में ही रुकते थे। रात 10-11 बजे आसमान में चमकते हुये उन ताराओं का ज्ञान कराया जाता है। कुछ बिन्दु आकार, कुछ हल्का आकार कुछ अलग ही प्रकार की ताराओं से बताया जाता था कि कब उदय होगा + कब डूबेगा सिर में 12 बजे आता है उस समय क्या होता है।

हम सबने कुछ पुण्य किया है वह आज उदय में आया है। इस श्रुत देवी का रहस्य बहुत बड़ा है। जितना मिला है उसका भी हम सही-सही उपयोग कर लें बाकि कुछ नहीं कह सकते हैं। सारे के सारे व्यक्ति लाभ लेकर आगे भी पहुँचाने का पुरुषार्थ कर लेना चाहिए। [आयुर्वेद चिकित्सालय] बहुत सुविधायें हों तो कार्य सरल हो जाता है किन्तु यहाँ तो इतनी सुविधायें हैं।

इन सुविधाओं में भी जो उद्देश्य आपने चुना है उसके लिए सब मिलकर प्रयास करेंगे। आयुर्वेद के बारे में जो जैनाचार्यों ने किया - कहा उसी को सुरक्षित रखना हम सबका कर्त्तव्य है। ज्यादा समय तो मैं नहीं लेना चाहता। कल नहीं परसों यहाँ पर वह योग (घड़ी) आ रहा है। इस अक्षया तृतीया की तिथी को लावा (शादी)

की तिथी कहते हैं।

सभी उस कार्य की सामग्री को एकत्रित करने में लगे हैं। ऐसा मैं इसलिए कह रहा हूँ कि ये श्रुत से बाह्य है ऐसा न समझे। औषध दान भी चार दानों में एक दान कहा बल्कि औषध दान में आहार दान भी आ गया। हमारे यहाँ आहार को ही औषधी कहा गया है।

ऐसा आहार जो औषधका भी काम कर रहा है और क्षुधा रूपी रोग को भी मिटा रहा है। सभी लोग निरोगी हो, इसी शुभभावना के साथ।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

संस्मरण - "गर्मियों में भी करते थे उग्र विहार"

बात पुरानी है- आ०श्री सवाईमाधोपुर के चमत्कार क्षेत्र पर थे। उन्हें महावीर जयन्ती पर महावीर जी पहुँचना था। चमत्कार से शाम को 25 किमी० चले पहले तो चालीसा (40) एवं द्वात्रिंशतिका (32) तो यूं ही हो जाता था। ढोंगरगढ़ उधर भी है - एक घर था रुकना ठीक नहीं। सुबह भी उतना ही 50 से ऊपर ही हो जाता था। संकेत देते नहीं थे। 11 तक पहुँच गये। पहले सामायिक होती थी फिर चर्या गंगानगर 40 K.M.। एक बाबाजी घी का पीपा प्रतिदिन बेचने आते थी पैदल। शामको उतना ही वापस भी जाते खरीदी करके। ये नहीं बताते 4 बजे चल जाते थे। हम उजाला होते ही शुरू हो गये। योग से महावीर भी साथ थे। सभी पीछे रह गये। हमने सोचा पीछे रहेंगे तो पीछे हो जायेंगे। 9-5-19 पर Cont...

6-5-19 "शक्ल से नहीं अक्ल से काम करो" सोमवार

भारत में और अन्य देशों में क्या अन्तर है? अन्तर तो है, उधर की मिट्टी, नदियाँ, पहाड़, पेड़-पौधे इत्यादि अलग है और इधर के अलग है। उधर की शक्ल अलग इधर की शक्ल अलग हो सकती है किन्तु भीतर जिसे अक्ल बोलते है वो समान होती है। सुनते है ३० वर्ष की उम्र तक अक्ल (दाढ़) नहीं आती है। चाहे कितना भी अच्छा भोजन कर लें किन्तु ३० से पहले अक्ल नहीं आती।

चार अक्ल के दांत छोड़कर बाकी शेष सभी दांत आने पर वेदना नहीं किन्तु अक्ल की दाढ़ आने पर बहुत वेदना होती है। उस समय मालुम चल जाता है कि पीड़ा क्या होती है। आचार्य कहते है कि जो चाहते हो वही बीजारोपण करो। अन्यथा जो चाहेंगे वह नहीं मिलेगा। जो वेदना से अनभिज्ञ है वह कहता है कुछ नहीं है - कुछ नहीं है परन्तु भारत कहता है आपके दांत आ रहे हैं। अभी तक नहीं आये, जब अक्ल आयेगा तभी तो आयेगा।

भारतीय संस्कृति के अनुसार समय (उम्र/आयु) के अनुसार ही दांत आते हैं ऐसा नहीं जन्म ले लिया तो दांत आ गये। बुद्धि में अपने-आप नहीं आता, इसे में काम किया होता तो आता है। धीरे-धीरे भारत को अक्ल आ ही रही है। भले ही ३० की अक्ल ७० के बाद आयी। यहाँ जिसको वर्तमान में दवाई बोल रहे हैं वह दवाई है ही नहीं। ऐसा प्रचार-

प्रसार किया जाता है, जिससे ऐसा हो गया है।

हमने आप ही लोगों के द्वारा सुनी थी। ऐलोपैथी में कहा गया है कि घी खाने से कोलेस्ट्रोल बढ़ जाता है। "हम कहेंगे तो किसी को विश्वास नहीं होता है किन्तु डॉक्टर कह दे तो... उस पर तो क्षायिक सम्यग्दर्शन है।" अब वही लोग कहने लगे घी खा सकते हैं। घी खाने से कोलेस्ट्रोल ठीक हो जायेगा। शरीर में दो प्रकार के कोलेस्ट्रोल होते हैं। एक लाभकारी भी होता है। गाय का घी खाने से पुराना कोलेस्ट्रोल नियन्त्रित हो जाता है।

आज आप क्या खा रहे हो, यह तो देख लो। पचासों वर्ष बाद जब प्राचीन ग्रन्थों को पढ़ने लगे तब समझ में आ गया। वे तो घेरेलु ग्रन्थों को पढ़कर कर रहे हैं। लोगों के मन में पहले गलत धारणा बैठा दी कि घी खाओगे तो हार्ट अटैक आ जायेगा। लोग भी डर के मारे हुओ कह देते हैं क्यों कि उनको भी English नहीं आती, न ही इनको English आती है।

इस प्रकार का ज्ञान हमें नहीं चाहिए। आस्था के बिना कुछ नहीं होगा और आस्था कभी दिखती नहीं। जो दिखती नहीं वो है नहीं ऐसा तर्क करना तो गलत होगा। हवा है या नहीं? है। कभी दिखती है? हाँ महाराज। हवा चल रही हो ध्यान रखना हवा चल नहीं

रही है/अच्छे-अच्छे जो बैठे हैं उनको चला रही है। देखने में नहीं आ रही है तो वह है ही नहीं ऐसा कभी नहीं कह सकते। ऐसी व्याप्ति करना गलत है। अपूर्व में कामधेनू/कल्पवृक्षों से पूर्ति होती थी/आज वे कल्पवृक्ष नहीं बचे तो अब बुद्धि काम करने लगी। सभी आयुर्वेद के ग्रन्थों में घी को उच्च स्थान दिया है जिसे आज ऐलोपैथी वाले भी मानने लगे हैं।

ऐलोपैथी चिकित्सकों की बात सुनकर कई लोगों ने तो घी का त्याग ही कर दिया था/फिर महाराज का भी त्याग हो ही जायेगा। घी नुकसानकारक नहीं, अनुपात से ग्रहण करें। भारत ही मात्र ऐसा देश है जहाँ आहार को ही औषध माना गया है। यहाँ अभी आचार संहिता लगी है/पुना है वह (आचारसंहिता) हटने वाली है, फिर पुनः वही हर्ष होगा। मेरा कहना है कि पूरे ५ वर्ष तक आचार-संहिता लागु रहनी चाहिए। यदि ऐसा होगा तो गर्मी में भी शीत लहर का अनुभव होगा।

हमारे अशान्त भाव शान्त होते देर नहीं लगेगी। ये भी ध्यान रखो - गर्मी के समय गर्मी चाहिए एवं वर्षा के समय वर्षा। इसलिये जो भी मौसम आया उसका स्वागत करो। गर्मी में भी हरी-हरी कोंपले फूटने लग जाती है। जब गर्मी होगी

तभी तो वर्षा होगी।

अब भाग्य (कर्म) ही ऐसा हो तो नहीं भी हो। पर गर्मी के साथ ही वर्षा की व्याप्ति है। वर्षा होगी तो बीज बोने पर धरती फूलवती होती है। यदि आप भी पुरुषार्थ नहीं करेंगे तो पशु-पक्षी के समान हो जाओगे। चौपाया - दोनों हाथ भी नीचे, चार पांव बन जायेंगे।

आप लोगों ने बहुत प्रतिक्षा की है। गर्मी के दिन में भी 15-20 दिन हो गये। "अतिथी के सामने कार्य कर रहे हो तो वह तिथी आ ही गयी है।" दिन तो आते हैं और चले जाते हैं। "जो पुरुषार्थ करता है उसका भाग्य खुलता है अन्यथा खलता है।" ऐसा ही कुछ यहाँ आप लोग करने जा रहे हो। करना चाहे तो कर सकते हैं। हीरे से भी अधिक अमोल इस बुद्धि को ठीक करने आ रहा है। आपके लिए आगे आयुष्य बंध ही न हो तो कैसा होगा?

सत् धर्म करते जाओ। कल 7 बजे रखा है। गर्मी के दिन है। बाहर निकलोगे तभी अनुभूति होगी। यहाँ पूर्णायु में शरीरातीत होने की ही शिक्षा दी जायेगी। शरीर बिगड़ गया तो यथोचित प्रबंध भी होना आवश्यक है। इसीलिए ज्ञानदान एवं औषध दान की व्यवस्था रखी जिसके द्वारा आप सभी का भविष्य उज्ज्वल बनेगा। अहिंसा परमो धर्म की जय।

7-5-19 "दान का संकल्प - तपस्या का फल" मंगलवार

आप लोगों को बहुत आकुलता थी कि वह तिथी कब आयेगी ? वह तिथी कब आयेगी ? आज आपके सामने आ ही गयी । अच्छे कार्यों हेतु प्रतिक्षा तो करनी ही पड़ती है । इसके लिए अपनी शक्ति का भी बार-बार प्रयोग करना पड़ता है। यह कार्य जो होने जा रहा है वह मात्र जबलपुर का ही नहीं, इसीलिए दूर-दूर से बड़े-बड़े हाथ इसमें जुड़ गये हैं।

कुछ कार्य ऐसे होते हैं, जिन्हें कूबत के अनुसार ही करना चाहिए किन्तु कुछ कार्य कूबत के बाहर भी कर लिये जाते हैं। यहाँ पर आज ऐसा ही हुआ । कहाँ-कहाँ से लोग जुड़ते गये । फोन पर ही आप लोग उसे क्या बोलते हैं ? online पर जुड़ते गये । कहाँ से भाव हुये पता नहीं । ये सब भाव विषयों के लिए नहीं विषयातीत होने के लिए किये । नश्वर आयु को पूर्ण करते हुये इस कार्य को पूर्ण करने का आप सभी ने संकल्प लिया है।

ऐसी-ऐसी भावना यहाँ अभी देखी जो भीतर से बाहर आने को आतुर थी । "आपने जो धन लगाने का संकल्प किया वह पुण्य के योग से नहीं मैं तो इसे तपस्या का फल मानता हूँ ।" भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि आप इसी प्रकार दान करते रहें, आपका पुण्य तो अवश्य ही बढ़ेगा क्यों कि आपने सत्कार्य में

योगदान दिया है।

मुझे महापुराण का वह प्रसंग याद आ रहा है। जहाँ बाहुबली के बारे में बताया कि उन्होंने ऐसा कौनसा कार्य किया जो वे एक वर्ष तक अपनी काया को खड़ी की खड़ी रखी। सांप - बिच्छु आदि विषाक्त जीव भी उस पर रेंगने लगे थे परन्तु ऐसा ध्यान लगाया की केवलज्ञान हो गया। केवलज्ञान के उपरान्त विहार कर गये। ऐसी क्षमता कहाँ से आयी। उसी महापुराण में कहा गया - पूर्व जीवन (भव) में जिन्होंने खूब वैय्यावृत्ति की थी, उसके कारण से ऐसी वज्रमयी काया मिली।

वज्र का शरीर भी रोगी हो सकता है किन्तु इस तरह का संकल्प हो लेते हैं वे निरोगता को पाते हैं। शरीर के कारण ही वह आत्म-तत्त्व आज तक कष्ट प्राप्त कर रहा है। चार दान हैं - औषध दान में ये चारों दान समाहित हो जाते हैं। इसीलिए भारतीय संस्कृति में आहार को ही औषधी कहा। जैनाचार्यों ने भी बड़े - बड़े आयुर्वेद ग्रन्थों की रचना की।

चाहे आचार्य समन्तभद्र स्वामी हो या फिर पूज्यपाद हो, कल्याणकारक के उग्रदित्याचार्य हो सभी ने आयुर्वेद को स्वीकारा। कल्याण कारकम् की प्रस्तावना में लिखा - वैदिक ब्राह्मणों ने भी आयुर्वेद की सेवा की है वह भी अद्भुत है। उस समय के सीमित (अल्प साधनों

से भी बड़े-बड़े काम किये।
ये हजारों वर्ष पूर्व लिखे गये ग्रन्थ है। शुद्ध है - सात्विक है। ऐसी चिकित्सा पद्धति जो कम खर्च में भी काम कर दे। आज गरीबों के लिए चिकित्सा मिल नहीं पाती। ऐलोपैथी में करोड़ों खर्च करने पर तो ज्ञान की प्राप्ति होती है। वह ज्ञान भी कोई काम का नहीं होता। "उनकी पीड़ा, हमारी करुणा की, परीक्षा लेती" आप परीक्षा में पास हो गये हो।
कम समय में आपने अच्छे ढंग से काम किया है। ढीला नहीं कह सकते। युग के आदि में बाहुबली स्वामी ने किया तभी तो ऽ०० धनुष के स्थान पर ऽ२ऽ धनुष की काया पायी। काया में भी ऐसी-ऐसी शक्ति कि चक्रवर्ती को भी पराजित कर दिया। उसी काया को उन्होंने तपस्या में लगा दिया तो पिता से पूर्व मोक्ष को पा लिया। आज सभी ने जो संकल्प लिया सभी को आशीर्वाद था और आशीर्वाद है।
अभी तो संकल्प लिया है, जल्दी-जल्दी पूर्णकरना है। जिन लोगों को अवगत नहीं है वे भी जुड़ेंगे। शक्ति को छिपाये बिना इसे पूरा करने में सहयोग देंगे। आज समय से पूर्व ही पूरा कार्य हो गया। किसी को लगा ही नहीं। सब भावों का खेल है। आज की तिथी में ये होना था। १०-२० दिन में ही कार्यकर्ताओं ने आनंद के साथ सभी ने मिलकर किया, आगे भी आपका मन-वचनकार्य सत्कार्य में लगे, इन्हीं भावों के साथ। अहिंसा परमो धर्म की जय हो

8-5-19 "डूबो मत लगाओ डुबकी" बुधवार

बहुत छोटा सा कंकड़ है, उसे पानी में फेंक दिया तो वह न तैरकर डूब जाता है। छोटा सा तो है ही वह डूब गया। और वहीं पर एक लकड़ी की बड़ी गांठ रखी थी उसे पानी में लुढ़का दी तो वह न डूबकर तैरती रहती है। जब की इसका भार मनोमन है और कंकड़--- गुंजा में। गुंजा सोने को तौलने में काम आता है। वह इतना हल्का होने पर भी डूब क्यों गया, ये बड़ा एवं भारी होने पर भी तैरता क्यों रहा?

ये स्वभाव है। इसका तैरना स्वभाव है और इसका डूबने का स्वभाव है। इसका भार हजारे गुना होने पर भी स्वभाव ऐसा ही है। स्वभाव कहने से प्रकृति की ओर दृष्टिपात होता है। इसी स्वभाव का मंथन करो, पुरुषार्थ करो, सोचो। महाराज इस प्रकार तो सही नहीं लग रहा। जिसका भार-आकार है उसे तो डूबना चाहिए था, कंकड़ को नहीं डूबने चाहिये था। जब सभी कहने लगे तो, हमने कहा स्वभाव से ऐसा होता है और "स्वभाव न तर्क गोचर:।"

स्वभाव जहाँ आ जाता है, वहां तर्क के लिए स्थान नहीं है। इस उदाहरण के माध्यम से आपको यह बताना चाहते हैं कि हम अपने स्वभाव से अवगत हो जायें। स्वभाव की ओर दृष्टि करते ही डूब नहीं सकते, तैर जायें। अर्थात कषाय यदि सुधी को लेकर है तो वह कभी भी तैर नहीं सकता और यदि बहुत परिग्रह है लेकिन बांटने

के लिए है तो डूबेगा नहीं। (ताली)

हमें ऐसा लगता है कि हम पास हो गया हूँ। छोटे-छोटे बच्चे भी बहुत नम्बर लेकर पास हो रहे हैं। मैं सोच रहा था कि ताली बज जाये। बच्चों को बहुत आनन्द आता है जब हम आशीर्वाद दे देते हैं। आशीर्वाद के लिए खड़े भी रहते हैं। हम सोचते हैं कि इतनी उम्र में हम तो कुछ भी नहीं कर पाये थे। स्वभाव की ओर दृष्टि पात करते ही जो भीतर है वह बाह्य की ओर आ जाता है।

"पानी कभी भी हमें डूबोता नहीं, ये अलग बात है कि हम डूब जाते हैं।" घबराने के कारण ऐसा होता है। हाथ-पैर चलाते रहो, उसे भी कहना पड़ेगा कि आप डूब नहीं सकते। हम कषाय के कारण डूब रहे हैं। जो व्यक्ति कषाय नहीं रखता, उसका उपयोग कर रहा है तो वह डूबने से बच सकता है। यही सभी शास्त्रकारों ने समझाने का प्रयास किया है।

इसीकारण बड़ी वस्तु भी तैरती है। कंकड़ छोटा भी है तो भी वह वजनत्व को लेकर होता है अतः डूब जाता है। लकड़ी स्थूल है किन्तु वह डूबती नहीं है तैरती रहती है। बल्कि यूं कहें कि दूसरों को भी उस पार लेकर चली जाती है। इसलिए लकड़ी के पास जाकर रहोगे तो डूबोगे नहीं। जैसे लकड़ी में यदि कील ठोक दी तो वह डूबती नहीं। किन्तु आप ताली तो ठोक सकते हैं, कील मत ठोकना।

कील ठोकना अच्छा नहीं।

भगवान से प्रार्थना करते हैं कि थे लोग भी तैरना सीख लें अथवा जो तैर रहा है उसे पकड़ लो। इतना ध्यान रखना - उलटे हाथ या पैर मत पकड़ना। वह अवश्य ही तैरता रहेगा। आप भी डूब नहीं सकोगे। ऐसे ही तैराक आचार्य, उपाध्याय, साधु परमेष्ठी, अरहंत परमेष्ठी हमें मिले हैं जो सिद्धों तक हमें पहुँचायेंगे।

इस प्रकार कुछ भी रखो किन्तु यह मानकर रखो कि यह मेरा नहीं। इकट्ठा हो गया है भूल से, ये सब देने के लिए है। अब भूल भी नहीं करेंगे। लकड़ी के स्वभाव की तरह बनना है। एक लकड़ी और होती है- देवदार की वह तो और हल्की होती है। माचिस नहीं यह तो अंग्रेजी शब्द है। हाँ! दियासलाई, जो दीपक को सला (जला) देती है वह है दियासलाई।

ऐसे शब्दों के भीतर घुसकर काम करोगे तो हमारी तरह पास हो जाओगे जैसे अभी बोल (भजन) रहे थे। इसी का नाम तो हिन्दी भाषा है।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

9-5-19 "कल्याणक नहीं - कल्याण हो" गुरुवार

युग के आदि में वृषभनाथ भगवान हुये जो आदिम तीर्थंकर कहलाते हैं। उनको क्रमशः गर्भ, जन्म, तप, कैवल्य एवं अन्तिम निर्वाणकल्याणक की उपलब्धि हुयी। उनके प्रत्येक कल्याणक हम जैनों का कल्याण करने के लिए होते हैं। हमें तीर्थंकरों के साक्षात् दर्शन तो नहीं, पर कल्याणक भी हमारे कल्याण के लिए है। हमारे कल्याणक हो इसमें स्वार्थ है तथा कल्याण हो यह सर्व जन सामान्य की बात है। इसमें सांसारिक लिप्सा नहीं है।

यह लिप्सा ही लेप का प्रतीक है। लिप्त हो जाता है। फिर तृप्त नहीं हो पाता। गर्मी लग जाती है तो बाहरी वायु और आकुलित कर देती है। वह बाहरी वायु हवा नहीं लिप्सा है। इसी को कषाय के नाम से भी जानते हैं। इसमें कषाय व्याप्त है। 10वें गुणस्थान के बाद में भी ये है। लेश्या का अर्थ रंगीन हो जाना जबकि लिप्सा का अर्थ रंगीनता के साथ जीवन को आकुलित करने में बार-बार कारण होना।

आप सभी बैठे हैं। जो प्रतीक्षित घड़ी (अक्षय तृतीया) की प्रतीक्षा थी वह पूर्ण हो गयी। अब आप सभी कटिबद्ध हो गये हो। कटिबद्ध का अर्थ जानते हो? धोती पहनो तो मालुम पड़े, आप तो सूट पहनने वाले हो। धोती को कसने एवं बेल्ट (सूट) को कसने में बहुत अन्तर है। यदि धोती को ऊपर कर ले तो भाग भी सकते हैं किन्तु सूट में तो जम बैठ

सकते हैं, न उड़ सकते हैं, भाग तो सकते ही नहीं।
तथा कोई धार्मिक कार्य में भाग भी नहीं ले सकते। ये देखना भी आवश्यक है। जिन्होंने कमर कस ली है उनको प्रोत्साहन की भी आवश्यकता है। आपके उत्साह से उनमें भी दुगुना उत्साह आ जाता है। पसन्द आये या न आये महत्त्व को समझते हुये भी महान् व्यक्तियों की पूजा के लिए तैयार नहीं हो पाये। चक्रवर्ती भी रो रहा है, छोटे भाई के कारण हारना पड़ा। युग के आदि की घटना है।
क्यों रो रहा है? इसलिए कि अभी तक तीर्थंकर प्रभु का सान्निध्य मिलता था आज उन्होंने समवशरण का त्याग कर योगनिरोध हेतु चले गये हैं अब मुझे कौन सम्बोधन करेगा। अब तो दर्शन भी नहीं होंगे। आयुकर्म जब तक रहता है शरीर भी तभीतक रहता है। शरीर है तभी तक मुक्ति की भावना कर सकते हैं। जब परम औदारिक शरीर का सौभाग्य मिल जाता है तो फिर ये निश्चित है अब पूर्णायु ही प्राप्त होगी, अकालमरण नहीं होता है।
अब इस भव में तीर्थंकर का दर्शन नहीं कर सकूंगा। उनकी जो आयु पूर्ण होगी तो अब दोबारा प्राप्त होने वाली नहीं है। यही देख (सोचकर वह रोने लगा। उसकी आँखों में पानी देख सभी की आँखों में पानी आ गया। प्रभु को केवलज्ञान तो पहले ही हो चुका, हम तो रखाली के रखाली

ही रह गये। कब भरेंगे?

अब हाथ भरने की बात मत करो, अब तो हाथ जोड़ लो। भर तो सकते ही नहीं। हाँ! नमस्कार करना भी बहुत सौभाग्य की बात है। प्रतिष्ठा क्या करना, दोनो हाथ जुड़े ही रहें। "धन को जोड़ना बन्द कर दो हाथ को जोड़ लो।" धन को जोड़ना मतलब संसार की ही वृद्धि कर रहे हो। उस चक्रवर्ती की घटना को याद करो, वे आँखो में पानी, इन्द्रियुद्ध में भी पानी आया। दोनो में अन्तर है।

आज इसलिए पानी आया कि ये संयोग आज बिछुड़ गया। उसे उसकी दुर्लभता। उसका रहस्य ज्ञात हो गया था। ऐसे वे तीर्थंकर जो असंख्यात देवी-देवता को भी आकर्षित करते हैं। जिनका विहार भी अलौकिक होता है। जो सबकी कल्पना का विषय एवं श्रद्धान का विषय बन सकता है। बन जाता है। आज सभी श्रद्धालु हो उन महान् तीर्थंकर को याद करके अपने जीवन को सार्थक बना लो।

अहिंसा परमो धर्म की जय। नूँ

5-8-19 का संस्मरण शेष — पहले से ही तैयार रखते थे। प्रवचन करते थे। पुराने स्टाइल का माइक सिनेमा हॉल में प्रवचन हुये थे। ये सब लोग धीरे-धीरे बाद में आये। साथ की गाड़ियाँ भी हीट होना चाहिए। हाथ को भी वह देते थे इतने किमी. बाद ही कमण्डल दूसरे हाथ में बदलेंगे। पूरा शरीर एवं संघ प्रशिक्षित था। ठानलेते थे करके ही रहते थे। धन्य है गुरुवर की साधना।

10-5-19 "जहाँ देखूं- वहाँ है तू" शुक्रवार

एक बार शिक्षकों/अध्यापकों के माध्यम से बच्चों को कहा गया, हमने आपको कई पाठ सुनाये/याद कराये, अब आपको हमें बताना होगा मतलब परीक्षा देनी होगी। आप सुधो, हम परीक्षा में पास हो जायेंगे। तो ऐसा है सभी एक-एक केले ले लो। बच्चों ने कहा- क्या बात है, ये परीक्षा तो बहुत अच्छी है। सब केले बंट गये। हाँ तो सभी बच्चो ध्यान से सुनो!

इस केले को आसपास जहां कहीं भी जाकर खाना है फिर वापस आ जाना किन्तु ध्यान रखना खाते समय कोई भी ना देखे। तो कई बच्चे छुप छुपकर खा लिए। एक लड़का बिना खाये आ गया। क्यों सभी खाकर आ गये? स्त्री ने कहा- हाँ। किन्तु सब बच्चों ने मिलकर कहा ये नहीं खाकर आये। अध्यापक ने पूछा- क्यों सबने नियम याद रखा था? जी गुरुजी- स्त्री ने कहा। फिर तुमने क्यों नहीं खाया?

गुरुजी आपने कहा था कोई न देखे। सबने तो खा लिया पर मुझे माँ की बात याद आयी। भगवान तो सर्वत्र रहते हैं ऐसा माँ ने कहा था। उनसे तो बच नहीं सकेंगे। गुरुजी ये पाठ मैंने माँ से प्राप्त किया था। इसीलिए घर पर भी अध्ययन हो सकता है, ये ज्ञात होता है। ऐसे संस्कार डालने से लौकिक जगत में भी अध्यात्म जुड़ जाता है। ये पाठ हमने दूसरी कक्षा में पढ़ा था, आपको

भी याद होगा।

आज तो ४०, ४६, १०, १५, १०० अंक तक भी प्राप्तकर लेते हैं किन्तु केले की कथा किसी ने भी नहीं सुनायी। ऐसी विद्या उस समय हासिल की जाती थी। उपयोगी तत्त्व (आत्म-तत्त्व) जो है उसे बताया जाता था / एक ही भव नहीं, भगवान बनने का पाठ सिखाया जाता था और आज ...। आज बच्चों को सिखाया जाता है भगवान, भगवान दिखते तो हैं नहीं।" भगवान अपने से अलग है, ये तथ्यपूर्ण है। भगवान कहाँ नहीं हैं, बाहर ही मत देखो।

जो भगवान बनने की बात करता है तो वह श्रद्धानपूर्वक पहले स्वीकारता है और वही भगवान बन सकता है। भगवान ने भी यही कहा तुम भी भगवान बन सकते हो। इसी के लिए चार प्रकार के दान हेतु कहा। मोह से जो अर्जित किया है उसे देने को कहा। आज भगवान भले ही नहीं पर जैसा भगवान ने कहा ऐसे वीतराग छवि वाले संत हैं। उन्हीं भगवान के शास्त्रों में लिखा है। इसे देखकर हम उस होनहार भगवान को याद करते हैं।

भजन में कहा भी है- इस जनम में ना सही... एक न एक दिन उस भगवद् पद की प्राप्ति होगी। इसी श्रद्धान से हमारा सम्यग्दर्शन और मजबूत / दृढ़ / बलवान बन जाता है। ज्ञान कमजोर हो तो भी स०द० से पूरा कर लेता है (केवलज्ञान)। सभी को इस प्रकार के स०द० की प्राप्ति हो। इतना ही पर्याप्त है। केले के उदाहरण को याद रखना।

अहिंसा परमो धर्म की जय!

11-5-19 "कृत्रिमता का हाल" शनिवार

प्रातःकाल भ्रमरों का एक समूह अपने राशन हेतु उड़े जा रहे हैं। अब कहाँ जायेंगे? जहाँ उनको अपने योग्य राशन मिले। खुशी के साथ उड़े जा रहे हैं, इधर-उधर दृष्टिपात भी कर रहे हैं। कुछ विशेष रूप से भी नासिका द्वारा सुरखी लेने का प्रयास किया जा रहा है ताकि उस दिशा में उड़कर जा सके। बहुत सारे नदी-नाले पार हो गये पर कुछ मिला नहीं। एक व्यक्ति (भ्रमर) कहता है यहाँ देखो तो चरु दिख रहे हैं। चरु का अर्थ है नैवेद्य।

चरु है चारु नहीं है। चारु का अर्थ उत्तम होता है। चरु मतलब नैवेद्य है या उत्तम नहीं। वे सब देखने लगे। चारों तरफ देखा फल ही है। सुन्दर है। देखने से ही पानी आने लगा। क्यों देखने से मुख में पानी नहीं आता? हिंसी मुँह में नहीं तो आँखों में आ जायेगा। आँख में इसलिए कि मेरे पास ये है ही नहीं (दाम) और जिनको दिख रहा है वे भी ऐसे ही हैं। धीरे-धीरे पास में गये।

पास जाकर देखा, फल पर ही बैठ गये (ऊपर भी-नीचे भी सब ओर देखा) ये क्या है? वहाँ मण्डप बनाया गया था, कोई शुभ कार्य होना था। सब कृत्रिम चैत्यालय थे। हम लोगों के लिए अकृत्रिम-कृत्रिम सब समान है। ये क्या है? मनुष्य लोग महोत्सव मनाने आयेंगे। नीचे एक दरी बिछी

थी - वो भी हरी थी।

सोचा अरे! अष्टमी को भी ये लोग हरी पर बैठ गये। पता चला वो प्लास्टिक की थी। वहाँ सारी की सारी इन्द्रियों के विषय देखें - असली कोई भी नहीं था। आज कुछ ऐसा ही हो रहा है। भीतरी उस आत्म तत्त्व की गंध लेना चाहते हो, उसका स्वाद (रस) चखना चाहते हैं, उसकी कोमलता को स्पर्श करना चाहते हैं तो ये सब तब तक संभव नहीं जब तक संयम को अपने जीवन में उतारेंगे नहीं।

संयम यदि जीवन में आ गया तो फिर दूर जाना ही नहीं वह गंध-रूप-स्पर्श सब यहीं प्राप्त हो जायेंगे। तरंगे लौटती है - केन्द्र की ओर। तरंगे यदि तट की ओर जाती है तो विलीन हो जाती है, शाश्वत दर्शन नहीं कर पाती है। हम केन्द्र की ओर आयें। ऐसा दृश्य ज्ञानी के जीवन में ही घटित होता है। उसकी सुरभि बाहर की ओर नहीं/तट की ओर नहीं केन्द्र की ओर लौटती है।

पहले जब तक बाहर की ओर थी तो कुछ भी प्राप्ति नहीं हुयी। सब देख्यो छान, छिन्ना ही पड़ गये। "त्याग की ओर रुझान होते ही राग (जग) अपने आप ही समाप्त हो जाता है।" पच्चाये चेतव्वो, पच्चाये जाणिव्वो, पच्चाये हेयव्वो"
ऐसी क्रिया के माध्यम से वह अपने आप में संतुष्ट होता

चला जाता है।

ये सब विषयों से मिलने वाला नहीं, जब भी मिलेगा भीतर से ही मिलेगा। यह विधात्मक जीवन है किन्तु विडंबना है वह उन पर वस्तुओं को ही अमृतमय मानता है। यह वस्तु का दोष नहीं उसकी प्रज्ञा का दोष है। चुनाव ही गलत है। हमें वह काम करना है जो पूर्वजों ने बताया। लौटना है, अभी तो विषयों में लोटपोट हो जाते हैं। आत्मा शलभ पर की ही ओर जा रहा है। केन्द्र की ओर लौटना है।

वे भ्रमर भी सोचते हैं, ये किधर को आये। वह दृश्य तो भीतर ही विद्यमान है, इसलिए वह अपने ज्ञान से फूलों पर ही भ्रमण करता रहता है। मकरंद भी वो सान्द्रित है, पर वह कफ में फंसकर प्राण गंवा देती है जबकि भ्रमर कभी शलभ की ऐसा काम नहीं करता। चुनाव आप पर निर्भर है। पर को छोड़ने से ही स्व की उपलब्धि होती है।

जो कुछ भी उपलब्धि है वह त्याग से ही प्राप्त कर सकते हो। इतना ही पर्याप्त है। शर्मी में भी दूर-दूर से आये हैं। हाँ। संगीतकार है - गीतकार भी है। बजाते भी है - बज भी जाते हैं।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

"हस्तचम्पकवासनापुट न्यायेन" इसका मतलब फूल को मसलकर फेंक देने पर भी हाथ से खुशबू आती रहती है। (S)=खण्डन

रविवार
12-5-19 "और मुक्ता बना दिया" प्रातः

आज का युग आप लोगों की दृष्टि में विज्ञान का युग है। इसमें कोई संदेह नहीं प्रत्येक व्यक्ति इससे कहाँ तक लाभ ले रहा है ये अलग वस्तु है। लाभ हो भी रहा है या नहीं हो रहा ये भी चिन्तनीय विषय है। कुछ ऐसे भी तथ्य हैं जो संदेह में आते हैं। जो भी खोज होती है वह संदेह के आधार पर ही होती है। हमारे पास क्या-क्या उपलब्ध है और हम क्या-क्या निकाल सकते हैं? खोजी आँखों से निकालने का प्रयास चलता रहता है।

मंथन होने पर निर्णय करने की आवश्यकता नहीं, वह तो निर्णित हो चुका है। कुछ ऐसा ही विषय आपके सामने आ रहा है, जो आजकल हो रहा है। परीक्षा में 99 नम्बर लेने वाला भी कुछ प्रश्न छोड़ देता है। कोई भी 6 अथवा 7 प्रश्न हल करना होता है, उनमें भी एक प्रश्न अनिवार्य होता है। शेष प्रश्न छोड़ सकते हैं। जो छोड़ते हैं वे भी प्रश्न हैं कि नहीं? कठिन प्रश्न है। इसीलिए तो छोड़ दिया। इसी तरह विज्ञान को मानने वालों ने दर्शन को छोड़ा।

वह प्रश्न है पर कठिन है इसलिए छोड़ दिया। फिर भी मैं बुरा नहीं मानता, क्यों कि जो कठिन है उसको छोड़ दिया जो सरल लगा उसे अपना लिया। विज्ञान ने उसी को चुना, जिसे वह अच्छा समझता था। यहाँ से जल तप कर ऊपर गया। तपने पर वही जल वाष्प

वायु के रूप में हो गया।

वहाँ जाकर वही जल मेघ (बादल) का रूप धारण कर लेता है। सुबह तो बादल नहीं थे, यहीं से गये, विज्ञान इसमें संदेह नहीं करता। अब मेघों से पानी झर गया। पानी बरसने के साथ कुछ ओले एवं कुछ मोती भी गिरे। अब मैं विज्ञान से पूछना चाहता हूँ। जल से मोती कैसे बना? मंथन करना होगा तभी ज्ञात हो पायेगा। दूध से डाइरेक्ट क्रीम निकालकर घी बेचने वाली जो अनेक रोग का कारण है। मंथन से ही वह शुद्ध घी प्राप्त हो सकेगा जो अनेक रोगों को दूर करने में भी निमित्त है।

आप आज रोगों को बढ़ा रहे हैं, यहाँ पर्याय की स्थापना हो रही है। यह पूर्व के आचार्यों द्वारा निर्मित वस्तु है। नयी खोज नहीं है। जब विज्ञान के परिणाम संदेहास्पद होने लगे तब इस दिशा में काम करना हुआ। परन्तु क्या करें एक बार जो धारणा बन जाती है वह छोड़ना कठिन होता है। मोती बन गया इसमें ऐसी कौनसी क्षमता आ गयी।

मेघ मुक्ता बोलते हैं। वही जल यदि सीप के मुख में चला जाता है तो भी मोती बन जाता है। अब जलकायिक नहीं पृथ्वीकायिक हो गया। बस यही दर्शन है। आप संदेह भले ही करलो किन्तु यह सत्य है कि पर्याय का रूप बदलता है। पहले ये सब साधक

ब्रह्मचारीयाँ (16वीं) थी आज प्रतिभा मण्डल की सदस्य हो गयी। स्वप्न जैसा लगता है।

"ये भेद से मुक्त बनने का कार्य है।" किन्तु अभी मंथन करना शेष है, कोई मना नहीं है। इसमें बहुत बड़ा सिद्धान्त छिपा है। फुर्सत हो तो बतायें, आपके पास फुर्सत कहाँ? बता भी दे तो दिखे कैसे? चश्मा जो लग गया है। या तो अपने चश्मे का नम्बर बदल दो या फिर हमारा चश्मा खरीद लो। ताली बजाने से मैं खुश होने वाला नहीं, बल्कि आपकी ताली से खुशी का अनुभव और होता है।

जो शोध में उतरता है, वह सुख-दुःख, लाभ-हानि इन सबको भूल ही जाता है। आप से पुछूंगा कि जीव कहाँ गया / तो "पर्याय बदल लेना प्रकृति का नियम है।" कोयला भी हीरा एवं हीरा भी कोयला बन सकता है। दुर्भाग्य समझ में नहीं आता है। इसमें कौनसा परिणमन हो गया? भाग्य काम करता है। कुछ ऐसे भी हीरे जो आर्टिफिशियल भी बनाया जाता है। ऐसे में जो भी खर्चा करने का उपक्रम होगा वह सब अपव्यय की कोटि में गिना जायेगा।

सहज जो उपलब्ध है (अकृत्रिम हीरा) उसकी कीमत अलग होती है। आज का विज्ञान जीव की खोज में लगा है लेकिन क्या करे उसे वह साधन सामग्री आज तक प्राप्त नहीं हुयी। कहाँ से आकर कहाँ जन्म लेता

ये जीव विज्ञान का नहीं श्रद्धान का विषय है।

विज्ञान को कसने से जीव का उत्पादन नहीं। भले ही कमरकस लो कुछ नहीं होगा। जीव तो दूर बिना जीव के शब्द का उत्पादन करके दिखा दो। जीव पर आये कि दर्शन पर आ गये। आप अपने हाथ जोड़ लेंगे। इस रसायन में कर्म-सिद्धान्त जुड़ा रहता है। प्रयोगशाला के उस विद्यार्थी से हम पूछना चाहते हैं कि एक तरफ घासलेट तेल जो ज्वलनशील है पर जलता नहीं, दूसरी ओर पानी है जो आग बुझाने की बजाय जला देता है, और तेज कर देता है।

वही पानी शुद्ध रासायनिक क्रिया से मोती बन जाता है। जल वायु के रूप में परिवर्तित, वायु पुनः जल रूप, जल मोती रूप में परिवर्तित हो जाता है। इस प्रकार भिन्न-भिन्न नामकरण के सिद्धान्त को आप नकार नहीं सकते। यूं कह सकते हैं ये पेपर बहुत कठीन है। भीतर से यही स्वीकार करते हैं कि ये भी प्रश्न है कठीन है इसलिये छोड़ दिये। सरल-सरल लिखकर नम्बर ले लिये।

यहाँ जितने भी व्यक्ति बैठे हैं वे सब विज्ञान को सरल एवं दर्शन को कठीन मानते हैं। श्रद्धान कर लो तो दर्शन से सरल कुछ नहीं है। सब अपने-अपने विषय है।

अहिंसा परमो धर्म की जय। ॐ

विशेष - [कर्तव्य दीक्षा - 16+2=18 बहनों की Dress Change]

13-5-19 "शुद्धोपयोग रूप मलाई की पट्टी" सोमवार

दूध में क्या-क्या है किस प्रकार की पर्याय उसमें कब-कब उत्पन्न होती हैं, जो व्यक्ति दूध का सेवन करते हैं, उन्हें प्रायःकरके ज्ञात होता है। ये कहा गया- इस दूध को मंदी आँच पर रखो। सुन रहे हैं आप? हमारी आवाज मंदी नहीं हैं। सबके पास पहुँच रही हैं। मंदी आँच कैसी है- वह समझ नहीं पाया। वह मंदी न रहकर तेज ही हो गयी। इतने में जिसने कहा था, वह आ जाता है और यह चला जाता है। क्यों मंदी आँच पर रखा था?

हाँ! मंदी आँच पर रखा था। जाकर के देखा, नीचे का ऊपर, ऊपर का नीचे हो गया। अरे! ये तो गड़बड़ हो गया। क्या हुआ? सुनो! मलाई कहाँ, अशांत दूध में सो, प्रशान्त बनो। अब बोलो? 17 अक्षर हैं इसमें ताली बज जाये तो 1700 हो जाये। ये कहा जा रहा है यदि मंदी आँच पर रखोगे तो मलाई की वह पट्टी जमती चली जायेगी और यदि तपाओगे तो फिर खदबद-खदबद हो जायेगा। वो पट्टी आ ही नहीं पायेगी।

कितना भी प्रयास क्यों न कर लो। हमने सोचा क्या कुदरती नियम है- उसी में रहकर उसे आत्मसात् करेंगे तो वह पट्टी आ पायेगी। यदि थोड़ी भी तेज आँच में तब्दीली आ गयी तो जो जमी थी वह भी टूट जायेगी। फटकर बिखर जायेगी। हमारे उपयोग में भी कुछ ऐसी ही दशा हो रही है। सुन रहे हैं आप? कक्षायों के

कारण खदबद हो रही है।

कोई पूछता है कि हमारे उपयोग में वह पट्टी क्यों नहीं आ रही है? शुद्धोपयोग की पट्टी कषाय की खदबद दूर होने पर ही आ सकती है। आलू चूल्हा तो बचे ही नहीं अब क्या होगा। थोड़ी-थोड़ी बात पर ही कषाय हो जाती है। सब तीतर-बीतर हो जाता है। कषाय का संकल्प पूर्वक त्याग कर दो फिर देखो! हथेली के बराबर मलाई की पट्टी जमेगी। तपेली या पतेली [हम दोनों नाम बोलते हैं, हम भूल जाते हैं] के बराबर वह पट्टी होगी।

यदी एक कीट डाला है तो भले ही दूध ½ सेर हो, उतने ही डाले में पट्टी जमेगी। उपयोग की दशा को हम नहीं देख पा रहे हैं। स्वभाव की जानकारी नहीं रख पाने के कारण ऐसा होता है। झट से कषाय कर बैठते हैं तो झट से वह पट्टी भी टूट जाती है। बड़ी ही नाजुक होती है वह पट्टी। शुद्धोपयोग की दशा में ऐसा ही उदाहरण घटित होता है। हम ज्यादा तो नहीं कह सकते।

संयम धारण किये बिना यह दशा नहीं आ सकती। हाँ! आप लोगों ने इतना तो संयम रखा की गर्मी में भी हमारी बात सुन ली। अभी पट्टी का जमना बाकी है। जिन्होंने संयम का आस्वादन किया उनके जीवन में अवश्य ही यह घटित होगा।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

15-5-19 "असंयम का डर बचाता संयम को" मंगलवार

आप लोग उस दृश्य से कई बार अवगत होंगे। उस नदी पर पुल तो है लेकिन रेल की पुल है। ऐसी स्थिति में क्या होना है? राजस्थान से मध्यप्रदेश की ओर आते समय ऐसा ही दृश्य उपस्थित हुआ। नदी पर ऐसा ही पुल था जिसपर से होकर पार करना था। अब क्या करें? उस नदी का नाम है पार्वती नदी। रेल का पुल है उसमें रास्ता बहुत संकीर्ण रहता है - ध्यान रखना। मान लो बीच में ही गाड़ी आ जाये तो क्या होगा? पुछताछ कर लिया गया। उन्होंने बताया बीच में कुछ स्थान है उनका आप उपयोग कर लिजिये।

अब सामने से भी अथवा विपरित दिशा से भी गाड़ी आ सकती है। वह भी पार कर रही है हम भी पार कर रहे हैं। ज्यों ही वह रुकती है तो तीन-चार लोग खड़े हो सकते हैं बैठ नहीं सकते हैं। उसमें भी नीचे देखो तो अथाह जल है खाई है। ऐसे में वह पुरी रेल पार होगी। 50-60 डब्बे की मालगाड़ी भी हो सकती है। हमारी भी तो यह मालगाड़ी ही है, रत्नत्रय की गाड़ी है।

तो वह गाड़ी पार हो गयी। हम लोग पुनः चलकर रास्ते (सड़क) पर आ गये। अब सोच प्रारम्भ हुआ। जो बीच में खड़े होने का स्थान था वह छठवाँ गुणस्थान है। उससे यदि नीचे गिरे तो गड़बड़ हो जायेगा (असंयम हो जायेगा। सुन रहे हो रेहओ) वहाँ रुकना चाहता कोई नहीं पर फिर भी रुकना

पड़ता है।

सप्तम (श्रेणी अपेक्षा) - अष्टम गुणस्थान आज है नहीं। छठवाँ - सातवाँ गुणस्थान की ही यात्रा आज चल रही है। कैसा भी साधक हो अन्तर्मुहूर्त के उपरान्त नीचे आना ही पड़ता है। मोक्षमार्ग में ऐसी ही व्यवस्था है। वह गुणस्थान प्रमाद का गुणस्थान है। वहाँ पर रुककर श्वांस लिया, अपने धैर्य को मजबूत किया और अब कोई नहीं भी है तो आगे चल जाता है। उस घटना द्वारा हमें उस छठवें गुणस्थान की व्यवस्था के बारे में परिचय हो गया।

अपने परिणामों पर नियन्त्रण रखना बहुत ही होता है। नीचे खाई है आजु-बाजु कोई भी नजर नहीं आता उस समय तो और भयावह स्थिति उत्पन्न हो जाती है। ध्यान रखें - "यदि असंयम का डर जिसे बना रहेगा तो उसमें भी संयम का ही दर्शन होता है।" जब रेलगाड़ी चली गयी तो पुनः सप्तम में अप्रमत्त होकर चला जा सकता है। चलते हैं। अन्त० - अन्तर्मुहूर्त में यह कार्यक्रम निरन्तर चलता रहता है। अन्यथा सप्तम तो हो ही नहीं पायेगा।

उसका ये दृढ़ संकल्प है कि अन्तर्मुहूर्त बाद पुनः सप्तम में आना ही है। जैसे - उपवास का यदि संकल्प ले लेते हैं तो अब रात स्वप्न में भी आपको भोजन का खयाल नहीं आता। कितना भी परिश्रम करना पड़े अथवा कितनी भी भयंकर परिस्थिति (घटना) क्यों न

घट जाये तो आप संकल्पित है।

इसी प्रकार संकल्प के साथ गुणस्थान भी बना रहता है। आगम भी यही कहता है। आगम में भिन्न-भिन्न घटनायें बतायी तो भिन्न-भिन्न व्यवस्थायें भी बतायी है। क्षयोपशम भाव कहा था उसकी वहाँ वैसी ही व्यवस्था भी बनायी। "प्रयोग के काल में अपना अनुभव और दृढ़ हो जाता है।" श्रद्धान के माध्यम से ही हम प्रयोग में उतर अनुभव को दृढ़ कर लेते हैं।

एक बार कोई भी व्यक्ति शोध कर लेता है उसके लिए वह आगे का कारण भी बन जाता है क्योंकि उसने प्रयोग करके देख लिया। श्रद्धान में ऐसा एकान्त से नियम नहीं है। उसे औपशमिक, औपशमिक - क्षायोपशमिक कई प्रकार से विवक्षित किया है किन्तु सम्यग्दर्शन दो नहीं चारित्र को ही देय जाता है ~~अवगाढ~~ सम्यग्दर्शन के भेद दो परमावगाढ़ सम्यग्दर्शन बनाने का। अकेला सम्यदर्शन परमावगाढ़ तक नहीं ले जा सकता।

वह पथ ऐसा ही है, रास्ता ही नहीं है। श्रद्धान तो श्रद्धान होता है किन्तु चारित्र के बिना भी कुछ नहीं। आचार्य कुन्दकुन्द ने इसीलिए "चारित्तम् खलु धम्मो" कहा। तो पार्वती की घटना को याद रखना।

अहिंसा परमो धर्मकी जय।

15-5-19 "कैसे बढ़ायें सामुहिक पुण्य" बुधवार

आप लोगों के पास दो प्रकार की कषाय है। एक द्वेषात्मक है और एक रागात्मक है। द्वेषात्मक का अर्थ है वह विद्वेष में कारण हो जाती है। गरम स्वभाव वाला होता है। बहुत दूर तक क्षोभ उत्पन्न कराने में वह कारण होता है। मतलब विस्फोटक सामग्री को रखकर चलते हैं। क्यों? बारूद रखे हो। पूरी दुनिया ही बारूद के ढेर पर खड़ी है। अपने हाथ ही में नहीं बल्कि मन में-वचन में सब में विस्फोटक सामग्री (बारूद) है।

दृष्टि में भी यही बॉल है। दुष्टित हो जाये तो --- टाइम बॉम्ब बाद में होगा, हो भी और न भी हो किन्तु आपकी दृष्टि में आ जाये तो इससे भी काम होने लग जाता है। ऐसी-ऐसी ऋद्धियाँ (शक्ति) आपके पास विद्यमान है। उन ऋद्धियों से आप कार्य करते हैं। अब दूसरा पक्ष जो रागात्मक है उसे भी देखो। ऐसी माया है। माया तो माया है। माया को क्षोभ नहीं कहा। माया और लोभ दोनों रागात्मक है।

आज विश्व की कुछ ऐसी नीतियाँ है, सामने वाले देश को हराकर अपने आधीन कर लेते हैं। अब जीवन पर्यन्त आधीनता स्वीकार करनी पड़ेगी। आपका समर्थन उसके लिए अनिवार्य हो गया। ये सब वशीकरण के अन्तर्गत आ जाता है। ये सब ऋद्धियाँ सिद्ध हो जाती है। इसके लिए महाविद्यालय अथवा विश्वविद्यालय की कोई आवश्यकता

नहीं पड़ती।

ये दाहिने हाथ नहीं बांये हाथ का खेल है अर्थात् चुटकी बजाने की बात है। मन में विचार चालु हो गया, ऐसी विस्फोटक सामग्री के साथ हम बुद्ध हद तब अपने भीतर उतर जायें तो अच्छे कार्य भी कर सकते हैं। "वो भी धर्मानुराग है विषयानुराग अथवा विषभानुराग नहीं।" ऐसे कार्य से वह व्यक्ति आपका हो सकता है। अपने वाले (बाप-दादा) स्वार्थी हो सकते हैं, किन्तु इससे राष्ट्र भी उन्नति कर सकता है।

ये आपकी बुद्धि पर आधारित है। मतलब कषाय द्वारा भी अच्छा कार्य कर सकते हैं। राष्ट्र को ही निरोगी बना दें, विश्व में सब आ जाते हैं। एक बात सुनी थी, अच्छी है। कोई सामूहिक कार्य (बड़ा काम) करना चाहते हैं तो पुण्य भी उसी प्रकार का अपेक्षित है। महाराज आशीर्वाद दे दो? हम ऐसे आशीर्वाद नहीं देते - इसीलिए हमें विलम्ब होता है। हम पर भरोसा नहीं है क्या आपका?

ऐसे प्रश्न वाले को मैं कहता हूँ कि भरोसा क्यों नहीं है। हम आपके घर आते हैं, इससे बड़ा भरोसा कौनसा हो सकता है? आप कुछ भी खरीदते हैं तो पहले देखते हैं। गिलकी-लौकी ले आये। अब कड़वी होगी तो वह जहर हो जायेगी। आप पर विश्वास है। सामुहिक कार्य हेतु विशेष भरोसा की आवश्यकता होती है। हम भी बीच-बीच

में परख कर देख लेते हैं।

इसका मतलब हम तोड़-तोड़कर आशीर्वाद नहीं देते। पुद्गल रहते हैं पक्का है या नहीं? वचन से ही नहीं भीतर से भी पक्का होना चाहिए। सामुहिक कार्य होनेजा रहा है सामुहिक पक्का बना लो। कुशल बागवान पेड़ पर से एक ही साथ सारे आम नहीं उतार लेता। कुछ आम जो अभी पके नहीं हैं उन्हें पेड़ पर छोड़ देता है एक-अधि हफ्ता बाद उतार लेता है। ये देखना जरूरी है कि सचमुच पके है या नहीं।

कुछ कठोर होते हुये भी स्वादिष्ट होते हैं। दबाओ नहीं - दबाने से खराब हो जाते हैं। हमें तो कह दो। आम आपका है प्रशंसा हम कर रहे हैं। (बहनों के भर्तिकरण पर)। सामुहिक कार्य के लिए तीव्र पुण्य चाहिए। भगवान से प्रार्थना करते हैं कि आपका पुण्य और तीव्र हो ताकि सामुहिक कार्य अच्छे से हो। बुरे भाव तो कभी आना ही नहीं चाहिए। तन-मन-धन तीनों के साथ परमार्थ दृष्टि हो तो सामुहिक पुण्य से फलित हो जायेगा।

ये धरती पहले थी, ये ही अभी है। चाहे पंचम काल हो या चतुर्थ-तृतीय काल हो। लोग आते एवं जाते रहते हैं। वह कार्य आज क्यों नहीं हो रहा? क्योंकि आपका पुण्य-आपके भाव अलग है। इसलिए क्रोध-लोभ से दूर ही रहना चाहिए। द्वेष से बचो, लवण से दूर हो,

दूध न फटे"

क्या कहा? दूध के पास यदि लवण जायेगा तो वह फट जायेगा। द्वेष से मन भी फट जाता है। इसलिए पहले राग से नहीं द्वेष को पहले छोड़ दो। क्रोध-मान पहले माया लोभ बाद में जाते हैं। मुनिमहाराज के पास भी सैद्धान्तिक रूप में विद्यमान है। हमारे पर विश्वास रखा करो। हमेशा-हमेशा आयुर्वेद की दवाई बतायी नहीं जाती। विश्वास द्वारा नीरोग होता है। जितना ज्यादा औषध पर विश्वास होगा उतना ही उस औषध में शक्ति आ जाती है।

अभी आँखों में पानी नहीं आया। चांटा भी मारकर रखाया जाता है- वैद्य जी कहते हैं गंदा पानी बाहर हो जाता है। घर में जो मसाले (जीरा-धनिया-पुदिना आदि) हैं इन्हीं के काढ़े बनाकर देने से अनेक रोग दूर हो जाते हैं। पानी जो डाला वह 25% (एक चौथाई) रह जाये। औषध तो औषध होता है। विश्वास से घनिष्ठता आ जाती है। कालिमिर्च थोड़ी सी भी लालमिर्च से कम करती है। ये आना (छटांग) नहीं ये आरोग्य है।

सिद्धान्त अलग एवं फलश्रुति अलग है। जितना मोक्षमार्ग पर विश्वास रखना होता है उतना ही औषध पर विश्वास रखना आवश्यक है। इतना ही पर्याप्त है। हमारा उदाहरण याद रखना। लवण से दूध को दूर ही रखना अन्यथा फट जायेगा। फटने के उपरान्त न ही जमा

सकते हैं न ही मंथन नवनीत घी आदि प्राप्त होपायेगा।
ये कषायें क्रम से ही समाप्त होती हैं। लोभ एवं माया के कारण ही हमें भयानक गतियों में जाना पड़ता है। जैसे- पथ्य की सावधानी रखी जाती है वैसे ही कषायों की सावधानी रखो। तभी काम होता है। इतना ही।
अहिंसा परमो धर्म की जय। नैं

"पूर्णायु हेतु गुरुमंत्र"

- आधा भोजन कीजिये दुगना पानी पीव।
  तीगुनी हंसी, चौगुना श्रम वर्ष सवा सौ जी।
- पांव गरम, पेट नरम, सिर ठण्डा
  वैद्य जी आवें तो दिखाओ डण्डा।
- ऐलोपैथी की जाँच (Report) को आप सही है ऐसा नहीं कह सकते क्यों कि वे स्वयं इसको सही नहीं मान रहे।
- विश्वास होना सबसे ज्यादा जरूरी है तभी औषध काम करती है।
- समता - संतोष बही खाइये - तुरन्त आराम पाइये।
- औषध को आहार मत बनाइये - आहार को ही औषध मानकर खाइये।
- बाजार का भोजन (Fast Food) सारी बिमारियों की जड़ है। इससे बचिये।

16-5-19 "परिणमन हो कपुर की भांति" गुरुवार

सभी पदार्थों को प्रायःकर जलाते हैं तो अवश्य कुछ न कुछ शरव बचती है। भस्म बोलते हैं। वस्तु को ही भस्म कर दिया किन्तु भस्म को कभी भस्म नहीं बनाया जाता। इस विषय में ये सामान्य धारणा आपकी है किन्तु जब अष्ट कर्म दहनार्थ में धूप के स्थान पर कपुर जलाते हैं उस पर ध्यान दिजिये। कपुर के स्थान पर कुछ तो बचता होगा। ऐसा क्यों? भीमसेन कपुर बोलते हैं, और भी बहुत प्रकार के कपुर आते हैं।

प्रश्न यह है कि कपुर में ऐसी कौनसी परिणति होती है कि जलाने के बाद भस्म का निर्माण नहीं होता है। इतना कपुर जलाया पर शरव नहीं बचा तुं कहे शरव खाक हो गया। सुना आपने कभी? वहाँ राख बच गया था यहाँ खाक भी नहीं बचा। शरव नहीं तो भी हवा से उड़ने के बाद भी कुछ न कुछ कण अवश्य रहते हैं। यह मात्र उदाहरण है। भोगभूमि के शरीर की ओर दृष्टिपात करते हैं। एक-दो-तीन कोस का शरीर होता है। इनका अवसान हो जाने पर क्या होता होगा?

वहाँ भी शरीर कपुर की भाँति उड़ जाता है, कुछ बचता ही नहीं। एक-दो-तीन कोस की लम्बी-चौड़ी काया होती है, वह औदारिक शरीर होते हुये भी कर्म भूमि जीव के शरीर से भिन्न है। उसमें निगोदिया जीव नहीं रहते। वह शरव क्यों नहीं बना, यही हम

बताना चाहेंगे।

आग, जहाँ पर ईंधन होता है वहाँ राख बनती है। ईंधन की तरह वह जला किन्तु जो मरण होने पर इस तरह का परिणमन होता है। यहाँ भस्म बनकर अंश रहता है पर वहाँ नहीं। ऐसी कौनसी शक्ति है जिससे ऐसा परिणमन हुआ। पौद्गलिक परिणमन है। अनंत परमाणु मिलकर बना है यह पौद्गलिक पिण्ड जो शीघ्र ही भस्म हो जाता है।

न राख रहती है न खाक रहती है। "भावस्य णत्थि णासो" जो रहता है उसका नाश नहीं होता, हाँ परिवर्तन हो जाता है। हमारे कर्म भी राख होने का यही मतलब है, वे भिन्न वर्गणाओं में परिणमन कर जाते हैं। सब द्रव्य कभी नाश को प्राप्त नहीं होता। भावों द्वारा कर्मबंध तो भावों द्वारा नाश भी होता है। आचार्य समन्तभद्रस्वामी ने कहा भस्मीसात् क्रियाम्... सुन रहे हो? [हओ]

हमारी हओ भस्म न हो जाये, इस महामंत्र से कर्म भस्मसात् होते हैं। उस हओ को जीवित रखीयो। मोह अथवा दोषों को छोड़ने के विषय में ऐसा कहा है। मोह ऐसा नहीं है कि सूंघा तो उड़ जाये। इसे सामान्य ईंधन से भी नहीं जलाया जा सकता। सेल्फ इसी को कहते हैं। बहुत ईंधन की जरूरत होती है। "स्वदोष मूलं स्वसमाधि तेजसा, निनाय यो निर्दय भस्म सात् क्रियाम्"

इसमें निर्दय शब्द बहुत मार्मिक है।

आप कहते हो महाराज दया भी नहीं कर रहे। निर्दयी बनने हेतु वृषभनाथ भगवान कह रहे हैं। स्वदोष मूलं क्या है? दोषावरणयो... आचार्य कहते हैं पहले दोषों को दूर करो फिर आवरण का नाश होता है। ज्ञानावरणादि कर्मों का क्षय तो करना ही है। पहले मोह का क्षय हो। मोह का क्षय नहीं तो अन्य का क्षय तो सम्भव ही नहीं है। यह मोहनीय का क्षय शुक्लध्यान से ही हो ऐसा नहीं है, धर्मध्यान के द्वारा भी नाश हो जाता है। मोह को दोष की संज्ञा दी है। "मोह से जुटना है तो दूसरे के दोष देखना बंद कर दो।"

कितनी बार इस शरीर को धारण किया। ईंधन भी नष्ट हो गया। हासलेट भी कम पड़ गया। कौन भस्म करेगा? सरकार के लिए भी सिरदर्द है। खर्च नहीं करेंगे तो उसका सही उपयोग नहीं होगा। इस प्रकार दृष्टि न दोषों पर जाये। यही तो ईंधन का काम करता है। स्वदोष कहा, पर दोष पर दृष्टि न हो। स्वयं के दोषों पर जाये किन्तु स्वयं के दोष दिखते ही नहीं।

आपने दोषों को दूर करना चाहते हो तो ऐसे कहीन होकर संकल्प ले लो। ऊसही-ऊसहीनहीं जैसे मेहमान घर पर आते हैं तो क्या करते हैं? भीतर से भाव होते हैं- भोजन के समय आ गया। अब महाराज जब तक हैं तब तक यहीं पर रुक गये तो कहना ही क्या? सही बात है ना? इसमें हठ की आवश्यकता

नहीं हैं।

निर्दयी होना पड़ता है तभी मोह पर प्रहार कर सकते हो। क्षत्रिय हुये बिना ऐसी कठोरता नहीं आ सकती। वही क्षत्रिय जब प्रजा का पालन करता है तो बहुत कोमल होता है। एक बार संकल्प ले ले तो फिर पिछे मुड़कर नहीं देखता है। जो मोह पर प्रहार करता है वही दान करता है। रखने वाला दान नहीं मोह को जीतने वाला दान देता है।

अपने से पृथक सभी को परिग्रह मानता है। आज त्यागपत्र तो लिखते हैं पर त्याग भी है या नहीं? स्वर्ग में भी याद आयेगा। छोड़ने पर भी संस्कार साथ लगे रहते हैं। इसलिये अब कपुर को याद रखना। बस भगवन और कुछ नहीं चाहिए कपुर की भांति हमारा परिग्रह हो जाये। तभी इस पूर्णायु को पूर्ण कर सकेंगे नहीं तो नहीं कर सकेंगे।

कपुर की भांति हल्के हो जाओ तभी शरीर एवं मनगत रोगों से छुटकारा मिल सकता है। इस प्रकार - कपुर को याद रखेंगे कपुर को नहीं। इतना ही।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

New Hia.

निमित्त मिले, पित्त उछले भले, चित्त मस्त/स्वस्थ/शांत हो।

17-5-19 "औषध वही जो करे प्राणों का संशोधन" शुक्रवार

अभी दवाइयों/औषधियों के बारे में बोला जा रहा था। कुछ चीज ऐसी होती हैं उनकी प्रकृति भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के आधार पर भिन्न-भिन्न परिणाम निकलते हैं। यह भी ज्ञात होना अनिवार्य है। जो मेरे लिए फल मिल रहा है वही सामने वाले (दूसरे) के लिए मिले ये कोई नियम नहीं। जो मेरे लिए प्रतिकूल है वह दूसरे के लिए अनुकूल हो सकती है/होती है।

भिन्न-भिन्न काल/देश/स्वभाव को लिए हुये परिणाम भी भिन्न-भिन्न देखने में आते हैं। वस्तु में दो भेद नहीं होते यह भी ज्ञात होना चाहिए। उदाहरण के लिए नीम है तो वह नीम ही है। उसका स्वभाव कभी मीठा नहीं होता कड़वा ही होता है। ऐसा नहीं कि किसी को नीम भी मीठे की तरह लगे तो भी उसे नीम ही कहेंगे आम नहीं कह सकते। आप समझ गये होंगे। अपने मतलब के अनुसार नहीं प्रकृति के अनुसार उसका सेवन करें। औषध हमेशा औषध रूप में होती है वह भोजन रूप में ग्रहण न करें।

औषध से कभी भी तुष्टि नहीं भोजन से तुष्टि एवं पुष्टि दोनों होती है। इसलिए मात्र दवाई को ही औषध न माने वचन के माध्यम से भी, स्पर्श के माध्यम से भी, विचारों के माध्यम से भी हम दवाई रूप में परिणमन देखते हैं। आपने सोच लिया कि यह मेरे भीतर बैठे कुतत्व

को निकालने के लिए सुतत्व है।

कुतत्व को कभी भी रखा नहीं जाता, वह रह गया है। हमारे संतो ने जो हितकारी है उसे रखने के लिए उपदेश दिया। अहितकारी के साथ लाड-प्यार करने के लिए मना किया। आप सुन रहे हैं न? आप स्वस्थ हो तो कोई बात नहीं, किन्तु अस्वस्थ हो तो अवश्य सुनें। इस प्रकार संतो/आचार्यों ने हर स्थिति में समता रखने को कहा। महाराज! ये बात समझ में नहीं आयी। स्वस्थ हो तो ठीक है पर अस्वस्थ हो तो भी समता कैसे रखें?

"स्वभाव एवं स्वास्थ्य में अंतर नहीं होना। इसे ध्यान में रखो। यदि समता है तो औषध/दवाई न भी ले तो भी उस असामाजिक तत्त्व को निकाल सकते हो।" यह अमोघ अस्त्र है। एक स्थान पर पढ़ा था- सर्प के काट जाने पर उसकी दवाई भी है अर्थात् औषध भी है और इसका परीक्षण भी है, वह यह है कि ऐसा व्यक्ति नीम भी खा रहा है तो उसे वह मीठी लगती है।

दो प्रकार के नीम होते हैं- मीठा भी एवं कड़वा भी। दक्षिण में कर्नाटक-महाराष्ट्र में उस मीठी नीम का अपने हिसाब से उपयोग होता है। मीठाई में ही नहीं नमकीन में मुख्य रूप से वह उपयोग करते हैं। उसकी पत्ती में वह कड़वापन नहीं है। वस्तुतः

वह नीम नहीं। नीम का स्वभाव तो कड़वा है।
उसकी पत्ती के आकार के कारण भी उसका नाम नीम हो गया हो स्वभाव जानने से स्वास्थ्य का अनुभव भी हो जाता है। स्वभाव का अर्थ प्रकृति की ओर जाना है। इसे ही साधना कहा है। स्वभाव कहीं अन्यत्र से प्राप्त नहीं करना है, वह यहीं पर विद्यमान है। स्वभाव का सभी चिंतन कर सकते है। राग-द्वेष उत्पन्न न हो इसी को आगम में स्वभाव कहा जाता है। आपने देखा भी होगा शत्रु-मित्र ये आपकी दृष्टि में है, संतो की दृष्टि में नहीं।
जैसा वे करते है वैसा ही आपको भी करना चाहिए। महाराज! फिर तो देश आदि का विभाजन भी नहीं हो पायेगा। ये हमारा देश है, ये उनका देश है। क्या वहाँ दोनों के मध्य हजारों मीटर की खाई खोदी गयी है क्या? नहीं बस हमने दृष्टि में सीमा को बांध लिया। ये इस ये पर है, ये भान होता रहता है। स्वास्थ्य की ही सीमा नहीं होती हमारी भी सीमा होती है।
आचार ग्रन्थों में उपदेश आया कि वहाँ पर जायें जहाँ संयम का अच्छे से पालन हो सके। वहाँ पर जाने से संयमी बन सके। हमें भी समता से सुख का अनुभव करने है तथा वे भी उस सुख का अनुभव करना चाहते हो। असंयम के रूप में जो अपने को दुःखी समझेगा वह तो फिर आपके चरणों में भागता

हुआ आ जायेगा।

संतो ने संतत्व को सुरक्षित रखकर ही काम किया। तीर्थंकर / चक्रवर्ती दिग्विजय यात्रा हेतु गये किन्तु गृहस्थ अवस्था में बाद में मुनि अवस्था में नहीं गये। धर्म के लिए उनके पास नहीं जाना होता उनको इसके पास आना होता है। कुआ कभी प्यासे के पास नहीं जाता अपितु प्यासा कुयें के पास आता है। महाराज! नदी तो सबके पास जाती है? ठीक कह रहे हो किन्तु आप अभी नदी के स्वभाव को नहीं जानते।

वह कभी रुकती नहीं, चलना दौड़ना, भागना ही उसका स्वभाव है। जब तक लक्ष्यतक न पहुँच जाऊं तब तक चलना ही है। हमने कभी मना नहीं किया (राजस्थानवालों से) (नदी बह रही है आप भी पानी पी सकते हो। चाहे तो) गंगा का जल यदि बहता रहे तो वह गंदा नहीं होता। एक स्थान पर टिकने से वह कादा बन जाता है। संतो की यही प्रकृति होती है वे ज्यादा ठहरते नहीं।

तो "औषध से संशोधन होता है तथा दवाई तो दबा देती है।" यहाँ पर जो औषधालय बनने जा रहा है, वहाँ पर शुद्ध औषध का निर्माण भी होगा जो इन प्राणों के संशोधन में तो काम करेगी ही। साथ में भी सहयोग करेगी। आवश्यकतानुसार इसका उपयोग कर सकते हैं।

अहिंसा परमो धर्म की जय हो

18-5-19 "परिपक्वता को बचाओ" शनिवार

उस समय की बात है असि, मसि, कृषि आदि छहों कार्य समाप्त हो जायेंगे तथा पूर्व में जो कल्प वृक्ष इत्यादि के माध्यम से उत्पन्न होता है वे भी वहाँ नहीं होंगे। एक स्थान पर यह भी आया कि जो अग्नि है वह भी समाप्त हो जायेगी। अग्नि से ही जीवन है। पूरा पाक शास्त्र उस अग्नि पर ही आधारित है। उसके बिना आप सेवन नहीं कर सकते।

अन्न को पैदा कर सकते हैं परन्तु वह अग्नि के माध्यम से पकाकर ही खा सकते हैं। पशुओं की तरह आप नहीं खा सकते। पशु जो खाता है उसे घास कहते हैं। अग्निपक्व नहीं तो वह घास माना जाता है। जठराग्नि कितनी भी तेज हो उसका पाचन समाप्त हो जाता है। पहले से ही यह निश्चित किया कच्चे माल को अग्नि पकाकर दे देती है। ज्वार - मोठ - चना, गेहूँ इत्यादि कच्चा है। यदि ऐसे ही खायेंगे तो कब्ज हो जायेगी।

गांधी जी ने किया था तो ऐसा ही हो गया। तब उन्होंने कहा कि मैं कच्चे का त्याग करता हूँ। और अग्नि की ही शरण में जाता हूँ। आप लोगों के यहाँ भी परिवर्तन होता जा रहा है। सौरऊर्जा से पकाया जा रहा है। अग्नि है किन्तु वह कहाँ तक उचित - अनुचित है मैं नहीं कह सकता। गैस को भी अग्नि कहा है। ये सब आप पंचम काल के

समापन की ओर जा रहे हैं।

धीरे-धीरे वह घड़ी आ रही है। वह पचेगा ही नहीं। "गैस का जब से प्रयोग हुआ लोगों को गैस बनने लग गयी।" पहले अग्नियों में भी बहुत से भेद होते थे - कंडे की अग्नि अलग, बबूल की अलग, नीम की अलग होती थी। फिर कोयले का प्रचलन हुआ उसमें लकड़ी के कोयले का स्थान बाद में पत्थर के कोयले ने लिया।

धीरे-धीरे कहाँ पहुँच गये हो, थोड़ा सोचो तो? किसी ने पूछा था - महाराज युग्य गादा कैसे करें? अब गैस आ गयी तो गादा कैसे होगा वह तो और पतला हो गया। इस अग्नि के अभाव का एक कारण पशुओं के पालन का अभाव भी है। पशुपालन न होने से इंधन की समस्या आ रही है। गोबर इत्यादि से बहुत कुछ होता था। समय से पहले ही आप आज ही कलयुग के अवसान को बुला रहे हो।

साथ में रोग भी बुला रहे हो। निरोगता कैसे प्राप्त करेंगे। जो प्रकृति द्वारा प्रदत्त वस्तुएँ हैं उनका महत्व ही नहीं समझ पा रहे हो। समय पर सही ताप नहीं होने से अन्न पकता नहीं वह कच्चा ही रहेगा। कच्चा जब पेट में जायेगा तो वह जीवों इत्यादि का कारण और बनेगा। इसीलिये आचार्य उमास्वामी महाराजने

आलोकित पान भोजन हेतु कहा।

सूर्य-प्रकाश में ही अन्न पकता है तथा सूर्य प्रकाश में ही उसका सेवन करें। सूर्य के पकाव से अन्न में आता आता है। शक्तामर में पढ़ते ही ना? निष्पन्नशालिवन- - - - - जल भार नम्रे। फसल के पक जाने के बाद अब उन बाल्लों से क्या लाभ? मतलब सूर्यप्रकाश से शालि (धान पक जाता है। उसमें इल्ली आदि नहीं पड़ती। उसमें भी कमी आ रही है। आज परिपक्व हो ही नहीं पा रहा है।

परिपक्वता चारों तरफ से घटती जा रही है। बूढ़ो में परिपक्वता नहीं है तो बच्चों में कहाँ से परिपक्वता आयेगी। जब उम्र के अनुसार ये नहीं होगा, विचारों में भी परिपक्वता नहीं बचेगी तो क्या होगा? पंचमकाल के अंत तक अग्नि ही समाप्त हो जायेगी। चूल मिलेगा ही नहीं। कुंभि आदि कुछ नहीं होंगे। मिट्टी को खाकर ही काम निकालेंगे। न कपास होगा- न सूत। हथकरघा से कपड़ा भी नहीं बनेगा।

सब समाप्त हो जायेगा। ऐसे आप आदिवासी बनने जा रहे हैं पर मेरा कहना है आदिनाथ को भूलियो नहीं अन्यथा कुछ भी शेष नहीं रहेगा।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

Note: कूकर में भोजन पकता नहीं - फटता है। आप सब फटा हुआ भोजन खा रहे हो, क्या होगा, सोचो?"

रविवार
19-5-19 "ये कैसा भेदविज्ञान" प्रातः

जैसे आप लोग यहाँ पर बैठे हैं और सामने देख रहे हैं। उसी प्रकार भगवान के सामने किसी एक व्यक्ति ने पूँज चढ़ाया और चले गया। इधर से एक चिड़िया आ गई क्यों कि आपने तो अक्षय सुख पाने की कामना से चढ़ाया अतः खा नहीं सकते। चिड़िया ने तो त्याग किया नहीं था। वह सामने आ गयी। सामने आते ही उसके सामने एक चिड़िया और आ गयी।

ये कैसे हो सकता है? मैं पहले आयी थी इसने कहा। आप सुन रहे हैं न? आवाज पहुँच रही है न? हाँ हम आवाज को कम कर लेते हैं इतनी आवाज की आवश्यकता नहीं थी। तो वो भी आ गयी। सुबह-सुबह रेस चालु हो गयी। ये पीछे करने की सोचती है तो वह भी यही सोचती है। इसने उसको पीछे हटाना चाहा किन्तु उस टक्कर से इसे ही पीछे हटना पड़ा।

जब जोर से हटाना पड़ा तो इसने अपनी चोंच मार दी। चोंच मारते ही थोड़ा सा दर्द तो हुआ और खुन भी निकल आया। अब इसको गुस्सा आ गया। हम छोड़ेंगे नहीं। इस प्रकार करते-करते वह शक्ति क्षीण हो गयी। नीचे गिर गयी। गिरकर पड़े-पड़े ही देखा सामने वाला

भी गिर गया है।

मेरे पास देखने की हिम्मत नहीं है तो उसके पास भी देखने की हिम्मत नहीं है। वे देखने लगी तो वो भी देखने लगी। आप समझ रहे हैं? समझदार तो है ही। उस चिड़िया ने जो दर्पण में सामने दूसरी चिड़िया दिख रही थी उसे दूसरा मान लिया। यही उसके दुःख का कारण बना। अर्थात यह भेद विज्ञान भी दुःख का कारण हो गया। वह उसी का प्रतिबिम्ब है।

संसारी प्राणी इसी तरह प्रतिबिम्ब देखता है तो मानता है यह दूसरी चिड़िया आ गई है। बस भेद विज्ञान हो गया। सुन रहे हो? [हाँ] भेद विज्ञान भी कई प्रकार के होते हैं। होसकते हैं। ऐसा यह भेद विज्ञान है जो नरक निगोद का कारण बन जाता है। भेदस्य ज्ञानम् इति भेदविज्ञान। इसमें बहुत अन्तर है। "पोथी पढ़ लेने मात्र से भेदविज्ञान नहीं होता है।" जैसे चिड़िया ने दर्पण में चोंच मार-मार कर अपना हाल कर लिया।

वह दूसरी चिड़िया को देखकर डर गयी (इस कारण उसकी ऐसी दशा हुयी। गिर गयी। आप समझ लो क्या-क्या प्रतिफलता - अनुफलता हो सकती है। परन्तु उन सबमें प्रवाहित नहीं होना है मैं ही प्रभावित होना है। अध्यात्म ग्रन्थों में उसी भेद-

विज्ञान का वर्णन मिलता है।
इसे समझना अति आवश्यक है।
भेदविज्ञान अध्यात्म ग्रन्थों में तो पढ़ लिया किन्तु इससे पूर्व रत्नकरण्डश्रावकाचार की शरण में जाओ तो अच्छा होगा। तभी सही निर्णय पर पहुँच पाओगे। अपने आप निर्णय कर लेना ये भी खतरनाक होता है। इस प्रकार हमने संक्षेप से चिड़िया को लेकर अपनी बात रखी। आज रविवार है - गर्मी के दिन हैं, इसीलिए इतनी संख्या में अभी प्रातःकाल में उपस्थित हो गये।
मध्याह्न में आ नहीं पाते। (निवेदन)
देख लेते हैं। हमें आप लोगों पर भरोसा तो है ही नहीं। फिर भी अभी तो है दिपा देखो।
(अहिंसा परमो धर्मकी जय)

"आँख में नींबू का रस"

"बात अजमेर की है जब आर्यिका को भयंकर आँखो में इनफेक्शन हो गया। आइफ्लु आ गया। एक वैद्यजी आये उन्होंने नींबू का रस आँख में डालने को कहा। आर्यिकाने स्वीकार कर लिया। नींबू को चाकू से न काटकर किसी लकड़ी अथवा चांदी से छेद कर आंख में एक-एक बूंद टपका लो। आर्यिका की आँखे बिल्कुल ठीक हो गयी। वे कहते हैं यदि आँख में जाला अथवा चश्मा भी हो तो सब ठीक हो जायेगा। साथ तेल अथवा घी कपूर अथवा हल्दी (नींबू से भावित) लगाना भी लाभप्रद है।"

20-5-19 "येन केन प्रकारेण से बचो" सोमवार

आप लोगो ने इस दृश्य को देखा होगा भ्रमर के समान दूसरा भी एक चौइन्द्रिय प्राणी होता है। वह भी भ्रमर के समान काला होता है एवं पंखो के माध्यम से उड़ता है। भ्रमर को मकरन्द प्रिय होता है। फूलो की सुगन्ध हेतु वह उड़ता है। जहाँ उसे सुगन्ध प्राप्त हो वहाँ तक चला जाता है। इसीप्रकार का वह दूसरा एक जन्तु, उसे क्या बोलते है, वह मल पर भी बैठ जाता है।

वह मल को लेकर जाता है। उसका नाम... गुबीला है। आप लोग समझ नहीं पाये। दोनों समान जाति होते हुये भी दोनों में महान अन्तर है। भ्रमर भूलकर भी मल पर बैठता नहीं और दूसरा मल को भी ग्रहण कर लेता है। दोनों चौइन्द्रिय है। भ्रमर गंध भेद को लेकर चलता है तो यह सामान्य गन्ध को लेलेता है। भ्रमर को कितना भी दूर क्यों न जाना पड़े परन्तु फूल पर ही बैठता है।

ये उदाहरण इसलिए दे रहा हूँ कि हर बात में विभाजन होना चाहिए। पाँच इन्द्रियों के योग्य जो साधन है वही जुटायें, पुरुषार्थ कर उत्पादन करें जिससे वस्तु की प्राप्ति भी हो तथा जीवन को अच्छे ढंग से चला सकें। इस तरह से जीवन यापन में कोई बाधा नहीं आयेगी। आपको

धर्म - अर्थ - काम पुरुषार्थ की छूट दी गई है।

छूट का मतलब ऐसा पुरुषार्थ जो अनन्त संसार का कारण न बनें। इन तीनों [धर्म अर्थ - काम] पुरुषार्थों से वह अनंत भी परित हो सकता है। इसमें नीति - न्याय लगा है। विषयों की सीमा हो जाती है और साथ में विषयों की गृद्धता भी घट जाती है। ये ऐसे प्रबल कारण है। जैसे - जैसे धर्म का अनुभाव होता जाता है, वैसे - वैसे अधर्म से अलगाव भी होता जाता है। इसीलिए संतो ने कहा - पूर्ण धर्म नहीं एकदेश में भी अधर्म से जुड़ाव समाप्त हो जाता है।

अधर्म से जुड़ाव तो धर्म संज्ञा भी कलंकित हो जाती है। जो धर्मात्मा होता है, भले ही एकदेश धर्म का पालन कर रहा हो किन्तु येन - केन - प्रकारेण अधर्म नहीं करता है। वह जीवन का निर्वाह निर्माण के लिए करता है। उसका सुरन उसी दिशा की ओर होता है जहाँ मंजील हो।

कोई भी व्यक्ति पूर्व से पश्चिम की ओर जाना चाहता है तो वह भिन्न - भिन्न वाहनों से जा सकता है किन्तु दिशा उसकी भिन्न नहीं हो सकती एक ही दिशा होगी। हाँ! गति कम (धीमी) हो सकती है। जैसे - साइकिल, मोटरसाइकिल कार, बस, रेल विमान से जाते हैं। कोई हमारे ही तरह पैदल ही

जाता है। [तालियाँ]

आप सावधानी से हमारी बात सुन रहे, ये आपही की तालियाँ बता रही हैं। कुछ समय भले ही ज्यादा लग जाये, रास्ता ठीक पकड़ा है। देर हो जाये कोई बाधा नहीं, अंधेर नहीं होना चाहिए। सही दिशा में कार्य करने से ही ये संभव है। तो ये पंचेन्द्रिय विषयों के चक्कर में पड़कर येन-केन-प्रकारेण वस्तु का उत्पादन नहीं करेंगे। न ही येन-केन-प्रकारेण उपभोग करेंगे।

जो भक्ष्य पदार्थ है उसका ही जीवन करेंगे। ये उदाहरण हमने गुरुजी के मुख से सुना था। राजस्थान की बात है। नाम याद नहीं आ रहा था। आसपास में रहने वालों ने बता ही दिया - गुहीला। धर्मात्मा/श्रोता रूप में जो भी बैठे हैं उनके सामने प्रासंगिक/सटीक उदाहरण रख दिया। येन केन प्रकारेण कुछ भी उपयोग नहीं करेंगे। कुछ मक्खियाँ भी ऐसी होती हैं, जो गंदगी, मल पर ही बैठना पसन्द करती है। यहाँ तक की कफ-थूक आदि में फँसकर अपने प्राण गवाँ देती है।

ऐसा जीवन न हो, भ्रमर की भांति जीवन हो। अभक्ष्य का भक्षण न हो भक्ष्य का ही भक्षण हो। यह भी धीरे-धीरे वहाँ तक पहुँचाने वाला है। समय लगेगा। पर दिशा नहीं बदलो। सीधे-सीधे जाओ भले ही लटकत जाओ। भटकत नहीं जाओ।

अहिंसा परमो धर्म की जय। ॐ

21-5-19 नमक की डली मंगलवार

आप लोगों ने.. चूंकि यह वर्तमान में अनेक प्रकार की साधन सामग्री होने से इससे अपरिचित होंगे। मुझे वह याद आ रही है, आप सुनना चाहेंगे? हओ। कोकट में मिल रही है। यदि यह बात आप तक पहुँच जायेगी तो इसे स्मरण में रख सकते हैं, तथा गर्मी के समय भी औषधोपचार किया जाता है। तो वह बात यह है। वह कुछ भी दूध आदि आम के साथ या अन्य के साथ मिलकर तैयार किया और उसे जमाने के लिए रखा है।

उसको जमाने में जो सहायक तत्त्व (बर्फ आदि) हैं वे भी रखे गये। एक-एक समय की हमने जानकारी ली है। जैसे- पत्रकार लेते हैं। जानकारी लेना भी चाहिए। एक बात यह अच्छी लगी कि सारे के सारे पदार्थ गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए ही होते हैं घटाने के लिए नहीं। वह व्यक्ति घुमा रहा है तो एक व्यक्ति उसके पास नमक की डली रखता जा रहा है। व्यवस्थित करता जा रहा है।

हम भी खड़े होकर उस दृश्य को देखते रहे। सोचा ये क्या कर रहा है। नमक को दूध के पास ले जा रहा है। निश्चित है अब तो इसका वह दूध कहेगा ही। कल नहीं परसों कहा था- "द्वेष से बचो, लवण दूर रहे, दुग्ध न फटे" भूल गये क्या? गर्मी बहुत तेज

होने के कारण भूखा गये होंगे?

ये तो निकट रख रहा है, डली पे डली रखता चला जा रहा है। बहुत कंजूस है किन्तु समझदार व्यक्ति है। उसने कैतली से टच (पास) करके रख रहा है। पूरी लाइन भर दिया, वह घुमाता जा रहा है। अब मेरी उत्सुकता पहले से बढ़ गयी। मैंने भी जितना समय देना था दे दिया। उस वस्तु को सभी व्यक्तियों को बाँटना प्रारम्भ कर दिया। मैं लोगों की अभिव्यक्ति क्या होती है यह देखना चाहता था। लोग उसका उचित मूल्य देकर खरीद रहे थे।

कोई भी बोल नहीं रहा था, परन्तु सबकी मीमांसा तो हमें उनकी मुख मुद्रा से दीख रही थी। नमक के कारण किसी के भी मुख पर सिकुड़न नहीं थी। कभी खाई है नमक की डली? तो क्या त्याग है? त्याग है तो बता दो। महाराज! त्याग तो नहीं हैं पर कोरा नमक नहीं ले सकते। हमारी प्रतिज्ञा है, बिना नमक का तो हम देख नहीं सकते। ऐसे व्यक्ति को भी सामने रखना आवश्यक है।

धीरे से पूछा- इस नमक से क्या होता है? उसने बताया जो भीतर रखा है वह जमने में यह कारण होता है। खाली नमक कोई नहीं लेता, किन्तु यदि भूल से नमक न डालो तो क्या होता है? विस्मरण शक्ति बढ़ गयी है और ज्यादा डाल दिया तो

क्या आज रविवार है?

इस प्रकार वह नमक जीभ में कारण बनता है। इसी प्रकार कुन्थुनाथ भगवान की स्तुति करते हुये समन्तभद्र स्वामी ने लिखा -

"बाह्य तपः परम दुश्चरमा चरंस्त्व, माध्यात्मिकस्य तपसः परि बृंहणार्थम्" हे भगवन् आपने भीतरी तपों को तो अपनाया ही है, बाहरी को भी अपनाया है, क्योंकि भीतर तप की अभिवृद्धि के लिए। नमक की भांति। आप सुन रहे हो? हिओ! धन्यवाद आपने चीर चीर ताली बजायी। मेरे कहने से बजायी मतलब आप बुद्धिशील हैं। जो कवि है अवो है देना क्यों की उन्हें ताली की भूख रहती है। आज बैठें भी है।'

जो अकेले नमक को चाह रहा है वह मात्र बाह्य तप को तप रहा है। अकेले बाह्य तप से मुक्ति मिलने वाली नहीं। और बाह्य तप से तुष्ट होता नहीं ऐसी मानसिकता वालों को भी संतुष्ट करना बड़ा कठीन है। भीतर का जो संबंध है वह उसी बाह्य से बना है तभी कर्म निर्जरा होती है। यदि ऐसा नहीं मानोगे तो फिर उन्हीं भगवान रह जायेंगे। कुन्थुनाथ भगवान कम हो जायेंगे।

इसलिए हे भगवन् केवल आभ्यन्तर ही नहीं बाह्य तप भी प्रशंसनीय है। ध्यान रखो: बाह्य तप जैन धर्म/दर्शन से बाह्य नहीं है। इसमें से

6 बाह्य तप रखें हैं।

हाँ! यदि भीतरी तप नहीं तो भी कोरा शरीर सुखाना मात्र रह जायेगा। इसके द्वारा 31 सागर की आयु पाकर वैक्रियिक शरीर धारण कर रह सकता है, इससे आगे नहीं जा सकता। शुद्धात्मानुभूति का अनुभव बहुत दुर्लभ है परन्तु उसके लिए दुर्लभ नहीं जो बाह्य के साथ - साथ भीतरी तप को अपनाता है।

आजकल के स्वाध्यायशीलों को समझना है यदि आचार्य समन्तभद्र स्वामी को समझना चाहते हो तो/उन्हें प्रसन्न रखना है तो नमक की इसी को समझना आवश्यक है। हाँ नमक को भूलकर भी भीतर नहीं रखना। दूध का अलग ही स्वाद आता है। भीतरी - बाहरी की उपेक्षा नहीं करना चाहिए। उसे भी आसन देना पर बाहरी आसन पर ही स्थापित करना चाहिए।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

संस्मरण

"आ० श्री बचपन से ही प्रतिभावान एवं शास्त्र स्वाध्याय के प्रति रुचि रखते थे। इसी कारण जहाँ मुनिमहाराज के अलावा कोई श्रावक नहीं बैठता था, वहाँ विद्याधर को बैठने मिल जाता था। अनंतकीर्ति एवं महाबल महाराज के संघ में अध्यात्म ग्रन्थों के स्वाध्याय में आप बैठते थे। कोई मना नहीं करता था।"

22-5-19 "कैसे करें पहचान असली हीरे की" बुधवार

राजा महाराजा के पास कुछ ऐसे भी रत्न रहते हैं जो दुनिया की समस्या को हल करते हैं। राजा भले ही उस समस्या को हल न कर सके पर समस्या तो आती है। ऐसा ही एक प्रसंग आया। हीरे के परखने की बात आयी। आप समझते हैं कि कई लोग अपने अंगूठे में हीरे की अंगुठी बनाकर पहनते हैं। उन्हे क्या ये मालुम है कि ये असली हैं या नकली?

महाराज विश्वास करना पड़ता है। ऐसे कैसे आप एक करोड की कीमत की जगह हजार रुपये दे रहे हो, तो क्या वह असली होगा? इतने से रुपयों में कौन सही देगा? कोई नहीं। अन्तोगत्वा सही पहचान नहीं कर सकते। पहनना अलग वस्तु है, उपयोग करना अलग वस्तु है। उपयोग द्वारा सही पहचान नहीं हो पाती, मोक्षमार्ग में भी ऐसा ही घटित होता है। तो उस दरबार में एक व्यक्ति आया। उसने कहा इनमें से असली की पहचान करके बता दो, मैं उसे इनाम भी दूंगा।

उसने कीमत भी बता दी इसकी इतनी, इसकी इतनी। राजा कहता है - मेरे पास तो एक से एक व्यक्ति है। हाँ होंगे अभी तो 10 नहीं एक ही बता दो जो सही-गलत की पहचान कर सके। 100 लोग तो ही गये जो सही हीरे की पहचान नहीं कर पाये। सबने गलत

समीक्षा कर दी।

आप गलत कैसे कह रहे हैं? आप भी तो गलत हो सकते हैं। उस व्यक्ति ने जितने भी लाइन से रखे थे उन पर मक्खियाँ भिनभिना रही थी। पचासों पर एक-एक मक्खी बैठ गयी। मतलब हीरे की परख मक्खीयाँ भी करती है। यदि हीरे का रूप मिश्री की डली को दे देंगे तो क्या नहीं होगा? एक ही हीरा है उस पर एक भी मक्खी नहीं बैठी। मिश्री को हीरा मान लिया किन्तु प्रयोग करके देखा तो सब असलियत पता लग गयी।

[देखो मंगलाचरण करके बैठे; आप प्रवचन सुन रहे है या फोटो ले रहे हैं। विदेश में ऐसा नहीं होता। यह मोबाइल कितना हानिकारक है पता भी है या नहीं। संज्ञी पंचेन्द्रिय तक का वध होता है। धार्मिक सभा की मर्यादा रखो।]

तो उस पारखी से पता लगा लिया कि ये मिश्री है और ये एक मात्र हीरे की कणिका है। ये तो लौकिक पहचान की बात हुयी। जब अध्यात्म की बात आती है तो वहाँ भी समस्या खड़ी हो जाती है। आचार्यों ने सम्यग्दृष्टि की पहचान हेतु ज्ञान को नहीं श्रद्धान को मुख्य माना है। ज्ञान में तो प्रश्न चिन्ह रखा है। हो भी सकता है और नहीं भी हो सकता है। दो बातें कहना चाहूंगा। आगम में संतों ने इसी नाम

सम्यग्दर्शन कहा है।

जब ज्ञान की बात आती है तो 11 अंग और 9 पूर्व के साथ भी सम्यग्दर्शन की व्याप्ति नहीं हैं। महाराज द्वादशांग में 12 अंग 14 पूर्व तो होते ही हैं। इतना होने पर (11 अंग 10 पूर्व) भी [भिन्न 10 पूर्व] सम्यग्दर्शन नहीं। आगम में ही कहा है, "द्रव्यश्रुत के साथ सम्यग्दर्शन की कोई व्याप्ति नहीं है।" द्रव्य श्रुत का हो जाना अलग वस्तु है एवं श्रद्धान का होना अलग वस्तु है।

बिल्कुल वैसे ही जैसे मिश्री की डली में भी पहलु है पर हीरे की कणिका नहीं हो सकती। कुछ ही देर में मक्खियाँ / चीटियाँ लग जाती है। सम्यग्दर्शन के बिना सम्यग्ज्ञानी नहीं हो सकता न ही सम्यक् चारित्री। भले ही बाहर से कुछ भी लिंग धारण कर ले। आगम में 10 पूर्व तक का ज्ञान फिर भी सम्यग्दृष्टि नहीं, ऐसा क्यों कहा? उत्तर दिया वह भी विद्या से प्रभावित हो सकता है। होता है।

जो सम्यग्दृष्टि होगा वह प्रभावित नहीं होगा। 10 पूर्व में प्रवेश करने पर अनेक विद्यायें प्राप्त हो जाती है। देवलोग भी आकर खड़े हो जाते है। यदि वह विद्याओं से प्रभावित हो जाता है तो मिथ्यादृष्टि कहलाता है। प्रभावित नहीं हुआ तो सभी देवगण उस श्रुत की पूजा करते हैं। वह सम्यग्दृष्टि

को ही प्राप्त होता है।

इसके अलावा एक और पहचान का हेतु है। आपकी चर्या चलती रहती है इसके पास सम्यग्दर्शन है- ये है, वो है ऐसा कुछ नहीं। हीरे की भांति बैठ जाओ। [क्यों आप टिकिट लेकर आये हो क्या? प्रवचन के समय तो नहीं करना चाहिए। (फोटोग्राफर से) किसी ने बोला होगा मेरी उसी समय फोटो उतारना। नियुक्त किया हो किसी ने तो बता देना - बैठ जाओ] हमारे पास सम्यग्दर्शन है या नहीं यह पहचान आप-हम नहीं कर सकते।

अभी ही नहीं पहले भी यह व्यवस्था नहीं थी। छद्मस्थ अवस्था में मुनि भी-श्रुतकेवली भी क्यों न हो नहीं बता सकते। क्यों कि जो प्रत्यक्षज्ञान का विषय है वह परोक्ष ज्ञान वाला कैसे बता सकता है। केवली के अलावा गणधर परमेष्ठी भी नहीं बता सकते की ये भव्य है या अभव्य। अभव्य वह है जो आज भी मुक्त नहीं और आगे भी नहीं होगा। अभव्य के समान भव्य भी आगम में बताया है।

ऐसा कौन है जो दूसरों को तो अभव्य कह दे एवं अपने को सम्यग्दृष्टि कह दें। ऐसा कहने वाले का आगम भी घरूला ही है, वास्तव में आचार्यों का ऐसा कहना है ही नहीं। मुनिमहाराज भी कभी ऐसा कह ही नहीं सकते,

कि ये सम्यग्दृष्टि हैं या मिथ्यादृष्टि।

हाँ! इतना वे आचार्यों के उपदेश अनुसार ही कहते हैं। चिन्ता मत करो। अभी तक मैं संसार सागर में रुलता रहा, अब मिल जाये। हे भगवन् आपने कैसे खोजा? आप धन्य हैं। भीतर से गद्गद् भाव करता है तो संभव है उसे उस सम्यग्दर्शन की प्राप्ति हो जावे। ऊपर-ऊपर से नहीं होना चाहिए। इतना ही कहना है। गर्मी में भी दूर-दूर से आये हैं। इसे समझने का प्रयास करेंगे।

भगवान भी भव्य को अभव्य एवं अभव्य को कभी भी भव्य नहीं बना सकते। आप स्वयं ही मात्र अपने भविष्य के जिम्मेदार हैं। कोई दोष-बड़ा नहीं न ही आगे-पीछे का है इसे भी ध्यान रखें।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

"मूलाचार पढ़ाते समय"

"पूज्य आर्यिका ने कहा कि जीवन में जो व्यक्ति जहाँ पर है वहाँ अपना एक लक्ष्य / उद्देश्य / साध्य निर्धारित कर लो। अब वह जो भी देखे - सुने - बोले - मन में विचारे या करे इन पांचों में यह पहले देख ले कि क्या ये मेरे उद्देश्य में सहायक हैं अथवा नहीं। यदि नहीं है तो उसे कभी भी न देखे, न सुने, न बोले, न सोचे और न करें। इन पांच को सदैव याद रखें - देखना - सुनना - बोलना - सोचना एवं करना"

23-5-19 "कमाई का साधन" गुरुवार

ये भारत भूमि है और यहाँ पर शारीरिक, वाचनिक एवं मानसिक तीनों पुरुषार्थ किये जाते हैं। सबसे ज्यादा कहीं शारीरिक पुरुषार्थ फिर वाचनिक, मानसिक पुरुषार्थ में कमाई नहीं हैं। बस जो अशुभ में लगा है उसे शुभ में लगाना होता है। भारत ही एक ऐसा देश है जहाँ इस प्रकार का मंत्र बताया गया है।

जैसे किसी व्यक्ति को हजारो किमी० दूर किसी सर्प ने काट लिया। अब वह गारुड़ मंत्र को जानने वाला यहीं से मंत्र स्मरण करेगा, वहाँ दूर बैठे व्यक्ति का विष दूर हो जाता है। आपको भी करना है ऐसा? हमें कितनी जल्दी कह दिया। यदि ऐसा करना है तो मन को शुभ विचारों से भरना होगा। वचन एवं काय से भी वैसी ही प्रवृत्ति करना होगा।

मोह को कम करके यहीं बैठे-बैठे उन सभी लोगों के निरोग होने की कामना करना चाहिए। आपकी भावना वहाँ तक अवश्य पहुँचेगी। पुण्यायु इसीलिए खोला जा रहा है। जहाँ मानसिक-वाचनिक-शारीरिक तीनों दान आप दे सकें। समय आपका आज ज्यादा हो गया है। आपको गर्मी न लगे, इतना ही।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

24-5-19 "उद्यम से मिटे जगत फेरा" शुक्रवार

सभी लोग कानों से सुनते हैं पर कुछ लोगों के पास उपकरण मात्र बाहरी कान है श्रवण नहीं होता। श्रवण एवं श्रमण दोनों निकटवाची शब्द हैं। सुनने वाला श्रमण होता है। जिससे सुना जाय वह श्रवण इन्द्रिय (कान) है। इसप्रकार यह श्रवण की क्षमता अद्भुत होती है।

सुनते तो सब लोग हैं पर सुनने का सार तब है जब उस पर ध्यान जाये। श्रवणइन्द्रिय का काम है मात्र शब्द को ग्रहण करना। मन को भी उसमें काम में लाते हैं। ये दोनों मिलकर एक काम करते हैं। तभी तो संज्ञी का अर्थ बहुत महत्वपूर्ण है। संज्ञी हुये बिना मोक्षमार्ग में कोई काम नहीं। इसीलिए शब्द को सुना नहीं पकड़ा जाता है। पकड़ने का काम मन का होता है।

बिना मन के आप स्वीकार नहीं कर सकते और बिना कान के आप शब्द को अर्थ तक पहुँचा भी नहीं सकते। समझ में आ रहा है? हमको कहने का मतलब ही है कि दोनों शक्तियाँ (कान एवं मन) काम कर रही है। जिस प्रकार घटायें जमीन पर न बरसकर पत्थर पर बरस गयी, क्या काम में आ पायी? इसी प्रकार सुनने में तो आया पर मन कहीं और था तो कुछ भी काम होने का नहीं। इसलिए मन को सदैव शब्द के पास ही रखो क्यों कि बड़ी कठनाई से शब्द का अर्थ समझ

में आ पाता है।

श्रुत का मतलब भी है- कानों से जो सुना वह श्रुत है। मन से जो अर्थ निकाला / प्रयोजन निकाला तो श्रुतज्ञान है। मोक्षमार्ग में प्रयोजनभूत को स्वीकार कर लेना होता है। हेय-उपादेय का ज्ञान श्रुतज्ञान है। सुनना मात्र ही पर्याप्त नहीं होता यह भी ध्यान रखें। जिनके पास श्रुत (सुनना) नहीं है वे मतिज्ञान से भी अर्थ निकाल लेते हैं। जिसे शब्द का अर्थ नहीं मालुम वह भी बोध को प्राप्त कर लेता है।

गोद का लड़का भी अर्थ ग्रहण कर लेता है। माँ अभी गुस्से में है तो वह भी दूध नहीं पीता। गोद में लेटे रहने के बाद भी चुस्की बजाती है, मुख से कहती है पी ले बेटा, उसमें भी आत्मीयता देखता है तो पी लेता है। तो काम हो जाता है। ऐसे ही सुनने के बाद हितकारक मान लेते हैं, मन से तभी हित होने वाला है। ऊलही-ऊलही से कुछ नहीं होगा।

कल ही एक व्यक्ति ने सुनाया- लोग बूढ़े को चाहते हैं- जवान को नहीं चाहते। (मोदी - राहुल) हमने कहा - "अनुभव सदा वृद्ध होता है। गोद का वह लड़का भी समझ रहा है यदि माँ नहीं चाहती तो हमें कोई प्रयोजन नहीं है। प्रतिदिन हम देखते हैं- इन्द्रियों के दास होने के कारण मन का सही दिशा में प्रयोग नहीं कर पा रहा है। ऐसी दशा में मैं उद्यम नहीं करता

उद्यम करता है।

उद्यम मतलब यहां-तहां प्रवृत्ति। और उद्यम का अर्थ है सही दिशा में सक्रीय होना। मोक्षमार्ग में उद्यम होने पर ही लक्ष्य की प्राप्ति संभव हो पाती है। गर्मी के दिनों में कान तो तैयार है पर मन कहता है - चलो। कितें? घरें। घर जाते हैं तो मन फिर कहता है - चलो। कितें? देयोदय। मन चीज ही ऐसी है घर पर हो तो देयोदय एवं देयोदय पर हो तो घरें की याद आती है।

इस मन को समझना बहुत कठीन है। यह प्रतिकूलता को थोड़ा सा भी सहन नहीं कर पाता है। कभी भी उखड़ जाता है। इसके बिना कोई काम भी नहीं हो सकता, ये भी सत्य है। यह अभिमान बहुत चाहता है। अभिमान का गोला है। इसे टिकाये रखना बहुत कठीन काम है। जैसे जब कभी कोई ड्राइवर गाड़ी को चढ़ाव (घाट) पर चलाता है तो उसकी आवाज एवं गति में परिवर्तन हो जाता है साथ ही पेट्रोल (तेल) भी बहुत खाता है।

इसको अच्छा पेट्रोल भी दिया फिर भी डर रहता है, कहीं पीछे न आ जाये/रुक न जाये तो जो क्लीनर होता है एक लकड़ी का गुटका हाथ में ही रखता है। रुकते ही क्लिनर पीछे वाले पहिये के साथ वह लकड़ी का गुटका रख देता है, तब जाकर कहीं

ड्राइवर सांस लेता है।

मन को भी इसी तरह गहरा संभालना आवश्यक होता है। २०-२० टन माल ड्राइवर दुबला-पतला फिर भी चढ़ाव में गाड़ी चढ़ा लेता है। आपको भी कहीं जाना है देख लेना। आपको संभालने वाला नहीं, मन तो कभी संभला हुआ रहता नहीं। दारु पीने वाला तो फिर भी संभल सकता है पर मतवाला संभल नहीं पाता। आपको किसे संभालना है। मन बड़ा खतरनाक है। नाक में ही खतरा है। मन हमेशा मनमाना करता है। उसको हमेशा संभालते रहो।

बहुत ही कहनाई से वह देवशास्त्र गुरु का स्मरण कर नमस्कार करता है। नमस्कार ऐसे ही नहीं करता, संभालना आवश्यक है। गोद का लड़का भी संभल जाता है। आपके लिए तो खर्चा करना होता है, उसके लिए तो मात्र चुटकी भर बजा दो। ऐसा वह होनहार बालक है। अन्तर्मुहूर्त मात्र लगता है।

इस प्रकार अन्तर्मुहूर्त यदि मन को बस में कर लिया तो समझो लक्ष्य को पा लिया। मोक्षमार्ग पर चलने की क्षमता आती है। इतना ही। कल से आपको भी १२ तप तपने हैं - ६ बाह्य तप हैं और ६ भीतरी तप हैं। ३ तपा तो है ही। १२ दिन का यह पाठ्यक्रम है। सेवा करते जाओ। असंख्यात गुणी निर्जरा का साधन है तो "तपसा निर्जरा च" इसी से मोक्ष को पाना है। अहिंसा परमो धर्मकी जय

25-5-19 "टिकिट संभालकर रखना" शनिवार

देखो अपने-अपने पुण्य से सबको फल मिला करता है फिर भी जिसके साथ संगति मिलती है उनसे विशेष रूप से फल और मिल जाते हैं। इसलिए जो व्यक्ति पुरुषार्थ करके अपनी संगति को अच्छी बना लेता है उसकी गति सुधर जाती है। हम कम समय मिला है उसमें बहुत बड़ा काम करना है। इसमें खर्चे की तो कोई बात ही नहीं है बस शुरुआत कर लें तो बहुत बड़ा काम कर सकते हैं।

तो दो अण्डों से दो तोतों ने जन्म लिया, बड़े हुये। कालान्तर में एक तोता वहाँ पहुँचा जहाँ अहित होता था। एक तोता वहाँ पहुँचा जहाँ स्वयं के हित के साथ-साथ और भी बहुतों का हित होता था। अब दोनों की संगति चालु हो गयी। एक तोते की संगति अच्छी नहीं थी, वह एक दिन योग से वह तोता जो सत्संगति में रहता था वहाँ आ गया। अब उन दोनों में कैसा संवाद होता है, उस पर ध्यान दो।

वहाँ एक महोदय आये। महोदय का मतलब पुण्य पुरुष, धर्म पुरुष, जिसमें स्वार्थ नहीं है परहित को ही चाहता है। वह संस्कृत में कहता है - भो कपि महोदयः! आइये-आइये। आपने तो इस आश्रम को पवित्र कर दिया। हमें तो फोकट में ही आप मिल गये, मांगने की जरूरत ही नहीं पड़ी। पूर्व में तपस्या की होगी, आज उदीरणा हो गयी

होगी तभी आप आये हो।

आइये आपका स्वागतम् है। आपही की प्रतिक्षा थी। आपको कैसा लग रहा है। शब्दों का ही तो खेल है। उससे भाव भी समझ में आ जाते हैं। वह महोदय भी सोचते हैं यह तोता होकर भी रटंत विद्या नहीं, भाव विद्या भी है। वह तोता जो खराब माहौल में पहुँचा था। ये कौन है? कहाँ से आया है? मेरी जैसी शक्ल का ही है, इसकी भी चोंच मेरी ही तरह लाल है। मेरे मुख से तो ऐसे प्रिय शब्द कभी आज तक नहीं निकले।

वह अच्छा तोता बोलता है, भाई तुम्हारा-हमारा नाता एक ही है। हम दोनों एक ही साथ अण्डे से बाहर आये। उसे भी जातिस्मरण हो जाता है। सब जान जाता है। अरे! क्या बतायें हम तो ऐसे-ऐसे स्थान पर रहे। ये बिगड़ गया था - सुधरने के लिए यहाँ पर आ गया। बिगाड़ना और सुधारना कभी-कभी जुगाड़ से भी होता है। अब आपके पास विद्या भी है। जुगाड़ से बहुत बड़ा काम हो सकता है।

इसलिये जुगाड़ का इस्तेमाल करो। महाराज जुगाड़ से तो हम यहाँ तक आये हैं। थोड़ा सा प्रयत्न किया है अब थोड़ा सा और आगे बढ़ जायें, तब तो हो सकता है। आपका भी काम हो जाये। अपने धन का उपयोग सत्कार्यों में करने पर आचार्यों का कहना है कि वह गुणित क्रम से फलता है। यह आप नहीं

भी चाहें तो भी होता है।

जुगाड़ में कमी तो कम मिलता है। पश्चाताप करने की अपेक्षा तोते की थोड़ी भी संगति कर लो। उस समय बड़े-बड़े आश्रम होते थे। द्रुर पेड़ पर बैठकर तोते भी, मैना भी गीता-पुराण आदि पाठ सुनकर याद कर लेते थे। इसी के माध्यम से व्रतों का संकल्प कर पंचम गुणस्थान तक की प्राप्त कर लेते थे। आप कहाँ-कहाँ पर खर्च कर रहे हो देख लो। सरकार भी कहने लगी है इस अपव्यय को बंद कर दो।

धन का सही उपयोग करोगे तो कईयों का काम हो सकता है। संकल्प कर लो, धर्म इसी का नाम है। धर्म से धन तो मिलता ही है साथ में अनादि से जो कर्म लगे हैं वे भी कट जाते हैं। हे भगवन् जब तक मुक्ति की प्राप्ति नहीं होती तब तक करता जाऊँ। इसलिए ग्रन्थों में आचार्यों ने कहा जब तक मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती तब तक स्वर्ग छूटेगा नहीं। ये ठीक है वहाँ संयम नहीं रहेगा, परन्तु मार्ग यही है। स्वर्ग में भी उच्च कोटी का देव बनेंगे।

वहाँ भी समवशरण की प्राप्ति होगी। आँखे बंद करते ही वहाँ पहुँच जाओगे। ये जुगाड़ यहीं पर कर सकते हो। टिकिट जब भी मिलेगा यहीं से मिलेगा - खरीद सकते हो। अभी तो मुफ्त मिल रही है। बस आपको विषयों की ओर नहीं जाना

है/दूर रहना है।

टिकिट के साथ आपने इतना पथ्य कर लिया तो आप भटक नहीं सकते। अभी संयोजक महोदय कह रहे थे, हम वहाँ से आये हैं। हमने सोचा ये तो दयोदय क्षेत्र से आये हैं। यदि इस प्रकार करेंगे तो आपको भी सीमन्धर भगवान मिलेंगे। कम खर्चे में बता रहा हूँ। बहुत सस्ता मिल रहा है। हम भी उपत कर दे रहे हैं। बाद में पश्चाताप होगा।

आपको धर्म को भूलना नहीं है। इस मनुष्य जीवन के एक-एक क्षण पवित्र कार्य की भूमिका के लिए मिले है। तिर्यञ्चों को भी ऐसा अवसर नहीं। आप तो कुछ ही भव में मुक्ति का लाभ प्राप्त कर सकते हैं, ऐसी गाड़ी है यह। सीधी मुक्ति नहीं है पर भटकाती भी नहीं है। ऐसी टिकिट खरीदो कहीं भटक न जायें। हम बहुत भटक कर आ गये है।

अब सीधे जा सकते है। देवगति से यहाँ आकर मोक्ष पा सकते है। भगवान से यही प्रार्थना करता हूँ कि टिकिट भर सुरक्षित रहे, बाकी सब काम तो होता चला जायेगा।

अहिंसा परमो धर्म की जय। नुँ

रविवार
२६-८-१९ "पार होने का मार्ग" प्रातः

नदी पार करने की कल्पना थोड़ी सी भयावह होती है। पानी भी बहुत है, वेग भी बहुत है, कैसे पार करेंगे? तैरकर पार नहीं कर सकते। पानी अपने तटों का उल्लंघन करना शुरु कर दिया है। ऐसी स्थिति में पार कैसे करें? वह तक तक तो पहुँच गया, किन्तु पानी तो फैलता ही जा रहा है। उसे उस पार जाना भी आवश्यक है क्योंकि खेती-बाड़ी उसी पार है।

यदि नहीं जाते हैं तो चला नहीं सकता क्यों कि किसान है। ऐसा देखा तो एक नाविक ने कहा - साहस रखो तो हम पार करा सकते है। नदी को देखते हैं तो साहस टूट रहा है। नाविक कहता है मेरी ओर देख लो नदी की ओर मत देखो। आपकी ओर तो देख ही रहें हैं तभी तो आस लगाये यहाँ खड़े हैं। कोई एक आगे हो जाये तो धीरे-धीरे सब आ जायें। सभी साहस करके बैठ जाते हैं। बैठने के उपरान्त नाव को चलाना है। जिस दिशा में जाना है उस दिशा की ओर नाव का मुख कर देता है।

ऐसे एकदम नहीं कर सकते धीरे-धीरे ही कर सकते है। प्रवाह तेज होने से डूबने की संभावना भी बन सकती है। बैठने के उपरान्त ज्ञात होता है कि थोड़ा-थोड़ा पानी भी भीतर आ रहा है। नाविक कहता है - कोई बात नहीं, थोड़ा आता रहे एवं निकलते रहे तो ठीक रहता है। सुन रहे हैं आप

सब लोग ? [हिओ]

पानी के आने को Income बोलते हैं, Out Come नहीं (outgoing), Income है। जिस अनुपात से आ रहा है उसी अनुपात से निकालता भी जाता है। निकालना प्रारम्भ कर देता है तभी वह सुरक्षित है। एक वह नाव होती है जिसमें छेद होता ही नहीं है, ऐसे व्यक्ति को निकालने की आवश्यकता नहीं। परन्तु छेद वाली नाव होने पर पानी भीतर आता है उसे बाहर निकालते रहने से भी दिक्कत नहीं होती।

बहुत बार देखा किसान ऐसा ही करते हैं। रत्नकरण्डश्रावकाचार में समन्तभद्रस्वामी ने नाविक को कर्णधार की संज्ञा दी है। यह बहुत महत्त्वपूर्ण व्यक्ति होता है। जैसे विमान आदि में 200-200 व्यक्ति भी बैठ जाते हैं, वैसे ही इस नाव में बैठे उन 200 लोगों के जीवन को वह कर्णधार ही सुरक्षित रखता है।

वह नाव तट तक आ गयी। अब नाव भी खड़ी है - नाविक भी खड़ा है। पानी का पूर तो बढ़ता ही जा रहा है। सबने एक साथ उस नाविक से कहा - धन्यवाद। "हमने सुना था भगवान ही तारक होते हैं पर भगवान की भक्ति करने वाला भी तारक होता है।" ये तो हमने उदाहरण दिया है, ताकि गर्मी बहुत है - मन लग जाये। अब आगे के विषय के लिए भी मन हो जायेगा,

समय तो नहीं हो रहा है नहीं?

आचार्य कुन्दकुन्द ने प्रवचनसार में इस नाविक की भाँति ही एक विशेषण दिया वह है- "तित्थारयन्ति लोगं"। शुद्धोपयोगी एवं शुभोपयोगी श्रमण इस लोक के निस्तारक हैं। इस ओर से उस पार लगाने वाले हैं। स्वाध्यायशील लोगों के लिए यह बहुत ध्यान देने योग्य गाथा है। उसमें बताया शुभोपयोगी श्रमण यद्यपि सास्रवा (आस्रव से सहित) होते हैं फिर भी वे शुद्धोपयोगी श्रमण की भाँति लोक से निस्तार करने वाले हैं।

ये शब्द आचार्य अमृतचन्द्र जी की टीका में लिखे हैं। लगता है कुछ लोगों की आँखों के नम्बर बढ़ गया है। उन्हें चश्मा लगाना होगा किन्तु उनकी आँखों को आचार्य कुन्दकुन्द अथवा आचार्य अमृतचन्द्र जी ही सुधार सकते हैं। जो इसे हाइलाइट नहीं करते और विपरीत अर्थ को ग्रहण करते हैं उनका भविष्य बहुत अंधकारमय है।

भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि उनको भी टॉर्च मिल जाये ताकि प्रकाश में कुछ दिख जाये। वे लोग कहीं न कहीं गलत विश्वास कर बैठे हैं। उनका यह आग्रह दूर होकर वे भी सत्याग्रह में आ जायें।" डूबती हुई इस नाव का इसी सत्य से निस्तार (पार) हो पायेगा आचार्य कुन्दकुन्द देव ने शुद्धोपयोगी एवं शुभोपयोगी दोनों

श्रमणों को निस्तारक विशेषण दिया है।

आज की यह बात आप सबके द्वारा जन-जन तक पहुँच जाये क्यों कि हमारी अपनी कोई पत्रिका तो है नहीं। हाँ! इधर-उधर नहीं देना योग्य व्यक्ति के हाथ में दे देना। स्वाध्यायियों को जरूर दे देना। आप सबको भी संस्कृत-प्राकृत भाषा की जानकारी होना आवश्यक है। जैन समाज में "अध्यात्म का घोटाला" इसीलिये होता है। वहाँ स्वतंत्ररूप से ऐसे श्रमणों को मोक्ष का आयतन कहा और उन्हें अनायतन मानना शुभोपयोगीयों की शोभा नहीं देता। ये उनका अक्षम्य अपराध है। जो अपराध को स्वीकार न करें वह अक्षम्य अपराध में आ जाता है।

शास्त्र को पढ़कर अपने अनुसार जो अर्थ लगा लेता है ऐसी संगति छोड़ ही देना चाहिए। ऐसे स्वाध्याय से शुद्ध होने वाला नहीं। आर्ष प्रणीत ग्रन्थों का शुद्ध भावों के साथ लिखा उसी अर्थ को हमेशा ग्रहण करना चाहिए। और "जिनको संस्कृत प्राकृत नहीं आती, उन्हें जिनको यह भाषा आती है उनके पास जाकर अध्ययन कर लेना चाहिए।" आज रविवार है, समय भी होगया। पार होने का मार्ग तो दे ही दिया।

अच्छे ढंग से सबके पास दे देना। "आर्ष प्रणीत ग्रन्थों का स्वाध्याय करने से चित्त एवं चेतन दोनों पवित्र हो जाते हैं।" ऐसे ग्रन्थों को मैं बार-बार प्रणाम करता हूँ।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

27-5-19 "ऋण चुकाऊँ जिन्होंने मुझे संभाला" सोमवार

रात में एक वृक्ष पर बहुत सारे पक्षी बैठे थे। ज्यों ही लाली फूटी त्यों ही सब तैयार हो गये। कहाँ जाना है? समवसरण तो दूसरे नम्बर पर आता है। अभी तो पहले कुछ है तो... (रहस्य)। वे सभी पक्षी चारों दिशाओं में चल देते हैं जो मिले जहाँ मिले की तलाश में। एक पक्षी दूसरे से कहता है - मैं तो आज नये स्थान पर जाऊँगा, वह भी बोला मुझे भी नये स्थान की ओर जाना है।

सबकी यात्रा प्रारम्भ हो गयी। "नया सबको अच्छा लगता है किन्तु वह भूलना नहीं चाहिए।" ये नया है पुराना ये भी ध्यान नहीं रहता, जिस दिशा में जा रहा हूँ उधर प्राप्त होगा कि नहीं, प्रायः कर ये सब भूल जाते हैं। एक पक्षी को लगा, अरे! इधर तो मेरी कभी दृष्टि ही नहीं गयी थी। दूसरा सोचता है - हाँ! यहाँ तो मेरा ही साम्राज्य है, कोई दूसरा आ ही नहीं सकता, वह देखता है पीछे भी उतना ही, सामने भी उतना ही दिखता है, नीचे कोई वृक्ष है ही नहीं, ऊपर कुछ भी नहीं आसमान है। कहीं पर भी अतिथी संविभाग हेतु कोई खड़ा ही नहीं है।

अब क्या करें? इधर देखें तो पानी उधर देखें तो पानी, नीचे देखें तो पानी, मैं बैठूँ भी तो कहाँ बैठूँ। धीरे-धीरे पंखों का बल भी कम होता जा रहा है। जो नया देखने का मोह था वह भी अब धीरे-धीरे खत्म होता जा रहा है। गाड़ी में पेट्रोल नहीं

तो कुछ नहीं दिखता।

घासलेट तेल ही सही कहीं तो पहुँच जाऊँ। इसी आशा में उड़ा जा रहा है। दूर देखा तो वहाँ आसमान छूने को है क्षितिज दिख रहा है। पंखों में बल लगाकर वहाँ पहुँच जाऊँ ऐसी भावना करते उड़ रहा है। वहाँ पहले से ही लोग खड़े थे। उन्होंने पक्षी को देखा और पक्षी ने उनको देखा। वह समझ गया कि ये लोग मेरी व्यथा को जान गये हैं। तुरन्त एक धोती फैला दी। पंखों का बल भी समाप्त हो गया था ही अंदर के बैठ गया।

"अन्यथा शरणं नास्ति - त्वमेव शरणं मम" वह आ गया उन्होंने भी लाड़-प्यार से उस पक्षी को लिया। यहाँ कोई स्थान था नहीं, ये तो भगवान ने ही लाड़-प्यार से उन लिया हो, सुरक्षा दे दी। इस प्रकार से व्यक्ति दूसरों को आश्रय देता है। कौनसे भावों से देता है? वो तो जहाज में ही थे और जहाज में ही रहना है। हाँ! जब मंजील पर पहुँचेंगे तब पहुँचेंगे।

उन्हे भी देखकर लगा कि पुरे आकाश के तले यह अकेला ही निकल पड़ा। हम इसके लिए क्या कर सकते है? "अब जले एतलां जनानाम् तव पाद युगलम्" भगवान् आपके चरण युगल कैसे है? संसार रूपी महासागर से घिरे हुये उस पक्षी की भांति जो लोग है उनके लिए मात्र आपके चरण ही शरण है। राशियों के पास राग के अलावा क्या

मिल सकता है?

रागियों के पास धर्मानुराग संभव है "धर्म के प्रति राग हो तो विषयों के प्रति अनुराग समाप्त हो जाता है।" इतना पक्का है। भगवान नहीं भी होते हैं तो स्थापना निक्षेप द्वारा स्थापित करके हम उस धर्म को चाहते हैं। सभी संसारी जीवों का कल्याण हो इसी भावित भावना से वे तीर्थंकर अथवा सामान्य केवली बनते हैं। उनमें बदले की भावना नहीं। अदला-बदली कुछ नहीं। जीवन बदल जाये बस इसी भावना से करते हैं।

अदला-बदली तो शुद्ध व्यापार है। हम भी कुछ कर देते हैं आप भी कुछ कर दो। बदले में क्या दोगे ऐसा उन व्यक्तियों ने नहीं सोचा और पक्षी ने भी - आप माँग नहीं रहे फिर भी मैं दे सकता हूँ। क्या? दुआ तो दे ही सकता हूँ। मुझे इन्होंने संभाल लिया।

ये कहना चाहते हैं कि जो कुछ भी किया / दिया धर्मानुराग से दिया। नहीं चाहने पर भी दिया। मांग नहीं रहा है, मांगेगा भी नहीं। ऋण लेकर आये हैं। यदि वे उपदेश आदि नहीं देते तो आज हमें कहाँ से मिल जाता। पहले भी बताया कि ते कहता है - "मुझे संभाला, उन्हें दवा दुआ दूं, ऋण चुकाऊँ" ऋण चुकाना है। आपको दिया कुछ भी नहीं। आपने जो

दिया वही हे रहा है।

ऋण को कुछ उतारना चाहता है। वह ऋण बहुत बड़ा है। उसे चुका दूंगा तो बोझ हल्का हो जायेगा। बोझ का बोध होना भी बहुत बड़ा सौभाग्य होता है। इसलिये उनका ऋण चुकाऊं, दवा-दुआ दे दें सिन्होने मुझे संभाला है।

अहिंसा परमो धर्मकी जय।

गुरुवाणी -

- अलसी बिना चीरफाड़ के होनेवाला सार्जिकल ऑपरेशन का काम करती है। कान के अन्दर से घाव को पुरा भरती हुये ले आयी।
- पिछले 50 वर्षों में अशुभोपयोग की बजाय शुभोपयोग की पिटाई ज्यादा हुयी है।
- शुभोपयोगी श्रमण के लिए छः बाते प्रवचनसार में आ० अमृतचन्द देव भी कह रहे है -

1. लोक का निस्तारक करने वाले।
2. धर्म की संज्ञा दी।
3. क्षयोपशम भाव कहा।
4. परम्परया निर्वाण की प्राप्ति कहा।
5. मोक्षायतन एवं 6. पुण्यायतन है।

- गुरुजी कहते है दूसरी प्रतिमा वाला बड़े-बड़े आचार्यों से भी अधिक प्रभावना कर सकता है। वह गाड़ी से नहीं गढवात से चलने वाला है।

28-5-19 "मेरा पर से क्या नाता है?" मंगलवार

अभी आप सभी सुन रहे थे (भजन) एक पंक्ति बहुत अच्छी है - "मेरा पर से क्या नाता है"। बहुत अच्छी लगी होगी? नाता - रिश्ता तो लगाना ही चाहिए। अब देखो एक दिन सामायिक में बैठना था। सामने एक व्यक्ति है, वह व्यक्ति मेरा परिचय - मेरा नाता सुधार रहा है। क्यों कि उसको अभी और काम करना है। आपलोग भी अच्छे ढंग से काम करते होंगे किन्तु जैसे रखना चाहिये वैसे नहीं रख पा रहे हो।

देखा वह बैठा - बैठने के उपरान्त अपना कार्य प्रारम्भ कर दिया। कभी दोनों हाथों को उठाकर एक दूसरे से थुं-थुं साफ करे कभी पैरों को उठाकर ऐसे करे (रगड़ रहा है) इसके उपरान्त पैरों को नीचे कर दिया। आपकी समझ में आ रहा है कि नहीं? बहुत अच्छा तो वह कौन है? मक्खी है। पर से मेरा क्या नाता है? दोनों पैरों को साफ करके अपने पंखों के ऊपर पैरों के माध्यम से साफ करना प्रारम्भ कर दिया। इस प्रकार करने के बाद मैं देखता रहा।

इस प्रसंग से बहुत बड़ा पाठ मिल रहा है। इसके उपरान्त वह उड़ गयी। हमें तो छोत भी नहीं हुआ। यदि अपने हाथों में - पैरों में धूल लगी हो तो पहले ठीकठाक कर लो। इसके उपरान्त पंखों को भी फैलाकर पोंछे से फटकार दिया। यदि पंख गीले

हो तो वहीं लुढ़क जाता।

जब चौके में कई बार ऐसा अवसर उपस्थित होता है तो सुदी श्रावक कहता है- जल्दी से राख ले आओ और छुरका दो। यदि उस समय आप उसे देखेंगे तो समझ जाएंगे। उस राख में तुरन्त पानी सूख जाता है वह हिलने लगती है- श्रावक कहता है देखो महाराज हिलने लगी। हम इशारा कर देते हैं- शांत रहो।

अब देखो उस मक्खी को ये ज्ञात है कि मेरे पंख गीले होंगे तो भारी होंगे और मैं उड़ नहीं पाऊंगी। पैर भी साफ होना जरूरी है। इसी प्रकार अपने ऊपर घटाओ (लगाओ) मेरा पर से क्या नाता है? कर्मों का नाता ही क्या रिश्ता भी साथ-साथ चल रहा है। आचार्य कुन्दकुन्द देव कहते हैं- "रत्तो बंधदि कम्मं, मुच्चदि कम्मेहिं रागरहिदप्पा ----

मैं अपने आत्म-तत्व को छोड़कर पराये किसी भी पदार्थ से नाता-रिश्ता नहीं रखूंगा। कोई भी परिग्रह नहीं रखूंगा। यदि कोई मेरे पास उपकरण भी हैं तो वह भी सामायिक के समय तो त्याज्य हैं। उनका भी त्याग करता हूँ। मेरा-तेरा सब समाप्त हो जाता है। मुनि महाराज जी को भी यदि मक्खी की तरह उड़ना है तो हल्का-फुल्का होना पड़ेगा। जो भी उपयोग करते हैं। साफ सुथरा बनाये रखना अति आवश्यक है। यह स्वयं के लिये तो लाभप्रद है ही, अन्य

के लिए भी लाभप्रद होगा।

इस प्रकार दो महिने तो हो गये? क्यों न हुओ कह रहे हो नहीं ना कह रहे हो? हँस रहे हो। हुओ तो कह दो। वाचना की बात आप लोगों ने कही थी। दो महिने से अधिक ही हो गये। ग्रीष्मकाल लगभग पूर्ण होने को है। तपा का भी आज चौथा दिन है। तपा के उपरान्त तो वर्षा चालु हो जाती है। फिर वर्षाकाल तो पास ही आ जाता है।

हमारे मुनि-महाराज कहीं छिपक न जायें इसलिये सावधानी के साथ नाता-रिश्ता रखते हैं। आप भी ऐसा ही नाता रखें ताकि यह परम्परा साफ-सुथरी बनी रहें। सब गतियाँ समाप्त हो जाये और अनंत काल तक वहाँ जाकर बैठ जायें। कहाँ जाकर बैठ जाये? जहाँ कहीं भी जाकर न बैठो इतना ध्यान रखो।

अहिंसा परमो धर्म की जय।

प्रवचनसार में मानी बनो

- मान करने से ही मुक्ति मिलेगी। मेरे से बड़ा कोई है ही नहीं, इसलिए वह दूसरों को देखता ही नहीं।
- मानी होता है वही मुक्त होता है और वही ज्ञानी होता है जैसे - हमारे भगवान
- सामान्य का प्रारम्भ तो हो चुका है, अब इसे संपूर्ण सामान्य बनाना है।

29-5-19 "शक्कर का चक्कर" बुधवार

आप लोगों को परिचय में आया होगा - गुड़ और शक्कर। गुड़ का महत्व कम है और शक्कर का ज्यादा क्यों कि गुड़ सस्ता है और शक्कर महंगा ऐसा आप सोचते हैं। जब कि शक्कर की अपेक्षा गुड़ में गुण ज्यादा होते हैं, स्वास्थ्य की अपेक्षा भी गुड़ अधिक श्रेष्ठ है। हम पैसा भी खर्च कर रहे हैं और स्वास्थ्य की भी नहीं है पर विज्ञान के युग में आज ऐसा ही हो रहा है।

गुणों की कमी को अच्छा नहीं मानते हैं। गुड़ स्वस्थ रह रहा है दूसरों को भी स्वस्थ रहने में कारण है तथा शक्कर का चक्कर ही ऐसा है जो स्वयं भी अस्वस्थ है और दूसरों को भी अस्वस्थ बनने में कारण है। यह सिद्ध हो चुका है गुड़ देशी है और शक्कर विशेष देशी मतलब विदेशी है। क्या कमी है इसे देखना होगा, शक्कर की मात्रा कम भी हो तो भी हानिकारक है, गुण में ऐसा नहीं अधिक भी हो जाये तो नुकसान नहीं करेगा।

गुड़ लाल होता है शक्कर सफेद झक कैसे हो गयी? जैसे महाविद्यालय में प्रवेश के पूर्व विद्यालय की यात्रा अनिवार्य है। शक्कर तक पहुँचने हेतु पूर्व की यात्रा अनिवार्य है। शक्कर थोड़ा भी ली शक्कर की बिमारी हो गयी कभी ये नहीं सुना होगा कि इन्हें गुड़ की बिमारी हो गयी। आप सभी समर्थन (ताली) कर रहे हैं, ऐसा लग रहा है। ऐसी कौनसी परिस्थिति आ गयी

जो शक्कर का उपयोग कर रहे हैं?

ये उपयोग नहीं ज्ञान का दुरुपयोग है। जो लाल था उसे शुक्ल लेश्या की तरह सफेद झक बना दिया - खून भी सफेद झक हो जायेगा। हर बात में विज्ञान को लगाते हो यह ठीक नहीं। आयुर्वेद में भी गुड़ को ही ध्यान दिया गया है। गुड़ के गुणों को समाप्तकर शक्कर बना दिया, वह अभिशाप सिद्ध हो रहा है। जो शक्कर खाता है वह पहले इंजेक्शन लगाता है। डा० को पूछना पड़ता है - क्या खायें? गम खाओ।

यदि शक्कर नहीं खाओगे तो स्वर्ग तो पक्का है क्यों कि ऊपर जो भी जाते हैं, इन्द्रिय विषयों पर नियन्त्रण रखने वाले ही जाते हैं। ऊपर-ऊपर के इन्द्रों में देख लें - सौधर्म-ईशान तक पीत लेश्या वाले फिर 12वें स्वर्ग तक पद्म वाले उससे ऊपर शुक्ल लेश्या वाले ही जाते हैं। धीरे-धीरे ऊपर जो पंचेन्द्रिय विषय से लगाव नहीं रखने वाले ही जाते हैं।

यदि विशेष अध्ययन करना चाहते हो तो आयुर्वेद की तरफ ही आना होगा। ऊपर-ऊपर आयु भी ज्यादा भोग सामग्री भी ज्यादा मिलती है किन्तु 12वें तक ही घातायुष्क होते हैं ऊपर नहीं। 16वें स्वर्ग से ऊपर मात्र परम शुक्ल लेश्या वाले ही होते हैं। इसप्रकार यदि सम्यग्दर्शन से रहित मुनिमहाराज भी हैं तो वे भी

इन स्वर्गों में जा सकते हैं/जाते हैं।

कभी आपने सुना- स्वर्ग में सुगर की बिमारी/जब की ऊपर-ऊपर के स्वर्गों में मीठा ज्यादा होता जाता है। जो पंचेन्द्रिय विषयों के अधिन हो जाता है वह इस प्रकार से नहीं प्राप्त कर सकता है। अकाल मरण का भी यही कारण होता है। दीर्घायु प्राप्त करना चाहते हो तो पूर्णायु संस्था के पास आकर विशेष जानकारी ले लो।

यदि बिमार नहीं पड़ना है और अच्छे ढंग से धर्म-ध्यान करना है तो जो विज्ञान की कमियाँ जान चुके हो उनसे बचना शुरु कर दो। शक्कर कोलोमीही होती है उसे विवाक्त बना दिया है। शोध होने पर भी खुल्लम-खुल्ला उपयोग हो रही है। महाराज क्या करें- आदत पड़ गयी है। हाँ लत पड़ गयी है मतलब लत पड़ जाने पर लात पड़ने पर भी वह छोड़ने को तैयार नहीं होता।

इसलिए आप सभी अपनी धारणा को ठीक (सुधार) कर लो। हमारे यहाँ गुड़ को सम्यग्दृष्टि कहा, शक्कर को कभी सम्यग्दृष्टि नहीं कहा, क्यों कि जो गुड़ में अच्छे-अच्छे गुण थे वे सब तो बाहर कर दिये। फिर भी गुड़ खाने वाले को गंवार समझते हैं। चाय भी गुड़ की बन सकती है। व्रत-उपवास करने वाले भी गुड़ को ले सकते हैं। शक्कर

नहीं ले सकते।

आज बिल्कुल विपरित हो गया। आहार-विहार को जानें। आयुर्वेद शास्त्रों को अच्छे होंग से पढ़े ताकि धर्माराधना कर सकें। मिथ्यात्व से बच सकें। गाँवों में जो रहते हैं वे गुड़ को चाहते हैं - शक्कर नहीं। देश-विदेश में जो भी शोध हो रहे हैं वे प्राचीन ग्रन्थों का आधार लेकर यदि नहीं करते हैं तो युं ही गलत निर्णय करते जायेंगे।

यदि आत्मा को प्राप्त करना है, तत्त्व-ज्ञान को प्राप्त करना चाहते हो तो इन प्राचीन ग्रन्थों का अध्ययन करना जरूरी है। अब तो गुड़-शक्कर में भेद को जान लेना चाहिए। समझ रहे हैं न? क्यों? एक बात और कह दूं। चौके में अब पुछा जाता है तुम्हारा फास्ट फुड का त्याग है कि नहीं? इसलिये फास्ट फुड का त्याग कर दें। जो फास्ट फुड है वह हमारे मिथ्याज्ञान को सम्यग्ज्ञान की ओर ले जाने वाले हैं। ऐसा ही आहार-पानी इत्यादि ले लेना चाहिए। इतना ही पर्याप्त है।

अहिंसा परमो धर्म की जय। नूँ गुरुवाणी चूणेरा जी में बहुत सारे ब्राह्मण विद्वानों के द्वारा जयदेव महाकाव्य पर संगोष्ठी हुयी। एक विद्वान ने विष शब्द की बहुत अच्छी व्याख्या की - जो डबल उपसर्ग सहता है वही "विष" बनता है।"

30-5-19 "पूर्णायु को अल्पायु करता अजीर्ण" गुरुवार

सुनते हैं जीर्ण नहीं होना भी अजीर्ण है। अजीर्ण को विष माना है। यदि पेट में हो जाये तो, खाया नहीं है, पेट हो जाये तो क्या कहोगे, बताओ? वह भोजन अमृत तो हुआ नहीं विष ही गया, होता ही गया/चला जाता है, ऐसे में कैसे करोगे? [ देखो नीचे से कोई लाइट आ रही है, हाँ! अब देखो उसने बंद कर दी। उनके लिए 5 हजार जुर्माना क्या? ऊपर बराबर है। छुपकर फोटो लेते हो/तभी तो ऊपर से नहीं नीचे से ले रहा है। लोग बिल्कुल डरकर आते हैं।

उनका यही लक्ष्य है। यदि सभी का लक्ष्य अच्छा हो तो हम भी समर्थन करते हैं। तो बात कह रहा था जीर्ण न होना अजीर्ण है। अजीर्ण कोई बिमारी नहीं यह तो बुलाई जाती है। जब एक व्यक्ति की बात मान लेते हैं तो फिर अजीर्ण होना प्रारम्भ होता है। आप सभी को जिव्हा को अच्छी मानते हैं न? हाँ महाराज! इसी से तो भोजन करते हैं - चर्वण करते हैं, स्वाद लेते हैं। भोजन भीतर चला जाता है।

तुम तो ऐसे ही काम करते रहो। यह रसना हमारी बहन है। राखी बाँधने वाली है इसके बिना कैसे होगा? वह कहती है तो नहीं मानना एक सीमा तक ही मानना। सीमा के बाहर माना तो जीर्ण नहीं अजीर्ण हो जायेगा। बेचारा वह पेट जो सारे भोजन

को पचाने वाला है।

उसकी कोई भी बात नहीं सुन रहा है, इसीलिए तो पुर्णायु की स्थापना होने जा रही है, बताते हैं। खाओ किन्तु खाते हुये जो कुछ भी खाया है वह पच जाये, पेट में बच न जाये। पेट में यदि बच जायेगा तो पुर्णायु नहीं मिल पायेगी। आपही देख लो सबके पास पुर्णायु हो सकती है। हम पेट की बात नहीं सुन रहे हैं। आगम की भी बात नहीं सुन रहे हैं। स्वस्थ व्यक्ति को पूछ रहे हैं आपका स्वस्थ होने का राज क्या है? वह कहता है- आप जैसे व्यक्तियों से दूर रहते हैं, यही हमारे स्वस्थ होने का राज है।

मतलब आप जितना खाना उतना तो खाना ही है साथ में दवाई और खाना है। कुछ लोगों की जिन्दगी खाने में कम दवाखाने में ज्यादा जा रही है, उन्हीं के लिए यहाँ व्यवस्था की जा रही है- ऐसा बताते हैं। क्या करें - अब व्यक्ति शुद्ध हवा भी नहीं खा पा रहा है, वह भी लेने के लिए दवाखाना जा रहा है। ऑक्सीजन का सलेण्डर लगा देते हैं। एक नली नाक में एक मुंह में एक इधर -- गंगा-जमुना-सरस्वती।

क्या करें? बोल नहीं पा रहे हैं। अजीर्णे अन्नविषम् ऐसा सुना था। मतलब अजीर्ण में अन्न भी जहर हो गया। पथ्य के साथ लिया पर लिया थोड़ा

ज्यादा मात्रा में। इसीलिए-

अतिमात्रा में, पथ्य भी कुपथ्य हो जाता है" (मांसी)। कितनी भी अच्छी रसोई क्यों न बनी हो किन्तु माँ कभी इस विषय में दया नहीं करती है। एक दोना है तो पाव से प्रारम्भ करती है। हाँ। चार आना देती है। माँ की पद्धति अलग ही हुआ करती है। चार आना को चार से गुणा करो तो 16 आना हो जाता है। अजीर्ण अन्नविषम कहा न? हओ कहने का वत लै लो। हमने भी तो आपही से सीखा है।

आज खाने की मात्रा ही बिगड़ गयी। यदि चार आना कोना खाली रह जाये तो फिर कहना ही क्या? पेट भी कहता है आज स्वास्थ्य अच्छा लग रहा है नहीं तो आफरा / अफरा / बाहर का बाहर भीतर का भीतर रहता है। अब महाराज क्या करें? अब तो एक ग्रास लेते ही जैसे पुना पेट भर गया लगता है। हओ थोड़ा ज्यादा लिया था उसी का असर है।

माँ इन सबको जानती है, इसलिए हमेशा इस बात को याद रखें अतिमात्रा में --- अधिक खाने से ही जीर्ण, अजीर्ण हो जाता है। अजीर्ण से जो अन्न अमृत है वही विष बन जाता है। संतोष के माध्यम से ही उस जिह्वा इन्द्रिय की आराधना करते रहो। क्योंकि दोनों बहनें हैं। रस शरीर के लिए आवश्यक है परन्तु अजीर्ण से कभी भी रस नहीं बन

जाता है।

शास्त्रों में "शरीर माद्यम् खलु धर्म साधनम्" कहा। शरीर को बनाये रखना भी जरूरी है परन्तु एकदम पहलवान भी नहीं बनना है। सुनते है जो जिन्दगी भर पहलवान रहा आज अपने तन पर बैठी मक्खी को भी भगाने में असमर्थ है। ऐसी दशा खराब हो जाती है। अब अतिमात्रा में खानाबंद कर दो। इतना ही ठीक है।

ज्यादा समय सोना भी ठीक नहीं रहता। अतिमात्रा में प्रवचन करना भी अच्छा नहीं। जब तक चलोगे नहीं तब तक इन शब्दों का जीवन में प्रभाव नहीं पड़ने वाला। अभी तो आप चल ही नहीं रहे जबकि इस समय तक तो भागना चाहिए। जिनवाणी यही कहती है। हम कम भी नहीं खिलाना चाहते है परन्तु ज्यादा भी नहीं खिलाना चाहते हैं। आपको अजीर्ण से बचाना चाहते हैं।

पेट में कुछ भी बचे नहीं अपितु जो खिलाया है वह सारा का सारा पच जाये। ऐसी तीर्थंकर सम चर्या हमारे जीवन में हो, इसी भावना के साथ।

अहिंसा परमो धर्म की जय। नं. गुरुजी अपनी आत्मा से अधिक गुण किसी के पास है ही नहीं इसलिए अपनी आत्मा ही रहो। "प्रवचार कक्षा में"

31-5-19 "स्वयंभू बनने का प्रयास" शुक्रवार

चारों ओर घना जंगल है और गर्मी का समय है, आसपास पुरा जंगल सुखा है। तपा तो चल ही रहे हैं अभी फिर क्या कहना था उस तपन के कारण आग लग गयी। वह आग किसी ने लगायी नहीं। जब अग्नि तत्त्व का प्रकोप ज्यादा हो जाता है तो अग्नि अपने आप ही बाहर आ जाती है। "काष्ठमध्ये यथा वह्निः" ऐसा आपने भी सुना होगा, हमने भी सुना। तो काष्ठ में अग्नि रहती है। वह अग्नि ही काष्ठ को जला देती है।

फिर कभी भी जला है? ऐसा भी नहीं है। सर्दी अथवा वर्षाकाल में दियासलाई की पुरी डब्बी खाली हो जाती है पर आग नहीं सुलगा पाते जब कि गर्मी में पुरा वन खाक हो जाता है। ये उदाहरण मैंने इसलिए दिया कि वस्तु का स्वभाव परिणमन करना है। आत्म तत्त्व भी परिणामी स्वभावी है। आचार्यों ने कहा अनन्तकाल से वह परिणमन करते आयी है। किन्तु ऐसा चमत्कारिक परिणमन अभी तक नहीं हुआ, आगे भी नहीं होगा ऐसा भी नहीं है।

आत्मा की एक स्थिति ऐसी भी बनती है, अपने आप परिणमन करते-करते स्वयंभू बन सकता है। स्वयंभू अर्थात स्वयं को उद्घाटित कर सकता है बिना किसी बाहरी निमित्त के। इसलिये निमित्त की ओर दृष्टि न डालो तो और अच्छा है। भीतर में

दृष्टि रखो जो उपादान है।

निमित्त को गौण करके भी वस्तु का परिणमन अनादि से चल रहा है आगे भी चलता रहेगा। अपने आप भी सम्यग्दर्शन, ज्ञान-चारित्र तीनों प्राप्त हो सकते हैं, ऐसी उपादान में शक्ति है। यहाँ बाह्यकाल को स्वकाल नहीं माना जाता है। वह पर्याय भीतर से भी उत्पन्न हो सकती है।

इस प्रकार जैसे वन में अग्नि अपने आप बिना लगाये भी लग सकती है उसी प्रकार उस भीतरी परिणमन के बारे में भी सोचना चाहिए। हाँ इतना अवश्य है कि ये सबको नहीं होता लाखों में एक वाली बात है। ऐसे भी अनेक सिद्ध परमेष्ठी हैं जिनके लिए कोई उपकार करने वाला नहीं मिला। उपादान इतना सबल था। प्रत्येक को ऐसा ही हो ये नियम नहीं। इसलिए आप मांगने की बात मत कीजिये। भीतरी जानने की बात करो तो बहुत सुन्दर है।

जब भीतर ऐसे परिणमन की संभावना है तो भावना तो भा ही सकते हैं। यदि माथा भी तप रहा हो तो भी गर्म हण्डी पर ही लगाने की आवश्यकता नहीं है। स्वभाव की ओर देखते ही एकदम गर्मी में भी ठण्डा एवं ठण्डी में गर्म लगने लग जाता है। केवली भगवान इसीलिये कोई आग्रह नहीं

करते हैं।

मैं इसे दे दूं। इसे सुना दूं ऐसा कुछ नहीं चाहते। सुन रहे हो आप? [हओ] सम्यग्दृष्टि बनाओ - जैसे वह बन ही जायेगा - हओ। इतना अवश्य है कि अच्छे कार्यों के लिए प्रेरणा दी जाती है। उसका परिणमन करना स्वभाव है। आत्मा का स्वभाव जानना - देखना है। वीतराग स्वभाव होने से वह अपने आप सिद्ध हो सकता है। इसके लिए कोई पैसे की आवश्यकता नहीं होती। पैसा यदि पास रखते है तो उसका त्याग करना भी जरूरी है।

रत्तो बंधदि कम्मं, मुंचदि जीवो विराग संपत्तो, एसो जिणोवदेसो, तम्हां कम्मेसु मारज्ज, ये भूल है। वस्तु का परिणमन तो होगा। राग - द्वेष नहीं करोगे तो भी होगा, करोगे तो भी होगा। ऐसा व्यक्ति अस्वयंभू ही बना रहेगा स्वयंभू नहीं। आपको क्या बनना है? हओ तो कहो? क्या गर्मी लग रही है? "दूसरे के माथे को नहीं अपने माथे को ठण्डा करो। यह आदत बन गयी अब अपना माथा कैसे ठण्डा कर पाओगे। आचार्य उमास्वामी महाराज ने सम्यग्दर्शन ज्ञान-चारित्र निसर्गज भी होते हैं ऐसा कहकर इसी बात की सिद्धि की है।

गर्मी बहुत ज्यादा है, इसलिए परिश्रम न करो। निसर्गज सम्यग्दर्शनादि अपने आप में बहुत रहस्यपूर्ण है। इस प्रकार से जो करने - करने अथवा मैं करूं - मैं करूं का भाव करना गलत है। मैं कौन हूं? यह चिन्तन करो। इस प्रकार के करने

से वस्तु-स्वभाव के समीप पहुँचा जा सकता है।

कानों में यही मंत्र फूंकना होगा ताकि संस्कार ढलते चले जायें। अपने कान में भी फूंकना होगा। जब दूसरे का काम नहीं आ सकता तो पुलटे के (अपना) काम नहीं आ सकता ये भी लगाओ। फिर विदेशों में जाकर शिविर क्यों लगा रहे हो? (व्यंग्य)" स्वाध्याय करने वालों से कहना है - अपनापन मत लो अपना तो स्वपना है, सपना नहीं। जब आपही अपने पर दया नहीं करते हो तो भगवान अथवा गुरु आप पर कैसे दया करेंगे।

आप स्वयं निर्दयी हैं। आपको अच्छा लग रहा है या नहीं। आप स्वयं पर दया करोगे तभी आपका नम्बर आयेगा नहीं तो नहीं आयेगा। जो व्यक्ति निरन्तर पुरुषार्थशील होता है वह दिन का हो या रात का हो स्वप्न नहीं देखता। यदि स्वप्न देखता है तो उसे साकार भी करता है।

नींद की गोली खाकर सोने वाले कभी स्वप्न नहीं देखा करते। मोहमहामद पीयो अनादि-- ऐसे व्यक्ति के स्वप्न साकार नहीं होंगे। भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि स्वस्थ व्यक्ति के सपने साकार हो जायें। आजके बच्चे स्वप्न भी नहीं देख पा रहे हैं। जो देखते हैं उन्हें साकार करने हेतु पुरुषार्थशील बनें, इसी सद्भावना के साथ!

अहिंसा परमो धर्म की जय। बुँ

# अनुक्रमणिका


| क्र.सं. | दिनांक | विषय | स्थान | पृष्ठ क्र. |
|---|---|---|---|---|
| 1. | 04/03/2019 | त्याग एवं ग्रहण कितना | बीना बारहा जी | 3 |
| 2 | 05/03/2019 | भरके मन के – कभी न भरें | | 8 |
| 3. | 06/03/2019 | मत छोड़ो शुभ क्रिया को | | 10 |
| 4. | 07/03/2019 | महत्त्व जानो नारंगी के छिलके | | 14 |
| 5. | 09/03/2019 | भगवान की आहार–चर्या प्रवचनांश | | 17 |
| 6. | 10/03/2019 | मोक्ष कल्याणक प्रवचनांश | | 19 |
| 7. | 11/03/2019 | प्रदर्शन नहीं दर्शन है ये | | 22 |
| 8. | 12/03/2019 | आओ करें आत्म पुरुषार्थ | | 24 |
| 9. | 13/03/2019 | पंचसूना बचायें पांच जहर से | | 28 |
| 10. | 14/03/2019 | महत्त्व अचल सम्पदा का | अनंतपुरा | 32 |
| 11. | 15/03/2019 | पुण्यशाली को मिले – भली वस्तु का योग | मोहली | 34 |
| 12. | 16/03/2019 | अहा जिन्दगी | झलोन | 36 |
| 13. | 17/03/2019 | साथ ले जाने का फार्मूला | तेन्दूखेड़ा | 40 |
| 14. | 18/03/2019 | असली ट्रस्टी बनो | पाटन | 42 |
| 15. | 19/03/2019 | भक्ति करो कुछ ऐसी | शहपुरा (भिटोनी) | 44 |
| 16. | 20/03/2019 | स्कूल नहीं विद्यालय खोलो | सहजपुर | 46 |
| 17. | 21/03/2019 | लेमिनेशन नहीं पक्का रंग चढ़ाओ | जबलपुर, मढ़िया जी | 49 |
| 18. | 22/03/2019 | क्रोध को कैसे शांत करें? | दयोदय प्रतिभास्थली | 53 |
| 19. | 23/03/2019 | भावना हो – चाहना नहीं | | 54 |
| 20. | 24/03/2019 | सत्य तो यही है | | 57 |
| 21. | 25/03/2019 | श्वासों का क्या भरोसा | | 58 |
| 22. | 25/03/2019 | एकल परिवार को दिया संबोधन (मध्यान्ह) | | 63 |
| 23. | 26/03/2019 | बोलो लेकिन मात्रा कितनी? | | 64 |
| 24. | 27/03/2019 | अभ्यास का प्रतिफल | | 68 |
| 25. | 28/03/2019 | आओ समझें अनिवार्य प्रश्न | | 72 |
| 26. | 29/03/2019 | नाव देखो – चुनाव नहीं | | 76 |

| क्र.सं. | दिनांक | विषय | स्थान | पृष्ठ क्र. |
|---|---|---|---|---|
| 27. | 30/03/2019 | भावों का कमाल | दयोदय प्रतिभास्थली | 80 |
| 28. | 31/03/2019 | चन्द्रमा नहीं सूर्य बनूँ | | 84 |
| 29. | 01/04/2019 | निद्रा अनिवार्य नहीं आवश्यक | | 86 |
| 30. | 02/04/2019 | बात जमाने की | | 91 |
| 31. | 03/04/2019 | आरोग्य रक्षा के सूत्र | | 95 |
| 32. | 04/04/2019 | आँखे बोलती हैं | | 100 |
| 33. | 05/04/2019 | उलटी को सुलटी कैसे करें? | | 104 |
| 34. | 06/04/2019 | कैसे करें स्वयं पर नियन्त्रण | | 108 |
| 35. | 07/04/2019 | ट्युशन (अतिरिक्त प्रशिक्षण) क्यों? | | 112 |
| 36. | 08/04/2019 | आओ मांजे सम्यग्दर्शन को | | 117 |
| 37. | 09/04/2019 | अक्ल बड़ी या ज्ञान | | 120 |
| 38. | 10/04/2019 | कर्मों को पिघलाने का सूत्र | | 123 |
| 39. | 11/04/2019 | सार-सार को गहि रहे | | 127 |
| 40. | 12/04/2019 | मारक बना तारक | | 132 |
| 41. | 13/04/2019 | सुगन्धी भावों की | | 136 |
| 42. | 14/04/2019 | जल की तरह है आत्मा | | 142 |
| 43. | 15/04/2019 | आओ करें धर्म बैंक से अनुबन्ध | | 146 |
| 44. | 16/04/2019 | प्रवचनांश (विषय - हिन्दी भाषा) | | 150 |
| 45. | 17/04/2019 | प्रवचनांश (विषय - करुणा भाव) | | 154 |
| 46. | 18/04/2019 | महावीर को भी मानें | | 158 |
| 47. | 19/04/2019 | ध्वजा का महत्व सक्रियता से | | 163 |
| 48. | 20/04/2019 | मेरी जड़े अभी हरी हैं | | 167 |
| 49. | 21/04/2019 | आयुर्वेद महाविद्यालय का मंगलाचरण | | 172 |
| 50. | 21/04/2019 | रविवारीय प्रवचनांश (मध्याह्न) | | 173 |
| 51. | 22/04/2019 | मरण का भी मरण कैसे हो? | | 176 |
| 52. | 23/04/2019 | संयम कहाँ, संयमासंयम में? | | 180 |

| क्र.सं. | दिनांक | विषय | स्थान | पृष्ठ क्र. |
|---|---|---|---|---|
| 53. | 24/04/2019 | संसार बढ़ाने के तीन कारण | दयोदय प्रतिभास्थली | 183 |
| 54. | 25/04/2019 | ड़ाकिया बनो | | 187 |
| 55. | 26/04/2019 | हमेशा तैयार रहो (पुष्पदंतसागर जी की समाधि पर) | | 192 |
| 56. | 27/04/2019 | कैसे धोयें कर्मों को | | 196 |
| 57. | 28/04/2019 | पूर्णायु चिकित्साल्य दिलायेगा पूर्णायु | | 200 |
| 58. | 29/04/2019 | लापता का पता लगाने के सूत्र | | 203 |
| 59. | 30/04/2019 | राग की लाली से बचो | | 208 |
| 60. | 01/05/2019 | साधना का सूरज | | 212 |
| 61. | 02/05/2019 | नम्बर लेने के सूत्र | | 214 |
| 62. | 03/05/2019 | शुभ-लाभ है सरस्वती-लक्ष्मी का प्रतीक | | 217 |
| 63. | 04/05/2019 | कहीं बोध न बन जाये बोझ | | 220 |
| 64. | 05/05/2019 | आओ सुरक्षित करें धरोहर को | | 226 |
| 65. | 06/05/2019 | शक्ल से नहीं अक्ल से काम करो | | 230 |
| 66. | 07/05/2019 | दान का संकल्प - तपस्या का फल | | 234 |
| 67. | 08/05/2019 | डूबो मत लगाओ डुबकी | | 237 |
| 68. | 09/05/2019 | कल्याणक नहीं - कल्याण हो | | 240 |
| 69. | 10/05/2019 | जहाँ देखूँ - वहाँ है तू | | 243 |
| 70. | 11/05/2019 | कृत्रिमता का हाल | | 245 |
| 71. | 12/05/2019 | और मुक्ता बना दिया | | 248 |
| 72. | 13/05/2019 | शुद्धोपयोग रूप मलाई की पट्टी | | 252 |
| 73. | 14/05/2019 | असंयम का ड़र बचाता संयम को | | 254 |
| 74. | 15/05/2019 | कैसे बढायें सामूहिक पुण्य | | 257 |
| 75. | 16/05/2019 | परिणमन हो कपूर की भांति | | 262 |
| 76. | 17/05/2019 | औषध वही जो करे प्राणों का संशोधन | | 266 |
| 77. | 18/05/2019 | परिपक्वता को बचाओ | | 270 |
| 78. | 19/05/2019 | ये कैसा भेद विज्ञान | | 273 |
| 79. | 20/05/2019 | येन केन प्रकारेण से बचो | | 276 |

| क्र.सं. | दिनांक | विषय | स्थान | पृष्ठ क्र. |
|---|---|---|---|---|
| 80. | 21/05/2019 | नमक की डली | | 279 |
| 81. | 22/05/2019 | कैसे करें पहचान असली हीरे की ? | | 283 |
| 82. | 23/05/2019 | कमाई का साधन | | 288 |
| 83. | 24/05/2019 | उद्यम से मिटे जगत फेरा | | 289 |
| 84. | 25/05/2019 | टिकिट संभालकर रखना | | 293 |
| 85. | 26/05/2019 | पार होने का मार्ग | | 297 |
| 86. | 27/05/2019 | ऋण चुकाऊँ जिन्होंने मुझे संभाला | | 301 |
| 87. | 28/05/2019 | मेरा पर से क्या नाता है? | | 305 |
| 88. | 29/05/2019 | शक्कर का चक्कर | | 308 |
| 89. | 30/05/2019 | पूर्णायु को अल्पायु करता अजीर्ण | | 312 |
| 90. | 31/05/2019 | स्वयंभु बनने का प्रयास | | 316 |